

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180704

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.092/RAM
Accession No. H3000

Author रामनाथ 'सुमन' ।

Title मीर । 1959

This book should be returned on or before the date
last marked below.

मीर

[जीवन : समीक्षा : व्याख्या और काव्य]

श्री रामनाथ 'सुमन'



भारतीय ज्ञानपीठ • काशी

अर्बोदय साहित्य मंदिर,
कोसी, (बसस्टैंड,) हंटरबाबा ब.

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन

प्रकाशक

मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

प्रथम संस्करण

१९५९

मूल्य छह रुपये

मुद्रक

बाबूलाल जैन फागुल्ल
सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी

काव्य एवं रसके
समाराधकोंके चरणोंमें
निवेदित



‘सुमन’

विषय-तालिका

१. विषय-तालिका				५
२. मेरी बात				११
३. कृतज्ञताज्ञापन				१३

जीवन-भाग

१. मीर : जीवन-प्रवाह				१६ से ७०

[मीरकी वंश-परम्परा; पिताका नाम; पिता और उनके द्वारा प्रदत्त संस्कार; प्रेमके पागल अमानुल्ला; चचा एवं पिताका निधन; चचाके बाद पिता भी; पिताके निधनके बाद; उनकी उम्रके सम्बन्धमें मतभेद; क्या यह असम्भव है ? दिल्लीको प्रयाण; दिल्लीको दूसरी यात्रा; परस्पर-विरोधी विवरण; अन्य गुरुजन; परिवर्तनोकी आँधीके बीच चलते हुए; लखनऊ-आगमन; लखनऊ-निवास; दिल्लीका जादू इनपरसे कभी न उतरा; इस आकर्षणका कारण; जन्म-मृत्यु; अन्तिम दिन]

२. मीर : चरित्र-पक्ष				७१ से ६२

[बचपनका वातावरण; पिता और चचासे प्राप्त पूँजी; मुसीबतोंकी आँधीमें; बेखुदी देरोहरमसे ऊपर; अहंकी प्रतिक्रियाएँ; अहंकार एवं स्वाभिमान; फारसी-

वारसी कह लिया कीजिए; कविता दिल जलानेका काम है; अज्जरनामा; पौने तीन शायर; “मज्जमून गुलामकी जेबमें नहीं हैं” ; “मुतवज्ज: हों तो पढ़ें !” ; मुझे कब तहम्मूल है ? ; “देखो, तुम्हारे आक्रा क्या फ़र्माते हैं ?” ; यह अकड़ ! ; “मैं भी बादशाह हूँ !” ; सखुनको जाया करनेसे क्या हासिल ? दरियामें डाल दो; “देखकर चल राह बेखबर—”; मानसके अतलमें; काव्य केवल चमत्कार नहीं; विरहका रस; ज़िन्दगी और बन्दगी साथ-साथ है]

३. मीरके जीवन एवं काव्यकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ६३ से १२४

[डाँवाडोल उत्तर भारत; लुटेरोंका आकर्षण केन्द्र दिल्ली; नादिरशाही लूट; मघुपात्रोंमें डूबा मुहम्मद-शाह; ईरानी-तू रानी संघर्ष; अब्दालीको निमंत्रण; अहमदशाहका शासन; युगकी मकड़ीके जाले; आस्तीनका साँप; जाटोंकी लूट; जाट-मराठा संघर्ष; बादशाहकी बेबसी; बूढ़ेकी विलासिता; दिल्लीकी लाचारी; भाऊकी तुनुक-मिजाजी; बार-बार लुटी दिल्ली; सूरजमलका अन्त; गुलामकादिरके अकल्पनीय अत्याचार; मीरके काव्य-की विशेषता]

काव्य-समीक्षा-भाग

४. मीर-काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमि १२७ से १४६

[उसमें समष्टिकी संवेदनाएँ झाँकती हैं; अबोला यौवन जब बोल उठा; सनातन विधवा-सी दिल्ली-

की तड़प; काव्यके लिए शिष्ट मनोभूमि अनिवार्य है; प्यास है पर गिरावट नहीं; इस्ककी व्याप्ति; आकाशका प्रेम जमीनके चाँदपर; धार्मिक क्षुद्रता-ओसे परे; जौककी आप-बीती; यह संलग्नता !; प्रेमकी वेदना ही उनका संबल है; साधना एवं सिद्धि; मानवकी श्रेष्ठताके कवि; विशेषताएँ; जीवनका महत् दृश्य]

५. मीरकाव्य : कलापक्ष १४७ से १८०

[प्रसादगुण; कहनेका ढंग; विलक्षणता; व्यथातुरता; चित्रकारी; अनुभूतियोंका साधारणीकरण; शिष्टता और मानवता; शब्द और अर्थका सन्तुलन; गागरमें सागर; रचनाकी क्रमबद्धता; मुहाविरोंका प्रयोग; व्यंग्य; उपमाएँ और रूपक; संगीतात्मकता; फ़ारसी उक्तियोंका उपयोग; भारतीय वातावरण और देशज शब्दोंका प्रयोग; काव्य-दृष्टि; तसव्वुफ़का रंग; तत्त्वज्ञान और जीवन-दृष्टि; विविध विशेषताएँ]

६. मीर : काव्यके सिद्धान्त एवं विषय १८१ से १८७

[काव्य-रचना शिष्ट एवं संस्कारी व्यक्तियोंका कार्य है; बौद्धिक योग्यताकी आवश्यकता; भाषा; बल-क्षय; फ़ारसी तरकीबोंकी सीमा; ऐहामके प्रति अरुचि; घृणाकी भावनाका त्याग; मुहाविरोंका उचित प्रयोग; भावार्द्रता; गुलो-बुलबुलकी सीमा तोड़ो; काव्य-विषय]

७. मीर काव्य : कुछ विशेषताएँ १८८ से २१८

[भाषाकी जादूगरी; भावानुभूतिकी गहराइयोंसे

उठनेवाली आवाज़; युग वेदना और आत्मवेदनाका मिलन; प्रेमकी सौ-सौ भंगिमाओंकी चित्रकारी; दिलका यह दर्द; यह क्या बात है मीरजी ?; जवाब देते हैं; कलेजा थाम लेता हूँ; यह दर्द जो समझानेसे बढ़ता है; मिलनमें वाणीका मौन; बयानकी शोखी और रूपके चित्र; मीरका सौन्दर्य-वर्णन; ये आँखें या वह दिल; सुबह करते हैं रात करते हैं; शरीर-यष्टिका सौन्दर्य; आँख और ओठ; मुखकी बनावट; कपोल; बाल; कानके मोती; चाल; बिखरे हुए मोती; आँखें क्यों चुराते हैं ?; कब देखते हो मेरी ओर; ज़रा बैठो, हम भी चलते हैं; यह दर्द ज़िन्दगीको उभारता है]

८. मीर : जीवन और काव्य—ज्ञातव्य बातें २१६ से २४३

[मीर काव्यकी संक्षिप्त समीक्षा; अन्य कवियोंसे तुलना (मीर और सौदा; मीर और खाजा मीर-दर्द; मीर और अनीस; मीर, जुरअत और सौदा); मीरके कवि मित्र; मीरके शिष्य; मीरके कुछ विरोधी; मीरकालिक काव्य-गोष्ठियाँ; मीर द्वारा किये गये संशोधन]

९. मीरकी रचनाएँ २४४ से २५६

[१. पद्य-रचनाएँ : (क) ग़ज़ल, (ख) क़सीदा, (ग) मस्नवी—शोले शौक़, दरियाए इश्क़—(घ) रुबाइयाँ; (च) मर्सिये, (छ) वासोस्त, (ज) फ़ारसी काव्य ।

२. गद्य रचनाएँ : नकातुश्शुअरा; फ़ैजे मीर; जिक्रे-मीर, दरियाए इश्क़]

व्याख्या-भाग

१०.	कुछ शेर : व्याख्या-सहित		२६१ से ३०३

काव्य-भाग

११.	गजले		३०६-३७७
१२.	विविध काव्य		३७६-३९५

उपसंहार-भाग

१३.	उर्दू पिंगलकी कुछ बातें		३९६-४०२
१४.	उर्दू काव्यमें जानेवाले व्यक्ति	...	४०३-४०४
१५.	काव्यके महत्त्वपूर्ण शब्द-प्रतीक		४०५-४०६
१६.	मीर काव्यके कुछ विशिष्ट शब्द		४०७-४१०



मेरी बात :

आजसे ३३ वर्ष पूर्व मैंने हिन्दी पाठकोंको उर्दू काव्यका परिचय देनेका निश्चय किया था। तब हिन्दीमें उर्दू काव्यकी आवभगत न थी, जैसी आज है। 'मीर', और 'जिगर' (जो उन दिनों उठ रहे थे) पर दो पुस्तकें लिखीं। वे छपीं। उनका आदर हुआ। फिर राजनीतिके झंझा-बातसे मेरा जीवन अस्थिर हो गया। इस प्रान्तसे उस प्रान्त, उस प्रान्तसे इस प्रान्त, कभी यहाँ कभी वहाँ, कभी जेल कभी बाहर फिरता रहा। वह निश्चय दब गया। वह क्रम टूट गया, यद्यपि अध्ययन—विशेष कवियोंका—चलता रहा।

और आज तक टूटा रहा। इधर उर्दू कवियोंपर, उर्दू शायरीपर कई किताबें देखनेमें आईं। पर कोई ऐसा ग्रन्थ न देखा जिसे पढ़कर एक विशेष कवि या कालका सम्पूर्ण वैभव हमारे सामने आ जाय, जिसे पढ़कर उस विषयपर उर्दूमें पढ़नेको न रह जाय, जिसमें अबतकके शोधकार्यका सम्पूर्ण सार आ गया हो; जिसमें कविकी मर्मभावनामें पैठकर उसके हृदयको, उसकी भावराशिको हमारे हृदयसे जोड़ दिया गया हो, सम्बद्ध कर दिया गया हो। कमसे कम मेरी प्यास नहीं बुझी। मैं प्यासा ही रहा। स्वभावतः मैं समझता हूँ कि और भी लोग, मेरी तरह, प्यासे होंगे।

मेरे एक पुराने मित्र मिल गये। यूँही बातें चल पड़ीं। उन्होंने मेरे उर्दू कवियों-सम्बन्धी उन दो पुरानी पुस्तकोंकी चर्चा की और यह भी बताया कि स्व० ओड़छा नरेश उनपर मुग्ध थे और सदा अपने शयन-कक्षमें तकियेके नीचे रखते। उन्होंने कहा कि महाराजने कई बार उनका

ज़िक्र किया; कहा कि यह है जो कविका कलेजा कागज़पर निकालकर रख देता है। उससे मिलाओ, मैं कहूँगा कि ऐसा ही कुछ और लिखे।

इसमें प्रकारान्तरसे मेरी प्रशंसा है पर मैंने अपनी प्रशंसाकी दृष्टिसे इसे नहीं लिखा। प्रसंगवश लिखा है। इसलिए लिखा है कि महाराज जैसे और भी हैं जो कविके अन्तरमें पैठनेवाली कलमको देखने-पानेके अभिलाषी हैं। इस चर्चसे मेरा निश्चय दृढ़ हो गया। ३३ वर्ष पूर्व 'मीर' पर जो कुछ लिखा था वह इस विशेषताके साथ भी अधूरा है। इस बीच उर्दूमें उनपर काफ़ी काम भी हुआ है। इसलिए मैं सबसे पहले यह 'मीर' हिन्दी जगत्में रख रहा हूँ। मीर उर्दू शायरीके खुदा कहे गये हैं। उर्दू गज़लके प्राचीन कवियोंमें वह बेजोड़ हैं। कोई उनतक नहीं पहुँचा। ग़ालिब, जौक़, सौदा सब स्वीकार करते हैं। इसलिए पहिले उन्हें ही लिया। इसमें उनके सम्बन्धमें अद्यतन शोधका तत्त्व भी है और वह सब भी है जिसपर महाराज मुग्ध थे।

इसके बाद मेरा विचार 'ग़ालिब' पर लिखनेका है जिसका अध्ययन मैं वर्षोंसे करता रहा हूँ, और जिनपर कई पुस्तकें निकलनेके बाद भी मेरे निश्चयके चरण दृढ़ होते गये हैं; मैं अब भी उसकी उतनी ही आवश्यकता अनुभव करता हूँ। दिल एवं दिमाग़की मजबूरियाँ हैं।

पुस्तक लिखनेमें मैंने अनेक ग्रन्थोंसे सहायता ली है। इनका तथा इनके प्रणेताओंका ज़िक्र अन्यत्र किया गया है। मैं उनका कृतज्ञ हूँ। डा० फ़ारूकी, मौलवी 'आसी' तथा डा० अब्दुलहक़का विशेष आभार मानता हूँ। उर्दूमें डा० फ़ारूकीका शोध ग्रन्थ, अपनी कुछ खामियोंके साथ भी, काफ़ी प्रामाणिक है और मैंने उससे पर्याप्त प्रेरणा एवं सहायता ली है। स्व० डा० रामबाबू सक्सेनाकी कृपासे मीरकी हस्तलिपिका चित्र दे सका हूँ।

और अगली मुलाक़ात तक बस।

लखनऊ }
३।९।५९ }

—श्री रामनाथ 'सुमन'

कृतशता-गापन

पुस्तक लिखनेमें निम्नलिखित ग्रन्थों एवं रचनाओंसे विशेष सहायता ली गयी है :—

१. कुल्लियाते 'मीर' : संपादक मौलवी अब्दुल बारी 'आसी' (नवलकिशोर प्रेस)
२. इन्तिखावे कलामे 'मीर' : संपादक मौलवी अब्दुलहक़ (अंजुमन तरक्किए उर्दू)
३. 'आबेहयात' : लेखक मौ० मुहम्मद हुसेन आज़ाद (लाहौर-की अष्टम आवृत्ति)
४. मीर तक़ी 'मीर' : लेखक डा० ख्वाजा अहमद फ़ारूकी (अंजुमन त० उर्दू)
५. कविरत्न 'मीर' : लेखक श्री रामनाथ 'सुमन' (पुस्तक भंडार, लहेरिया सराय)
६. तज़क़िरा शुबराय उर्दू : लेखक मीरहसन देहलवी (अंजुमन त० उर्दू)
७. तज़क़िरा रेस्तागोयान : लेखक फतेह अली (अंजुमन त० उर्दू)
८. नकातुशुबरा : संपादक मौलवी अब्दुलहक़ (अंजुमन त० उर्दू)
९. ज़िक़रे मीर : संपादक मौलवी अब्दुल हक़ (अंजुमन त० उर्दू)
१०. उर्दू ग़ज़ल : लेखक डाक्टर यूसुफ़ हुसेन (मक़तबा ज़ामिया)

निम्नलिखित पुस्तकों एवं रचनाओंसे भी सहायता ली गयी है :—

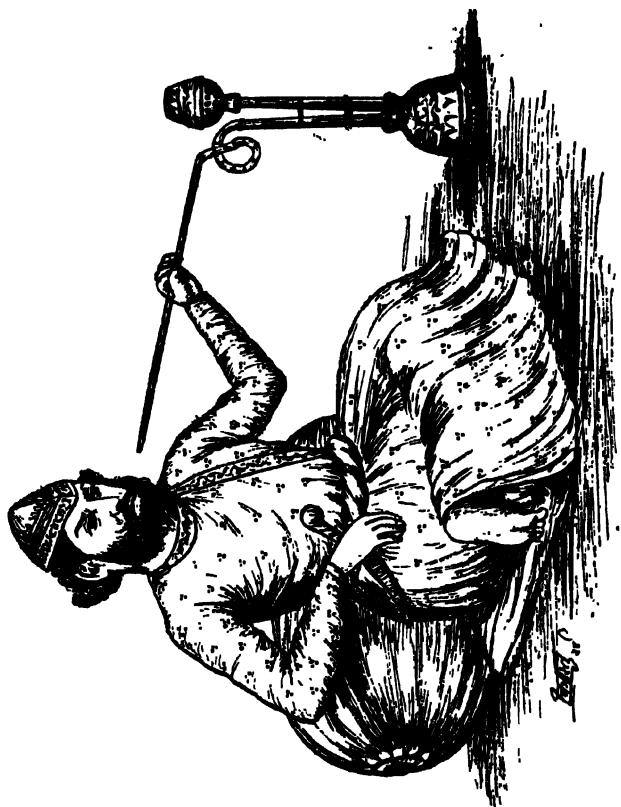
११. उर्दूकी इश्क़िया शायरी : लेखक 'फिराक़' गोरखपुरी (इलाहाबाद)

१२. तज्जकिरा गुलशने बेखार : लेखक नवाब मुस्तफा खाँ 'शेफ़ता'
(नवलकिशोर प्रेस)
१३. तज्जकिरा शाअरात उर्दू (क़ौमी क़ुतुबख़ाना, बरेली)
१४. तारीख़ फ़रिश्ता (न० किशोर प्रेस)
१५. तारीख़ इब्रत अफ़ज़ा (मुरादाबाद)
१६. तारीख़ अवध (न० किशोर प्रेस)
१७. इनफ़्लुएंसा आफ़ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर : लेखक डा०
ताराचन्द ।
१८. दरियाए लताफ़त : लेखक इंशा (अंजु० त० उर्दू)
१९. फ़ैज़े 'मीर' : सम्पा० सै० मसऊद हसन रिजवी
२०. मज्जा 'मीर' : लेखक नवाब जाफ़रअली (किताबी दुनिया,
देहली)
२१. मरासी मीर : संपा० सैयद मसीहुज्जमाँ (सरफ़राज क़ौमी
प्रेस, लखनऊ)
२२. मस्नवियाने मीर : संपा० सर शाह सुलेमान (निज़ामी प्रेस,
बदरू)

इसके अतिरिक्त अनेक पत्र-पत्रिकाओं तथा उर्दू, हिन्दी, संस्कृत, फ़ारसी कवियोंकी रचनाओंसे भी सहायता ली गयी है । डा० फ़ारूक़ीकी पुस्तक काफ़ी अच्छी है; उससे मैंने पर्याप्त सहायता ली है । उनका कृतज्ञ हूँ, यद्यपि पुस्तकमें सन् संवत्की अनेक भूलें रह गयी हैं । लेखकों एवं सम्पादकों सबके प्रति हार्दिक कृतज्ञता-ज्ञापन ।

—श्री रामनाथ 'सुमन'

मौर



जीवन-भाग

‘मीर’ : जीवन-प्रवाह



इनका पूरा नाम था ‘मीर तक़ी’; ‘मीर’ इनका तख़ल्लुस (उपनाम) था। इनके पूर्वजों एवं पिताके विषयमें जो बातें इधर-उधर मिलती हैं,

मीरकी उनमें परस्पर अन्तर हैं। परन्तु हमारे सौभाग्यसे
वंश-परम्परा मीर-द्वारा फ़ारसी गद्यमें लिखित आत्मचरित
 ‘ज़िक़्ते मीर’^१ प्राप्त है। उनकी एक दूसरी फ़ारसी

पुस्तक ‘नकातुश्शुअरा’ भी है जिसमें बहुत-सी बातें मिल जाती हैं। ‘ज़िक़्ते मीर’ के अनुसार इनके पूर्वज हेजाज़के रहनेवाले थे। ज़मानेकी कठिनाइयोंसे तंग आकर वे लोग, अपने क़बीलेके साथ, भारतके दक्षिण प्रदेशमें आये। वहाँसे वे अहमदाबाद (गुजरात) पहुँचे। कुछ वहीं रह गये और कुछ जीविकाकी खोजमें आगे बढ़े और अकबराबाद (आगरा) आये तथा वहीं बस गये। इनके परदादा भी इसी प्रकार आगरा आये। पर वहाँ की जलवायु उनके अनुकूल न हुई; बीमार पड़ गये और बीमारीमें ही इस संसारसे बिदा हो गये। वह एक पुत्र छोड़ गये थे। यही मीरके दादा थे। बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ उठाकर दादाने अकबराबाद (आगरा) की फ़ौजदारी प्राप्त की। अब आरामसे कटने लगी। पर लगभग ५० वर्ष की आयुमें वह भी बीमार पड़े। पूर्णतः नीरोग होनेके पूर्व ही उन्हें म्वालियर जाना पड़ा और वहीं, कुछ दिनों बाद, उन्होंने देह त्याग दी। दादाका नाम रशीद था।

दादाके दो बेटे थे। बड़े विक्षिप्त थे और भरी जवानीमें मर गये। छोटेने दो शादियाँ कीं जिनसे कई सन्तानें हुई पर बादमें उन्होंने फ़क़ीरी ले

१. ‘ज़िक़्ते मीर’—अब यह पुस्तक ‘अंजुमन तरक्किए उर्दू’ द्वारा प्रकाशित कर दी गयी है।

ली और संसारमें रहकर भी संसारका त्याग कर दिया । यही 'मीर' के पिता थे ।

समकालिक एवं परवर्ती लेखकोंमें 'मीर' के पिताके नामको लेकर बड़ा मतभेद है । कुछने उनका नाम मीर अब्दुल्ला^१, कुछने मोहम्मद मोतक्की,^२ और कुछने मीर मोहम्मदअली^३ माना पिताका नाम क्या था ? है । पर सब बातों पर विचार करनेसे अन्तिम नाम मीर मोहम्मदअली ही ठीक जान पड़ता है । सन्तोषी एवं साधु स्वभाव होनेके कारण ही लोग उन्हें 'मोतक्की' कहने लगे थे ।

मीरके पिता साधु पुरुष थे । उनकी दो शादियाँ हुई थीं । पहली पत्नी फारसी भाषाके लब्धप्रतिष्ठ लेखक और प्रकाण्ड पण्डित सिराजुद्दीन

पिता और
उनके द्वारा प्रदत्त
संस्कार

अलीखाँ 'आरजू' की बहिन थीं; दूसरीके नाम-धामका पता नहीं चलता पर मीर दूसरी पत्नी की सन्तान थे । इस प्रकार 'आरजू' इनके मामा लगते थे । पिता ईश्वरके ध्यानमें सदा लीन रहते थे । वह प्रेमी और भक्त थे । उन्होंने शाह कलीमुल्ला अकबराबादी

१. सआदत खाँ 'नासिर'ने अपने ग्रंथ 'तजकिरा खुशमार्का जेबा' में, हकीम अब्दुल हईने 'साहिबे गुलेराना' में, मुहम्मद हुसेन आज्ञादने 'आबे-हयात' में और ब्लूमहार्टने अपनी इण्डिया आफिसकी सूचीमें मीर अब्दुल्ला नाम ही दिया है । १९२६ में जब मेरी पुस्तक कविरत्न 'मीर' प्रकाशित हुई ती मैंने भी यही नाम दिया था । श्री अब्दुलवारी 'आसी' का कहना है कि अली मोतक्की गुरु-प्रदत्त उपनाम था ।

२. बीलने अपनी 'ओरियंटल बायाग्राफिकल डिक्शनरी'में तथा डा० अब्दुल हकने 'मुकद्दमा जिक्रे मीर' में यही नाम माना है ।

३. 'जिक्रे मीर' (पृ० ६२) में मीर बासितके पूछने पर कि किसके लड़के हो मीर स्वयं जवाब देते हैं—“अज मीर मोहम्मद अली अस्त ।”

(मृत्यु० १६९७ ई०) से ज्ञान प्राप्त किया था । उन्हींके पथ-दर्शनमें बड़ी-बड़ी साधनाएँ कीं । मीरने लिखा है कि वह सदा यादे इलाही^१में मसरूफ^२ रहते थे । जब उनकी तबीयत शगुफ्ता^३ होती तो फरमाते कि “बेटा ! इश्क^४ इस्तियार^५ करो कि इश्क ही इस कारखाना^६ पर मुसल्लत^७ है । अगर इश्क न होता तो यह तमाम निजाम^८ दरहम-बरहम^९ हो जाता । बेइश्कके ज़िन्दगानी वबाल है और इश्कमें दिल खोना असले कमाल^{१०} है । इश्क ही बनाता है और इश्क ही बिगाड़ता है ।”

पिता जब कभी प्रेम-विह्वल या भावाविष्ट होते तो कहते कि “आलम^{११} में जो कुछ है इश्कका ज़हूर है । आग सोजे इश्क^{१२} है, पानी रफ्तारे-इश्क^{१३} है, खाक करारे-इश्क^{१४} है, हवा इज़तरारे-इश्क^{१५} है ! मौत इश्ककी मगती है, हयात इश्ककी होशयारी है, रात इश्कका ख्वाब^{१६} है, दिन इश्ककी बेदारी^{१७} है । तवक्का^{१८} कुर्वे इश्क^{१९} है, गुनाह बआदे इश्क^{२०} है; बिहिस्त^{२१} इश्कका शौक^{२२} है, ...और मुकामे इश्क तो अबूदियत, असरफियत, जाहदियत, सदीक्रियत, खुलूसियत, मुस्ताक्रियत और हबीबियत^{२३} से बुलन्द^{२४} और बरतर^{२५} है ।”

बादके दिनोंमें तो इनकी हालत सन्त या सूफ़ीकी-सी हो गयी थी । ज़मीनपर पड़े-पड़े न जाने क्या सोचते । “दिनमें खोये-खोयेसे रहते और रातको उपासनामें तल्लीन हो जाते ।”^{२६} उपासनाकी निद्रा जब टूटती, कुछ

१. भगवत्-स्मरण, २. तल्लीन, ३. प्रफुल्ल, ४. प्रेम, ५. ग्रहण, ६. जगत्से अभिप्राय है, ७. आच्छादित, ८. व्यवस्था, ९. छिन्न-भिन्न, १०. साधनातत्त्व, ११. संसार, १२. प्रेमकी जलन, १३. प्रेमकी गति, १४. प्रेमकी स्थिरता, १५. प्रेमकी बेचैनी, १६. स्वप्न, १७. जागरण, १८. निस्पृहता, सन्तोष, १९. प्रेमका सानिध्य, २०. प्रेमका उल्लंघन, २१. स्वर्ग, २२. प्रेमकी आकांक्षा, २३. ईश्वर-साधनाकी विभिन्न अवस्थाएँ, २४. उच्च, २५. श्रेष्ठ, २६. “रोज़ हैरांकार, शब ज़िन्दादार, अक्सर रूये नियाज़ बर खाक ।”

होशमें आते तो फर्माते—“बेटा ! आलम^१ की हकीकत^२ एक हंगामासे ज्यादा नहीं है । इससे दिल न लगाना । इसके-इलाही^३ इस्तियार करो और खुदासे लौ लगाओ । आखिरत^४ की फिक्र लाजिम^५ है । यह दुनिया गुजरनेवाली है और जिन्दगी वहम^६ है । वहमके पीछे दौड़ना अबस^७ है । चलचलाव लगा है । इसलिए जादेराह^८ की फिक्र करो वरना इस मंजिल तक पहुँचना मुमकिन नहीं । उससे रुजूअ^९ करो आलम जिसका आइना है और इस्तियार^{१०} उसको सौंपो जिसको हम अपनेमें ढूँढ़ते हैं……।”

‘मीर’ ने लिखा है कि मेरे पिता कामिल फ़कीर थे और बड़ी दर्दनाक तबीयत रखते थे । जब मुझे गले लगाते तो शफ़क्कत^{११} से कहते कि “ऐ सरमायए-जान^{१२} ! यह कैसी आग है जो तेरे दिलमें छुपी है, और यह कैसा सोज़^{१३} है जो तेरी जानके साथ लगा है ।” इस पर मैं हँस देता और वह रोने लगते ।……एक रोज़ नमाज़के बाद मेरी तरफ़ तबज्जुह फरमाई^{१४} और मुझे खेलता देख कर कहने लगे—“बेटा ! ज़माना सय्याल^{१५} है यानी बहुत कम फुर्सत । अपनी तबियत^{१६} से ग्राफ़िल^{१७} न रहो । रस्तेमें बहुत नशेबोफराज़^{१८} हैं, देख कर चलो ।……ऐसे फूलका बुलबुल बनो जो सदाबहार है…… फुर्सतको ग़नीमत समझो और अपने तई पहचाननेकी कोशिश करो ।”

पिताके चेहरे पर नूर बरसता था । मुख पर पवित्रताकी छाया थी । भीड़भाड़से दूर रहते थे । प्रियतमके ध्यानमें प्रायः डूबे रहते; प्रायः आँखें भीगीं, हाल बेहाल^{१९} । कभी-कभी तो फूट कर माशूकके लिए इस तरह रोते कि हिचकी बँध जाती ।

१. दुनिया, २. तत्व, सत्य, ३. प्रभु-प्रेम, ४. अन्तकाल, ५. आवश्यक, ६. भ्रम, माया, ७. निस्सार, निरर्थक, ८. मार्गका संबल, पाथेय, ९. प्रेम, आसक्ति, १०. प्रभुत्व, अधिकार, ११. कृपा, १२. प्राण-धन, १३. जलन, १४. ध्यान दिया, १५. प्रवहमान, परिवर्तनशील, १६. प्रशिक्षण, १७. असावधान, १८. नीच-ऊँच, १९. “मिज़गाँ नम, हाल दरहम”—ज़िके मीर पृष्ठ ९ ।

जो लोग भी उनके सम्पर्कमें आते, प्रभावित हुए बिना रह न सकते थे। उनके सम्बन्धमें अनेक घटनाएँ बताई जाती हैं। आगरा (अकबराबाद) में वह शहरसे बाहर ईदगाहके पास रहते थे। एक बारकी बात है कि घर में आये और खाना पकानेवाली बुढ़ियासे कहा कि कुछ खानेकी चीज़ घरमें हो तो लाओ। वह बोली कि घरमें तो कोई सामान नहीं है, बाज़ार जाती हूँ, वहाँसे सौदा-सुलुफ़ लाऊँ तो कुछ पकाऊँ। बुढ़िया कुछ आटा-दाल वगैरह लेकर पलटी तो उन्होंने खाना तैयार करनेके लिए जल्दी मचायी। बुढ़िया बिगड़ कर बोली कि साहब ! फ़क़ीर हो तो फ़क़ीरीके अन्दाज़ सीखो, सन्न करो; दरवेशी कोई बच्चोंका खेल नहीं है। बुढ़ियाका कहना तीरका काम कर गया। उससे तो कुछ न कहा लेकिन उठे, आँसुओंसे भीगा हुआ रूमाल उठाया और चलने लगे। बुढ़िया डर गयी, दौड़ कर उनसे लिपट गयी और पूछा—कहाँ चले, बैठो। उन्होंने जवाब दिया—कुछ हर्ज नहीं, तुम मेरे लिए खाना पकाओ, मैं ज़रा लाहौरमें एक दरवेशसे मिल आऊँ। अभी वापिस आता हूँ। बुढ़ियाने बहुत समझाया-बुझाया किन्तु वक्त हाथसे निकल चुका था; अब क्या हो सकता था ? विवश चुप बैठ रही। और यह है कि उसी धुनमें, चल खड़े हुए। एक बेचैनीकी हालत थी, एक नशा उन पर सवार था। न पासमें कोई सामान, न मार्गके लिए कोई खाद्य-सामग्री, न रुपया-पैसा। आखिर लाहौर पहुँचे। जिस दरवेशसे मिलनेकी उत्कण्ठा थी, उससे रावीके तट पर भेंट हुई। वहाँसे देहली लौटे और मीर क्रमरुद्दीनके पास ठहरे, पर उनके यहाँ चेला-चाटियोंकी भीड़ लगी रहती थी जो इनके स्वभावके प्रतिकूल थी। एक दिन आधी रातको चुपकेसे चल पड़े; लोग दूँढ़ते ही रह गये। दो-तीन दिनकी यात्राके बाद बयाना पहुँचे। यहाँ एक नवयुवक सय्यदज़ादे पर उनकी जादूभरी निगाहोंने ऐसा असर डाला कि वह भूता-विष्टकी भाँति बेहोश होकर गिर पड़ा। लोगोंने यह हालत देखी तो इनसे अनुनय-विनय की कि इसपर कृपा कीजिए। इन्हें भी कुछ रहम आ गया।

थोड़ा-सा पानी लिया, उसे अभिमन्त्रित किया। उसका कुछ अंश पिला दिया, कुछ मुँह पर छिड़का। युवक होशमें आकर उठ बैठा और घुटने टेक कर सामने बैठ गया और प्रार्थना की कि कुछ दिन गरीबखाने पर क़ायम फर्माइए। उन्होंने यह कह कर मंजूर कर लिया कि, ख़ैर पर मैं यात्रामें हूँ। लोगोंने कहा जिस समय आपकी जो आज्ञा होगी उस पर अमल किया जायगा। फिर कहा कि हमारा क्या, कभी किसीसे खुश हैं, कभी नाखुश। पर लोगोंके बहुत प्रार्थना करने पर उसके यहाँ गये।

संयोग उसी दिन उस युवककी शादी थी। लोगोंने इनसे भी शादीमें शामिल होनेकी प्रार्थना की। इन्होंने कहा—फ़क़ीरको इन झगड़ोंसे क्या मतलब? उस नवजवानसे कुछ बातें कीं। उधर बारात गयी, इधर यह वहाँसे चल पड़े और अकबराबाद (आगरा) आ पहुँचे। उधर बारात जब वापस आयी, दूल्हाको इनके चले जानेका हाल मालूम हुआ। न जाने क्या बात हुई कि दिल उचट गया, सुप्त ईश्वर-प्रेम जग पड़ा। परिणाम यह हुआ कि बेचारने घर पर पानी भी न पिया; नई-नवेली दूल्हनको छोड़-छाड़ उनकी तलाशमें निकल खड़ा हुआ; कई दिनों तक जंगलोंमें ख़ाक छानता फिरा; जो मिलता उसीसे फ़क़ीरका पता पूछता पर किसीको क्या मालूम कि किस फ़क़ीरको पूछ रहा है। कुछ पता न चला। एक दिन एक साधु पुरुष मिल गये। उन्होंने इसे त्रस्त देख दयाव्रं हो पूछा—किसे ढूँढ़ता है? उसने रङ्ग-रूप बता कर अस्त-व्यस्त भाषामें अपना प्रयोजन कह सुनाया। उन्होंने कहा—जा, सीधा अकबराबाद चला जा; अली मोतक्की वहीं हैं, ढूँढ़ ले। यह सुन कर गरीब पूछता-पाछता अकबराबाद आया और किसी तरह अपने गन्तव्य-स्थल पर पहुँच गया।* मीर मोहम्मद अली उर्फ़ मीर मोतक्कीने तसल्ली देकर वहीं ठहरा लिया। धीरे-धीरे वह उनका

* अब्दुल बारी 'आसी'; कुल्लियातमें मुक़द्दमा। पृ० १०
(न० कि० प्रेस)

ऐसा भक्त और प्रिय बन गया कि मीर मोहम्मद अली उसे अपना छोटा भाई मानने लगे। इस युवकका नाम सय्यद अमानुल्ला था। मोहम्मद अलीने उसे साधनाका मर्म बताया और धीरे-धीरे वह बहुत उच्च साधक बन गया।

उस समय मीर साहब बच्चे ही थे; सिर्फ ७ सालकी उम्र थी। पर पिताके संस्कारोंका तथा जो बुजुर्ग उनके पास आया करते थे उनकी बातोंका प्रभाव उन पर अन्दर ही अन्दर पड़ने लगा था। सय्यद अमानुल्लाके आने पर मीर साहब उनकी देख-रेखमें पढ़ने लगे। मीर, बापके बाद, उनकी सबसे ज्यादा इफ्तत करते थे। दोनोंके बीच दिली मोहब्बत थी। वह अमानुल्लाके साथ और भी बड़े लोगोंके पास जाते और उनकी बातें ध्यानसे सुना करते थे। तीन साल तक बराबर उनके पास पढ़ते रहे। जब १० सालके हुए अमानुल्लाकी अचानक मृत्यु हो गयी। उस छोटी अवस्थामें भी, यद्यपि इनकी शिक्षा पूर्ण नहीं हुई थी, बहुत कुछ समझने लगे थे। मीरके जीवन पर पिता एवं अमानुल्लाका अत्यधिक प्रभाव पड़ा। अमानुल्लाकी मृत्युकी चोट तो इनको ऐसी लगी कि अक्सर रोया करते। मीरने स्वयं ही लिखा है कि मैं उनकी मृत्युसे बहुत दुखी रहता था। मुझे दुखी देख कर मेरे पिता मुझे समझाया करते कि तुम बच्चे नहीं हो, दस सालके हो, दरवेशके लड़के हो। तुम्हें दिल मजबूत रखना चाहिए।^१

अमानुल्लाकी मृत्यु पर 'मीर' का दुखी होना स्वाभाविक था। पिता तो सदा ईश्वरोपासना एवं ध्यानमें मग्न रहते थे; मीर ज्यादातर अमानुल्ला के पास ही रहते थे। वह उन्हें चचा कहते थे। अमानुल्ला भी 'मीर' को

१. "कि ऐ पेसर मन तुरा बिसियार मी ख्वाहम। अम्मा अजीं ग्रम मी काहम कि मन नीज बर सरे राहम। गाह मी गुफ्त कि माह मन न तिल्फ़हाल :। अलहमदुल्ला कि दह साल :। च ब काहिश उप्रतदये आखिर दरवेशजादह, दिलकबीदार।"

बेटेकी तरह मानते थे, एक क्षणको अपनी आँखोंसे दूर नहीं करते थे और क्रुरान शरीफ़ पढ़ाते थे^१ ।

अमानुल्ला अपने गुरुकी प्रेमोपासनामें रँग गये । मानवरूपमें भी इन्हें ईश्वरका चमत्कार दिखायी देता था । 'मीर' ने इसकी प्रेमलता और

प्रेमके पागल

अमानुल्ला

विदग्धताके सम्बन्धमें एक विचित्र घटना लिखी

है । एक बारकी बात है कि अमानुल्ला जुमाके

बाज़ारकी सैरको गये । वहाँ उनकी दृष्टि एक

तैल-विक्रेता लड़के पर पड़ी । देखते ही दिल क़ाबूसे बाहर हो गया । उस

मुहब्बतके शममें ऐसी दुर्बलता हो गयी कि ज़मीन पर पाँव नहीं उतार

सकते थे । एक नौकरके कन्धे पर हाथ रखकर तब खड़े होते थे । जब

हालत खराब हो गयी तो गुरुकी सेवामें उपस्थित हुए कि कोई विधि निकालें ।

जब वहाँ पहुँचे तो हाल यह था कि आँखोंमें आँसू थे और लबों पर ठण्डी

आहें । सच्चे वियोगी की अवस्था थी । उपस्थित लोगोंने इनको देखते ही

जगह कर दी किन्तु गुरुने इन्हें अपने पास बैठाया और पूछा—“अरे भाई,

कहाँ थे ?” अमानुल्ला बोले—“जुमेकी बाज़ारकी सैरको गया था ।”

फ़रमाया—“क्या तुमने नहीं सुना—

‘दीदने तिफ़लां तहे बाज़ार रुसवा मी कुनद ।’

फिर फ़रमाया—“जाओ ! आठ दिन तक अपने वियोग-क़क्षसे बाहर

न निकलो और खबरदार, किसीके सामने यह दास्तान मत बयान करना ।

ईश्वर दयालु है, क्या आश्चर्य उसकी कृपा तुम्हारी दशा पर हो जाय ।”

१. मीर स्वयं लिखते हैं:—“मन दरां अय्याम हफ़्तसाला बूदम ।

बाख़ुदम मानूस सास्त व दर गरेबानम अन्दास्त यानी मा मादर व पेदरम

न गुज़ास्त व बफ़रजन्दी खबीशम बर्दास्त । लमहये अज़ खुद जुदायम

नमी कर्द व बनाज़ व नअम मी परबर्द । चुनांचे रोज़ो शब बा ओ मी

मांदम व क्रुरान शरीफ़ बख़िदमत ओ मी खांदम ।”

“अभी एक सप्ताह भी न बीता था कि वह चाँद स्वयं बेकरार हो गया और भागा हुआ आकर उस पवित्र स्थानपर उपस्थित हुआ जो शहर पनाह के बाहर ईदगाहके निकट स्थित था। मीर मोहम्मद अलीने एक सेवकको इशारा किया और कहा—“जाओ, बिरादर अजीज^१को बुला लाओ। उससे कहो कि तुम्हारा अभीष्ट तुम्हें ढूँढ़ता है।” अमानुल्ला नंगे पाँव भागे हुए आये और गुरुके चरणोंसे लिपट गये। उसके बाद उस किशोरको गले लगाया। उस लड़केने कहा—“मैंने बहुत तकलीफ उठाई, लेकिन खैर, खजाना पा लिया। अब इस आस्ताना^२ की जारूबकशो^३को अपनी सआदत^४ समझता हूँ।” धीरे-धीरे अपनी साधनाके कारण उसने मोहम्मदअलीके शिष्योंमें काफी प्रतिष्ठा प्राप्त की।

अपने ‘चचा’ सय्यद अमानुल्लाके बारेमें ‘मीर’ने अनेक घटनाएँ लिखी हैं। “उन्हें दरवेशों, फ़कीरों, सन्तोंसे मिलनेकी सदा उत्कण्ठा रहती थी। एक दिनकी बात है कि वह एहसानउल्ला नामके एक दरवेशके पास गये। मैं भी उनके साथ था। इस फ़कीरका यह क़ायदा था कि जब कोई दरवाजे पर आवाज देता तो वह कह देता कि अहसानउल्ला घरमें नहीं हैं। उस दिन भी उसने ऐसा ही किया। मेरे ‘चचा’ने कहा—‘अगर एहसानउल्ला नहीं हैं तो अमानउल्ला है।’ वह हँसा और उसने फौरन दरवाजे के किवाड़ खोल दिये। एक जवान शख्स^५ नज़र आया।....उसके चेहरे पर अन्तःज्योति फूट रही थी। थोड़ी देर बाद वह बुजुर्ग मेरी तरफ़ आकृष्ट हुए और पूछा यह लड़का किसका है। चचाने फरमाया—‘अली मोतक्कीका फ़र्जन्द^६ और मुझ गुनहगार^७ का परवर्दा^८ हैं’। दरवेशने फरमाया कि यह अभी बच्चा है। अगर इसकी बखूबी तबियत^९ हुई तो

१. प्रिय भ्राता, लघु भ्राता, २. (पवित्र) स्थान, ३. झाड़ू देना, सफ़ाई, ४. कल्याण, सौभाग्य, ५. व्यक्ति, ६. पुत्र, ७. पापी, ८. पालित, ९. प्रशिक्षण।

एक ही परबाज़^१में आसमानके उस पार पहुँच जायगा। उसके बाद दरवेशने रोटीका एक सूखा टुकड़ा पानीमें तर करके खानेको दिया। “उसमें मुझे वह लज्जत^२ मिली जो आज तक किसी खानेमें नहीं मिली और उसका जायका अब तक याद है।”

इसी प्रकार एक दिन मालूम हुआ कि एक दरवेश बायज़ीद नामके, सराय गीलानीके पास, जो बाढ़से तबाह और बर्बाद हो गयी थी, ठहरे हुए हैं। चचा तुरन्त मिलनेके लिए गये। देखा, एक जवान विदग्धहृदय, प्रशस्तात्मा, प्रेमविह्वल बड़ी बेकरारीकी हालतमें पड़ा है और प्रभुके चिन्तन एवं स्मरणमें लीन है। न खाने-पीनेकी सुध है, न पहनने-ओढ़नेकी। यह दरवेश मेरे चचासे मिलकर बहुत खुश हुए और ज़बाने मुबारकसे बहुत नसीहतें^३ कीं। इन नसीहतोंमेंसे एक नसीहत यह भी थी कि मन्दिर-मस्जिदकी क़ैदसे आज़ाद हो जाओ और अगर मक़सूद^४ तक पहुँचना चाहते हो तो किसी दिलमें राह पैदा करो।*

दूसरी भेंटके समय बायज़ीदका ध्यान ‘मीर’की ओर गया। उन्होंने अमानुल्लासे पूछा—यह कौन हैं? उन्होंने कहा—“अली मोतक्कीके बेटे हैं।” दरवेशने कहा—“हाँ, वह तो बड़े बुजुर्ग हैं—दानाय इसरार^५, खुर-शीदे आस्मा^६। यह इसी दरियाका^७ मोती है? हम फ़क़ीर तो उनके मुक्काबिलेपर^८ बिल्कुल तिहीदस्त^९ हैं।”

एक दिन मीर अमानुल्ला ‘मीर’को लेकर फिर बायज़ीदके पास पहुँचे।

★ “ज़िनहार कि दिलशिकनी कसे न कुनी व संग सितम बरशीशए न ज़नी।
दिल रा कि अर्श मी गोयन्द अमी राह अस्त कि मंज़िलखासआँ माह अस्त—
नियाज़ारम ज़ख़ुद हर्गिज़ दिले रा
कि मी तर्सम दरो जाये तू बाशद।

१. उड़ान, २. स्वाद, ३. उपदेश, ४. लक्ष्य, इष्ट, ५. रहस्यज्ञाता,
६. आकाशके सूर्य, ७. समुद्र, ८. तुलनामें, ९. नगण्य, दरिद्र, ।

यह तीसरी और आखिरी मुलाक़ात थी। उन्होंने देखा कि बायज़ीद बीमार और मलिन हैं और एक पहलूसे लेटे हुए आह-आह कर रहे हैं। सय्यद अमानुल्लाको देखकर एक ठण्डी साँस ली और 'शफ़ाई' का यह शेर पढ़ा—

परिस्तारे नदारम बरसरे बालीन बीमारे

मगर आहम् अज़ी पहलू बआँ पहलू ब गरदानद ।

चचाके पूछनेपर कि क्या हाल है, फर्माया—“ऐ अजीज़ ! मेरा सीना ऐसे जल रहा है गोया अन्दर आग सुलग रही है। हर नाला^१ आतिश^२ है और हर आह एक शोलए-सरकश^३। अगर मौत मेरी फरियादको पहुँच जाय तो मैं अपनेको खुशकिस्मत समझूँगा। न दिनको चैन है, न रातको करार। हवा जो चलती है इस आगको भड़का देती है। पानी जो पीता हूँ इस आगपर तेलका काम करता है। काश, कोई मेरे सीनेको चीर डाले और दिल व जिगरको बाहर निकाल फेंके।”

“सूर्यास्त तक यही हाल रहा। शामकी नमाज़ पढ़ी और प्राण निकल गये। रातको चचाने उन्हें सपनेमें देखा। बहुत खुश थे और कह रहे थे—“देखा तुमने। एक इश्कने मेरे अन्दर कैसी आग लगा दी थी। इसका इलाज सिवाय मरणके और कुछ न था।‡ जब मेरे प्रियतमने मेरी बेताबी देखी तो मुझे रहमत^४ के समुन्दरमें डाल दिया और मुझे गौहरे मक्कसूद^५ से हमकिनार^६ किया।”

‘मीर’ के निर्माणमें इन बुजुर्गोंका बहुत बड़ा हिस्सा है। उनके जीवन और काव्य दोनोंपर इन दिशाओं एवं संस्कारोंके चिह्न दिखायी पड़ते हैं। काव्यकी समीक्षा करते समय हम विस्तारसे इसकी चर्चा करेंगे। यहाँ

‡ “दीदी कि इश्क च आतिशे दरमनज़द व चुनानम सोलत चारये कार जुज़ मर्ग न बूद।”

१. आर्तनाद, चीत्कार, २. आग, ३. प्रचण्ड लपट, ४. कृपा, ५. वाञ्छित मुक्ता, ६. सम्बन्ध कराना, मिलन कराना।

इतना लिख देना चाहते हैं कि पिता (मीर मोहम्मदअली), चचा (मीर अमानुल्ला) तथा इन दरवेशोंकी जीवन-प्रणाली और व्यक्तित्वका 'मीर' के हृदयपर सदैव गहरा असर रहा । बचपनमें जो कुछ उन्होंने देखा, सुना उसे ही कैशोर एवं यौवनमें ग्रहण किया । उन्होंने निस्पृहता, स्वाभिमान और एकान्तप्रियता अपने पितासे सीखी; प्रेमकी विह्वलता, दर्द, जलन और आवेश 'चचा' अमानुल्लासे ग्रहण किया, तथा पूजाके मिथ्याचारोंके प्रति उपेक्षा एवं धार्मिक उदारताका भाव दरवेशोंसे प्राप्त किया ।

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि जब यह दस सालके थे, सय्यद अमानुल्ला का देहावसान हुआ । 'मीर' के दिलपर गहरी चोट लगी । पर उसके चचा एवं पिता का निधन

कुछ ही दिनों बाद पिता भी चल बसे । और 'मीर' इस संसारमें अकेले रह गये । उन्होंने अपने पिताकी मृत्युके सम्बन्धमें एक घटनाका जिक्र किया है जिससे पता चलता है कि सबको पहलेसे ही मालूम हो गया था कि अब अन्त आ गया है । 'मीर' लिखते हैं कि "मेरे वालिद^१ ने सय्यद अमानुल्लासे फर्माया—“ऐ बिरादर अजीज़ ! जोफ़^२ बढ़ता जाता है । अगर कुरी^३ हिफ़्ज़^३ कर लो तो क्या अच्छा हो ।” अर्ज^४ किया कि बहुत खूब । एक दिन दोनों बैठे पाठ कर रहे थे कि एक दरवेश असदउल्ला नाम, नीले कपड़े पहिने और नमदी कुलाह^५ ओढ़े विशेष परिच्छद् पहिने आया । ज्यों ही मेरे वालिदके सामने आया, उन्होंने फ़र्माया—“भाई, इतने दूर-दराज़का सफर तूने क्यों अख्तियार किया और इतनी ज़हमत^६ और मशक्कत^७ क्यों उठायी ?” दरवेश दौड़के क़दमों पर गिर पड़ा । वालिद उससे बग़लगीर हुए^८ । और उसे अपने पास जगह दी । चचाजान यह घनिष्टता देख हैरान हुए और पूछा, यह कौन बुजुर्ग हैं ? कहा—मेरे पुराने

१. पिता, २. दुर्बलता, ३. जबानी याद करना, ४. निवेदन, ५. टोप, ६. विपत्ति, ७. श्रम, ८. भेंटे ।

परिचित हैं। वह और अधिक चकित हुए, इसलिए कि उनको इसके पहिले न कभी देखा था, न उनकी चर्चा ही कभी सुनी थी। उनको चकित देख पिताने कहा—हम दोनों एक ही आश्रम—धर्मस्थान—के सेवक हैं। पहिले सालमें एक बार जरूर उनकी सेवामें उपस्थित होता था। एक बार मैंने गुरुदेवसे निवेदन किया कि कितना अच्छा हो अगर मरनेसे पहिले मुझे इसकी सूचना मिल जाय ताकि मैं अपना ध्यान अन्य वस्तुओंसे हटा लूँ। आदेश हुआ कि जब तुम इस विशेष परिच्छदको दोबारा देखो तब समझ लेना कि दूसरे साल तक जीवित न रहोगे, उम्र बहुत थोड़ी बाक़ी है। चचा यह सुन कर बड़े दुखी हुए और कहा—भगवत्कृपासे मैं इस घटनाको अपनी आँखोंसे न देखूँगा और इसके पूर्व ही इस संसारसे विदा हो जाऊँगा।

“जब उस दरवेशसे बातें हुई तो उसने कहा कि कुछ दिनोंसे मेरी दुकान बिल्कुल नहीं चलती थी और इसके कारण बहुत ही परीशान था। एक दिन मैंने गुरुदेवको स्वप्नमें देखा कि वह सिरहाने खड़े हैं और फर्मा रहे हैं कि ‘ऐ असदउल्ला, यद्यपि यात्रामें कठिनाइयाँ बहुत हैं और रास्ता भी दूरका है लेकिन एक बार तुम अली मोतक्कीके पास जरूर जाओ। मेरे और उनके बीच एक सङ्केत है जिसको वह तुम्हारे जानेसे समझ जायेंगे। इसलिए जल्दी जाओ और कठिनाइयोंसे परीशान न हो। वहाँसे लौटने पर तुम्हारी दुकान खूब चलेगी। बस, मैंने दुकान एक शिष्यके सुपुर्द की और सीधा अकबराबादके लिए चल खड़ा हुआ।

“ईदका दिन था। चचाजानने कपड़े बदले और नमाज़ पढ़ी। इसके बाद उनके सीनेमें ऐसा दर्द शुरू हुआ कि किसी करवट चैन नहीं आया। चेहरेका रंग बदल गया और सन्नकी ताक़त जाती रही। बालिदसे बुला कर कहा—मालूम होता है कि यह दर्द जानके साथ जायगा। दम घुटा जाता है और सन्न है कि किसी तरह नहीं होता। शाम तक यह दर्द सारे जिस्ममें फैल गया और उनकी तकलीफ़से देखनेवालोंके दिल हिलने लगे।

प्रातःकालीन नमाज़के समय वह चले गये ।” इस प्रकार अपने गुरुकी मृत्यु अपनी आँखों न देखनेके अपने वचनका निर्वाह किया । मीरने उस दुःखका वर्णन किया है जो इस घटनासे उनके पिताको और उन्हें हुआ । वह कहते हैं कि चचाकी मृत्युसे मेरे पिताको बड़ी चोट लगी और वह अपने आपको ‘अजीज़ मुर्दा’ कहने लगे । मेरे ऊपर तो कयामत^१ ही गुज़र गयी । हर वक्त उनके साथ रहता था और अपनी ज़रूरतोंको उन्हींसे कहता था । अब दिन और रात सिवा उनकी यादके और कुछ शग़ल^२ नहीं था । वालिद बहुतेरी दिलजोई^३ करते लेकिन गमग़लत^४ न होता । कभी फ़र्माते कि मुझे तेरा बड़ा ख़्याल है लेकिन मैं खुद बरसरे राह^५ हूँ । कभी कहते, खुदाका शुक्र है कि दस बरसके हो । उस पर नज़र रखो और अपने दिलको मज़बूत करो ।

“एक रोज़ अपने भांजे मोहम्मदके पास आलमगंज तक पैदल धूपमें जाना पड़ा । दिन भर वहाँ रहे; शामको लौटे । अपनी मस्जिदमें नमाज़ चचाके बाद पढ़ी । फिर मुझसे फ़र्माने लगे कि मुझे लूका असर हुआ मालूम पड़ता है । सिरमें दर्द है पिता भी और मालूम पड़ता है कि बुखार हो जायगा ।

इस वक्त कुछ नहीं खाऊंगा । सो गये । सुबह बुखार और तेज़ हो गया । उनके पुराने चिकित्सक हकीम अब्दुलफ़तहने बहुतेरा इलाज किया मगर कुछ फ़ायदा न हुआ । बुखार ठहर गया और रोज़ शामको तेज़ होने लगा । एक महीने चिकित्साके बाद भी जब कुछ लाभ न हुआ तो लोग समझ गये कि बुखार हड्डियोंमें असर कर गया । धीरे-धीरे क्षय हो गया । भोजन बिल्कुल छूट गया । सिर्फ़ नर्गिसके फूल सूँघ लेते थे । बादमें दवा भी छोड़ दी । एक दिन मुझे और बड़े भाई हाफ़िज़ मोहम्मद हसनको बुलाया और फ़र्माया कि मैं एक फ़कीर हूँ । मेरे पास न रुपया, न पैसा,

१. प्रलय, २. काम, ३. दिल बहलाव, ४. दुःख-निवृत्ति, ५. पथके बीच, मतलब है कि चलने ही वाला हूँ ।

न सामान, न जायदाद । अलबत्ता तीन सौ जिल्दें किताबोंकी हैं, लाओ उन्हींको तुम दोनोंमें बांट दूँ । बड़े भाईने कहा कि 'आपको मालूम है, मैं विद्यार्थी हूँ और किताबें सिर्फ मेरे काम आ सकती हैं । मोहम्मद तक्कीको इससे क्या वास्ता, सिवा इसके कि इनकी पतंग बनाकर उड़ाये या फाड़ डालें ।' वालिदको बात बुरी लगी । वह समझ गये और फर्माया—“अगचें तूने फ़क़ीरी इस्तियार की है लेकिन तेरे मनसे बुराई नहीं गयी । इन किताबोंको तूही ले ले लेकिन याद रख कि अल्ला शयूर^१ है और शयूरको दोस्त रखता है । मोहम्मद तक्की तुम्हारा दस्तेनिगर कभी न होगा । ज्यादा सताओगे तो उसकी सज़ा पाओगे । समझ लो कि उसके सामने तुम्हारा चिराग़ हर्गिज हर्गिज जल नहीं सकता ।” उसके बाद मुझे फर्माया—“मुझपर तीन सौ रुपये बाज़ारके क़र्ज हैं, जबतक उन्हें चुका न देना, मेरा मृतक कर्म न करना ।” मैंने निवेदन किया—“घरकी सम्पत्ति तो यही किताबें थीं जो भाईजानके अधिकारमें आ गयीं; अब मैं क़र्ज चुकानेका क्या उपाय करूँगा ।” उन्होंने कहा—“घबराओ मत । खुदा कारसाज है । हुण्डी रास्तेमें है । पहुँचना ही चाहती है । जी चाहता है कि मेरे सामने ही आजाय किन्तु मौत क़रीबतर^२ है और फुर्सत कम, लिहाज़ा^३ खुदा हाफ़िज^४ ।” इसके बाद प्राण त्याग दिये ।

बापके मरनेके बाद इस बालकपर क्या बीती होगी, इसकी कल्पना-मात्रसे मन करुणार्द्र हो जाता है । लावारिस ग़रीब बच्चा, ऋणदाताओंका

पिताके तक्राजा, घोर ऐकान्तिकता, भाईकी निष्ठुरता,
निधनके बाद मतलब बिपत्तियोंका पहाड़ ही टूट पड़ा । पर
उसने पिताकी आज्ञाका पालन किया, प्रभुमें
विश्वास रखा और किसीके आगे हाथ नहीं फैलाये ।^५ बड़े भाईने बाह्य

१. स्वाभिमानी, २. निकटतर, ३. अतः, ४. ईश्वर रक्षक है,
५. “खुदाये करीम मरा शमिन्दए एहसान कसे न कर्द । दोस्त निमर
बिरादर कि सर बसर मन दास्त न सास्त । नक़ल भातम दरवेश किस्मत
सास्तम । कारे रा बलुत्के-खुदाबन्द अन्दास्तम ।”

शिष्टाचारसे भी मुंह मोड़ा और यह सोचकर कि बाप निर्धन मरा है, ऋणदाता तंग करेंगे, अलग बैठ रहे और कहने लगे कि जिनको उन्होंने दुलारसे पाला है वह जानें, उनका काम जाने। मैं तो किसी काममें न पहिले था, न अब हूँ। ऐसे समय केवल ईश्वरका ही सहारा था। बाज़ार के बनिये दो सौ रुपये लेकर आये पर 'मीर' ने स्वीकार न किये। इतनेमें इनके पिताके शिष्य मुकम्मलखाँ पाँच सौ रुपयेकी हुण्डी लेकर आये। 'मीर' ने पहिले तीन सौ रुपये ऋणदाताओंको चुकाये और सौ रुपये पिताके अन्तिम कृत्यमें व्यय किये। गुरूकी कन्नके पास दफ़न किया।

जिम्मे मीरसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि पिताकी मृत्युके समय इनकी उम्र ग्यारह वर्षके लगभग थी। पर इस सम्बन्धमें उर्दू विद्वानोंमें मतभेद

उनकी उम्रके
सम्बन्धमें
मतभेद

है। सर शाह सुलेमानका कथन है कि 'मीर' ने अपनी उम्रका ठीक अन्दाज़ नहीं किया। श्री अब्दुलबारी 'आसी' ने भी अपने 'कुल्लियाते मीर' की भूमिकामें लिखा है कि मीर साहबसे उनके

स्वर्गीय पिताकी बातें और उपदेश, ऋणदाताओंके प्रति कर्तव्य-पालन, पिताके प्रति अन्तिम कृत्य-सम्पादन, सब बातोंका निबटारा और अपने छोटे भाईको घर सौंपकर जीविकाकी तलाशमें उनका बाहर निकलना^१, किसीसे कुछ मदद मांगे बिना जीविकोपार्जनके लिए दूरका सफर, और पिता तथा अमानुल्लाके जीते जी भी दरवेशोंका सत्संग वगैरा ऐसी बातें नहीं हैं कि दस-बारह सालके बच्चेके करने योग्य मानी जायें। फिर आगराके आस-पास कुछ दिन भटकनेके बाद 'मीर' दिल्लीका रुख करते हैं। दिल्ली पहुँचते हैं।

१. मीर लिखते हैं :—“दमे खुदरा ब बिरादर खुर्द सुपुर्दः बतलाशे रोज़गार दर इतराफ़े शह्र उस्तखाँ शिकस्तम लेकिन तफ़े न बुस्तम यानी चारयेकार दर बतन नयाप्रतम। नाचार बगुर्बत शताप्रतम। रंजे राह बरखुद हमबार कर्दम। शदायदे सफर इस्तियार कर्दम ब शाहजहानाबाद देहली रशीदम।”

इस पर 'आसी' लिखते हैं—' दिरायत^१ व क्रयास^२ कभी इस अमर मुहाल^३ के तस्लीम^४ करनेको तैयार नहीं है कि एक दस-ग्यारह बरसका बच्चा अकबराबादसे देहली तकका उस जमानेमें सफर करे कि क्राफिले लुटते थे, रास्ते महफूज^५ न थे, क्रदम-क्रदम पर खून बहाये जाते थे। फिर यह सब कुछ भी हो तो उस वक्त उनके ऐजाए-करीब^६ ने क्योंकि उनको इस दूर दराज मुसाफ़त^७ तय करनेकी इजाजत दी।'

दो-एक और साहबोंने भी इसी प्रकारके सन्देह प्रकट किये हैं। पर ये सब कोरी कल्पनाकी बातें हैं। जब बातचीतमें कई बार उनके पिता भी

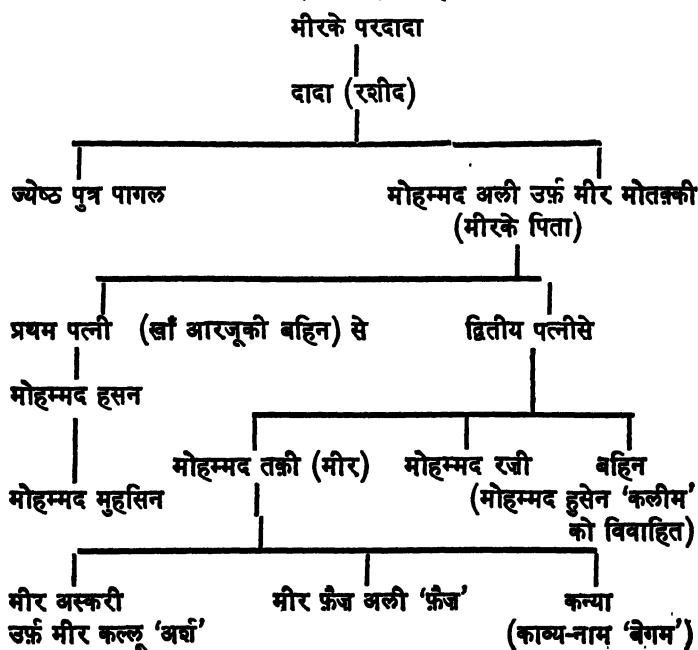
क्या यह उनकी दस सालकी उम्रका जिक्र करते हैं तब उसमें सन्देह करनेका कोई कारण नहीं। कभी असम्भव है ? झूठी बात बोलनेकी कल्पना भी वैसे पवित्र

व्यक्तिके सम्बन्धमें नहीं की जा सकती। फिर पिताके आखिरी वक्तमें मीरके बड़े भाईका यह व्यंग कि 'यह तो किताबोंको फाड़ डालेगा या पतङ्ग बनाकर उड़ायेगा' भी यही सिद्ध करता है कि मीर बच्चे थे। और जो कुछ मीरने छोटी उम्रमें किया वह कोई असम्भव बात नहीं। १२ सालकी उम्रमें ही बाबर अपने कबीलेका सरदार चुना गया था। तेरह सालकी उम्रमें अकबरने गद्दी सँभाली थी। बात यह थी कि बचपनसे ही मीर अपने पिताके असाधारण तपोमय जीवनकी छायामें पले; उनके यहाँ एकसे एक ऊँचे आदमी आते थे। वह स्वयं भी चचाके साथ अनेक फकीरोंके पास जाते थे। उनके प्रशिक्षणका भी पिता और चचा बड़ा ध्यान रखते थे। इसलिए स्वभावतः बचपनमें ही उन्हें उच्च संस्कार पड़ गये और सामान्यतः १५-१६ सालके लड़केसे जिस बातकी अपेक्षा की जा सकती है वह ११

१. प्रज्ञा। २. अनुमान, कल्पना। ३. असम्भव कार्य। ४. मान्य। ५. सुरक्षित। ६. निकटके, प्रिय, स्वजन। ७. फासला, अन्तर। देखिए कुल्लियाते मीरमें श्री अब्दुल बारी 'आसी' का मुकद्दमावाला अंश पृष्ठ १३ कुल्लियाते मीर (न० कि० प्रे०)

वर्षकी अवस्थामें 'मीर' करने लगे थे। आज भी ऐसी बातें हमारे आपके ही कुटुम्बोंमें मिल सकती हैं और अब तो वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानोंने भी सिद्ध कर दिया है कि मनुष्यकी बौद्धिक आयु एवं शारीरिक आयुमें कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। ८ वर्षका बच्चा १२ वर्षके बच्चेकी बुद्धि रख सकता है। इसलिए मुझे जरा भी शुबहा नहीं कि मीरने अपना जो हाल लिखा है वह ठीक है।

पिताकी मृत्युके बाद 'मीर' बिल्कुल अकेले पड़ गये। इनके वंशवृक्षको, जो नीचे दिया जा रहा है, देखनेसे जान पड़ता है कि बड़ी मांसे उत्पन्न बड़े भाईके अलावा इनकी मांसे उत्पन्न एक छोटा भाई था, और एक बहिन भी थी—



इन्होंने छोटे भाई मोहम्मद रज़ीको अपने स्थान पर रखा और स्वयं जीविकाकी खोजमें बाहर निकले। कुछ समय आगराके आस-पास फिरते रहे पर कोई साधन जीविकोपार्जनका न मिला तो जन्मभूमिको प्रणाम किया और दिल्लीकी ओर चल पड़े। बड़ी दिक्कतोंसे वहाँ पहुँचे। वहाँ जाकर कहाँ ठहरे, इसका कोई पता नहीं लगता। पर एक दिन घूमते-फिरते अमीरुलउमरा समसाम-उद्दौलाके भतीजे मोहम्मद बासितसे भेंट हो गयी। अमीरुलउमरा इनके पिताके भक्तोंमें थे। मोहम्मद बासित इन्हें अपने चचा के पास ले गये। उन्होंने पूछा—‘यह किसका लड़का है?’ बासितने जबाब दिया—‘मीर मोहम्मदअली का।’ फर्मानि लगे—‘इसके यहाँ आनेसे तो जाहिर^१ होता है कि वह राहिए अदम^२ हुए।’ बड़ा दुःख प्रकट किया। उसके बाद कहने लगे—‘उस शख्स^३ के मुँहपर बहुतसे हुकू^४ हैं। इस लड़केको एक रुपया रोज़ हमारी सरकारसे दिया जाय।’ इस पर ‘मीर’ ने निवेदन किया कि जब नवाब साहबने इतनी कृपा की है तो मेरे प्रार्थना-पत्र पर लिखित आदेश देनेकी भी कृपा करें। यह कहकर जेबसे प्रार्थना-पत्र निकाला और पेश कर दिया। धनिक एवं विलासी राज्याधिकारी टाल-मटोल वाले हुआ ही करते हैं। नवाबने कह दिया :—“वक्ते क़लमदान नेस्त” अर्थात् “क़लमदानका वक्त नहीं है।” मीर साहब लिखते हैं कि यह सुन कर मुझे जोरोंकी हँसी आ गयी। नवाबने चकित होकर देखा और पूछा—“क्यों भई ! क्या है ? हँसे क्यों ?” मैंने शट कह दिया कि मैंने हुज़ूरके इस फ़िक्ररेका मतलब नहीं समझा। अगर आप यह फर्माते कि हस्ताक्षरका समय नहीं या क़लमदान उठानेवाला नहीं तो खैर एक बात भी थी किन्तु यह कहना कि वक्तेक़लमदान नहीं है, एक अजीब और नया मुहाविरा है। क़लमदान कोई ज़ानदार तो है नहीं; वह तो लकड़ीका है, उसके लिए कोई समय या असमय नहीं होता; जिससे कहिएगा उठा

लायेगा ।’ इस पर नवाब हँसने लगे और बोले—‘ठीक कहते हो ।’ उसी वक्त कलमदान मँगवाकर अर्जी पर हस्ताक्षर कर दिये और मुझे बड़े स्नेह एवं कृपापूर्वक विदा किया ।”

इससे सिद्ध होता है कि बचपनमें ही उनको भाषा पर कैसा अधिकार मिल गया था और उनकी मेधा कितनी तीव्र थी ।

इस प्रकार उनकी तुरन्तकी कठिनाई दूर हो गयी । ‘मीर’ को यह वृत्ति नादिरशाहके हमले—१७३९ ई०—तक मिलती रही । उस हमलेमें अमीरुलउमरा समसाम उद्दौला मारे गये और वृत्ति बन्द हो गयी । इस प्रकार एक डेढ़ साल बाद जीविकाका प्रश्न फिर उठ खड़ा हुआ । अब यह फिर बेकार और परीशान हो गये ।

ऐसा जान पड़ता है कि बापकी मृत्युके बाद जीविकाकी तलाशमें दो-एक बरस यह आगराके आस-पास ही चक्कर काटते रहे । लगभग १३ सालकी अवस्थामें दिल्लीकी ओर रवाना हुए । वहाँ भी तुरन्त ही तो इनकी भेंट नवाब साहबसे हुई न होगी । एकाध साल गुज़रनेके बाद यानी १४॥—१५ सालकी उम्रमें यह नवाबसे मिले होंगे । फिर लगभग १६॥—१७ सालकी उम्र तक उन्हें यह वृत्ति मिलती रही होगी ।

नादिरशाहके हंगामेके बाद यह वतनको लौट गये । पर वहाँ लोगोंकी दुनियादारीसे इनके भावुक हृदयको गहरी ठेस लगी । किशोरावस्थाकी

देहलीकी

दूसरी यात्रा

उभरती उम्रमें लोगोंकी आँखोंमें स्नेहकी दीप्ति
ढूँढ़ती हैं, ज़िन्दगी सौ-सौ बल खाती है; रोती,
नाचती और खिलखिलाती है; मन किसीसे

बंधना चाहता है—किसीका होना चाहता है, किसीको अपना बनाना चाहता है । वहाँ कहीं इसकी गुंजाइश न थी । लोगोंके दिल समयके लौह दण्डसे कुट-पिट कर चौरस हो रहे थे । इनकी स्नेहकी प्यास वहाँ न बुझी; किसीने इनसे वह प्रेमल व्यवहार न किया जिसकी इनको आशा थी । वह लिखते हैं :—

“जो लोग दरवेश (पिता) की ज़िन्दगीमें मेरी खाके पा' को सुर्मा समझ कर आँखोंमें लगाते थे अब उन्होंने एकबारगी मुझसे आँखें चुरा लीं ।” *

निराश हो कर यह पुनः दिल्ली लौटे और इस बार अपने सौतेले बड़े भाईके मामा सिराजुद्दीन अली खाँ 'आरजू'के यहाँ ठहरे । खाँ आरजू उस समय दिल्लीके बौद्धिक एवं साहित्यिक जगत्में बड़ी प्रतिष्ठा रखते थे और 'इमामुल मुताखरीन' कहे जाते थे । यह उनके पास रहते थे और कुछ लोगोंकी सहायतासे बराबर अपना अध्ययन भी जारी रखे हुए थे । 'आरजू' भी इनकी शिक्षा-दीक्षामें बड़ी दिलचस्पी लेते थे । पर वह पुराने ख्यालके वुजुर्ग थे । उधर दिल्लीसे आगरा लौटने पर, ऐसा जान पड़ता है कि 'मीर' किसी विधुवदनी पर मोहित हो गये थे । इस बातसे इनके सौतेले बड़े भाई और चिढ़ गये और उन्होंने अपने मामासे उनकी शिकायत लिखी कि बह घूर्त्त और उपद्रवी है । उसकी शिक्षा-दीक्षा पर परिश्रम न करें । १ इससे मामा और चिढ़ गये और इनके साथ कठोरताका व्यवहार करने लगे । २

इससे मीरका मानसिक सन्तुलन दिन-दिन बिगड़ता गया । उस समय

१. पैरकी घूल ।

* “कसाने कि पेश दरवेश खाके पाए मरा कहलबसरी सास्तन्द, एक बार अज नज़रम अन्दास्तन्द ।” पृष्ठ ६३ ।

१ “मीर मोहम्मद तक्की फितनए-रोज़गार अस्त । जीनहार व तर्बियत ओ न : बायद परदास्त ।”

२ “वह अजीज वाकई दुनियादार शख्स था । भाँजेके लिखनेसे मेरे दर पे हो गया । जब कभी मुलाकात होती तो बिला वजह बुरा-भला कहना शुरू कर देते और तरह-तरहसे तकलीफ पहुँचानेकी कोशिश करते । मेरे साथ उनका सलूक ऐसा था जैसे किसी दुश्मनसे होता है । अगर उनकी दुश्मनीकी तफ़सील करूँ तो एक दफ़्तर हो जाय ।”

की उनकी मनोव्यथाकी कल्पना कीजिए । एक ऐसे पिताका लड़का जिसकी चरण-धूलि लेनेको न जाने कितने लोग उत्सुक रहा करते थे, संसारमें अनाथ, सब साधनोंसे हीन, बेकार, परीशान, प्रेमकी असफलतासे निराश और दिल्ली जैसी महानगरीमें जिसके एक मात्र आश्रय में था उससे भी प्रताड़ित । क्या स्थिति रही होगी, इनके मनकी । असीम मनोव्यथा के कारण यह लगभग पागल हो गये । किवाड़ बन्द कर लेते और दिन-दिन भर पड़े रहते । चाँदकी ओर देखते रहते । उसमें एक सूरत नज़र आती । 'ज़िक्रे मीर' तथा अपनी मस्नवी 'ख्वाबो खयाल'में भी अपनी अवस्थाका वर्णन इन्होंने किया है :—

चला अकबराबादसे जिस घड़ी ।
 दरो बाम^१ पर चश्मे हसरत^२ पड़ी ॥
 पस^३ अज़ क़तअ रह^४ लाये दिल्लीमें बस्त^५ ।
 बहुत खींचे याँ मैंने आजार^६ सस्त ॥
 जिगर^७ जौरे गर्दू^८ से खूँ हो गया ।
 मुझे रुकते-रुकते जुनूँ^९ हो गया ॥
 हुआ ख़ब्तसे मुझको रब्त^{१०} तमाम ॥
 लगी रहने वहशत^{११} मुझे सुबहो शाम ॥
 य वहमे ग़लतकार^{१२} याँ तक खिंचा ।
 कि कारे जुनूँ^{१३} आस्माँ तक खिंचा ॥

१. द्वार एवं छत । २. लालसापूर्ण नयन । ३. अतः । ४. वह रास्ता छोड़कर । ५. भाग्य । ६. यातनाएँ । ७. हृदय (यकृत) । ८. ज़मानेके अत्याचार । ९. उन्माद । १०. आत्मीयताका बिच्छेद । ११. पागलपन । १२. मिथ्या भ्रम । १३. उन्मादका प्रभाव ।

नज़र रातको चाँद पर गर पड़े ।
तो गोया कि बिजली सी दिल पर पड़े ॥
महे चारदह^१ कारे आतिश^२ करे ।
ढरूँ यों तलक मैं कि जी ग़श^३ करे ॥
नज़र आये इक शक़ महताब^४ में ।
कमी आये जिससे खूरो खाबमें ॥

जब हालत ज्यादा खराब हो गयी तब मित्रों एवं प्रियजनोंने चिकित्सा शुरू की । ऐसे समय फ़ख़रुद्दीन खाँकी पत्नीने, जो इनकी निकट सम्बन्धिनी भी थीं, इनकी बड़ी सेवा की । उन्होंने इलाजके साथ मन्त्रोपचार भी कराया । धीरे-धीरे इनकी तबीयत ठीक हो गयी । पर खाँ आरजूसे इनका दिल फट गया; वह अन्तर बढ़ता ही गया और अन्ततोगत्वा एक दिन यह वहाँसे हट गये ।

खाँ आरजू और 'मीर' के पारस्परिक सम्बन्ध क्यों बिगड़े, इसका कोई स्पष्ट कारण, ज्ञात नहीं होता । भांजेकी शिकायतसे एक गम्भीर विद्वान्का परस्पर-विरोधी इतना चिढ़ जाना कि दुश्मन-जैसा व्यवहार करने लगना, कुछ समझमें आनेवाली बात नहीं है ।

विवरण

उस समयके प्राप्त सभी विवरणोंमें खाँ आरजूकी विद्वत्ता, गम्भीरता तथा सहृदयताकी प्रशंसा मिलती है । स्वयं मीरने अपने प्रथम ग्रन्थ 'नकातुश्शुअरा' में उनकी बड़ी प्रशंसा की है और उन्हें अपना उस्ताद माना है । एक जगह तो लिखा है कि ऐसा फ़ाज़िल^५ हिन्दुस्तानमें कोई नहीं बल्कि विदेशोंमें भी सन्देह ही है कि कोई होगा । उधर अपनी बादकी किताब ज़िक्र^६ मीरमें, जिसका प्रणयन खाँ आरजूकी मृत्युके एक साल बाद

१. चौदहवींका चाँद, पूर्णचन्द्र । २. आगका काम । ३. मूर्च्छा ।
४. चन्द्र । ५. विद्वान् ।

आरम्भ हुआ, वह उनकी कठोरता एवं अन्यायकी बात लिखते हैं।* तब क्या सत्य है? या तो खाँ आरजूके जीवन-कालमें उन्होंने उनके विरुद्ध कुछ लिख कर और उत्तेजित करना और अपने मार्गकी कठिनाइयाँ बढ़ाना उचित नहीं समझा, या फिर बादमें छोटी-छोटी घटनाओंको लेकर उन्हें बढ़ा-चढ़ा दिया है। 'नकातुश्शुअरा' एक साहित्यिक समीक्षा ग्रन्थ है; उसमें कवि-चर्चा है; काव्यका विवेचन है। सम्भव है, इसीलिए 'मीर' ने उसमें अपनी व्यक्तिगत बातों और निजी झगड़ोंकी चर्चा करना उचित न समझा हो 'किन्तु जिक्रे मीर' में वह अपनी जीवन-घटनाएँ लिख रहे थे। इसका सम्बन्ध उनके निजी जीवन और अनुभवोंसे था, इसलिए संभव है, इसमें अपने मार्गमें आने वाली कठिनाइयोंके निदर्शनके लिए उन्हें लिखा हो।

वहरहाल, इतना तथ्य है कि खाँ आरजूसे मीरका सम्बन्ध बादमें कड़वा हो गया। शम्शुलउल्मा मौलाना मुहम्मदहुसेन 'आज़ाद' ने अपने ग्रन्थ 'आबे हयात'में इस बिगाड़का कारण यह बताया है कि खाँ आरजू हुनफ़ी थे और यह शिया इसीलिए किसी मस्ले पर बिगड़कर अलग हो गये। पहली बात तो यह कि इसका भी कोई निश्चित प्रमाण नहीं है कि मीर शिया-थे। उनके पूर्वज तो निश्चित रूपसे सुन्नी थे। हाँ, यह ज़रूर है कि उस समय न केवल राजनीतिक क्षेत्रमें वरं विद्या एवं साहित्यके क्षेत्रमें भी शिया प्रभाव फैलता जा रहा था। वस्तुतः मीर घर्मके बारेमें बड़े उदार थे; वह प्रेम-घर्मी थे। प्रेमघर्मी पितामें उच्च आध्यात्मिकताके कारण जो आत्म-नियन्त्रण था वह मीरमें न था। उन्हें इसका समय एवं अवसर ही नहीं मिला। फिर

*आश्चर्य तो यह है कि डा० अब्दुलहक़ जैसे विद्वान्ने इसी आधार पर नकातुश्शुअराके बादमें लिखे जानेकी कल्पना की है। जब दोनों ग्रन्थोंके प्रणयन कालके सम्बन्धमें निश्चित प्रमाण उपलब्ध हैं तब ऐसी कल्पना भ्रमात्मक है। एक नहीं, अनेक स्थानों पर बार-बार उस कालका उल्लेख है जिसमें ये दोनों ग्रन्थ लिखे गये।

किशोरावस्था; वह प्रेमी, सौन्दर्योपासक बन गये। किसीके प्रेममें बहवसा इधर-उधर फिरते थे। इससे कुछ बदनामी भी होने लगी थी। खाँ आरजूको यही बुरा लगा होगा। और एक बार जब आदमी पर एक छाप पड़ जाती है तो जल्द मिटती नहीं। जो भी बात हो, इतना तो मानना ही पड़ेगा कि मीरके जीवन और काव्य पर—और काव्य पर तो बहुत ज्यादा—खाँ आरजूकी छाप पड़ी है। खाँ आरजूकी फारसी तरकीबों एवं शब्दोंको, जो उनके कोशमें हैं, मीरने खूब अपनाया है और उनका अच्छा निर्वाह किया है।

उन्माद शान्त होने पर 'मीर' ने पुनः स्वाध्याय आरम्भ किया। एक दिन बज़ारमें एक किताबका कोई अंश लिये बैठे थे कि एक जवान मीर

अन्य गुरुजन

जाफ़र उधरसे गुज़रा। यह लिखते हैं :—“मुझे देखा और बैठ गया। कहा, मालूम होता है तुम्हें

पढ़नेका शौक है। अगर मेरा अनुमान सत्य है तो मैं तुम्हें पढ़ा सकता हूँ। मैं भी विद्याभ्यासी हूँ पर कोई समानधर्मा नहीं मिलता।” मीरने कहा—“मैं आपकी कोई खिदमत तो कर नहीं सकता, अगर यों ही यह ज़हमत गवारा फर्मायें तो इनायत^२ होगी।” उन्होंने कहा—“मगर बग़ैर नाश्ताके मेरे लिए कहीं आना-जाना मुमकिन नहीं है।” मीर बोले—“मेरे पास कुछ नहीं है पर खुदा यह मुश्किल भी आसान करेगा।” तबसे मीर जाफ़र इन्हें पढ़ाने लगे। मीरने लिखा कि वह बड़ी मेहनतसे मुझे पढ़ाते और मुझसे भी जहाँ तक बन पड़ता उनकी खिदमत करता। यह क़म कुछ दिनों तक चला। बादमें घरसे कोई ज़रूरी पत्र पाकर मीर जाफ़र अपने वतन (पटना) चले गये।

कुछ दिनों बाद 'मीर' की भेंट सय्यद सआदत अलीसे हो गयी। यह अमरोहाके रहनेवाले थे और रेखतामें शेर लिखते थे। अबतक 'मीर'

फारसीमें कविता करने लगे थे पर रेखताका रिवाज बढ़ रहा था । सआदत अलीने इन्हें रेखतामें लिखनेको उत्साहित किया । मीरके हृदयमें पिता एवं अमानुल्ला द्वारा दिये हुए गहरे प्रेम-संस्कार थे, हृदयमें वेदना थी, खाँ आरजूका रंग था, यौवनकी अँगड़ाई और खुमारी थी, स्वाध्याय-अर्जित फारसी एवं अरबीका ज्ञान था, बस इन्होंने रेखतामें काव्यका प्रणयन आरम्भ कर दिया और उसको पकड़ा तो ऐसा पकड़ा और ऐसा गहरा अभ्यास किया कि शीघ्र ही दिल्लीके प्रतिष्ठित शायरों^१ में गिने जाने लगे । पर जो तुनुकमिर्जाजी इनमें आ गयी थी वह इनकी जिन्दगीसे कभी न गयी । एक दिन खाँ आरजूने अपने साथ खानेके लिए बुलाया । बातचीतमें खाँ आरजूके मुँहसे कोई ऐसी बात निकल गयी जिसे 'मीर' बर्दाश्त^२ न कर सके और बिना खाना खाये घरसे बाहर चले गये । जामा मस्जिदकी ओर चले किन्तु न जाने ध्यान कहाँ था कि रास्ता भूलकर हौजकाजी पर जा निकले । प्यास लगी थी, वहाँ रुककर पानी पीने लगे । उधरसे अलीमउल्ला नामका एक आदमी जा रहा था । उसने इन्हें देखा तो आगे बढ़कर इनसे पूछा—“क्या जनाब का नाम मीर मोहम्मदतकी 'मीर' है ?” इन्होंने पूछा—“आपने कैसे पहचाना ?” वह कहने लगा कि आपकी मजनूनाना हरकतोंकी तो शहर भरमें धूम है । खैर, निवेदन यह है कि एतमाद उद्दौला कमरुद्दीन खाँके बहनोई* रियायत खाँ आपसे मिलनेको बड़े उत्सुक हैं । अगर मेरे साथ तशरीफ़ ले चलें तो मेहरबानी होगी ।” इन्होंने स्वीकार कर लिया । अलीमउल्लाके साथ पहुँचे । रियायत खाँने बड़े तपाकसे इनका स्वागत किया । बस, उस दिनसे मीर उनके यहाँ नौकर हो

१. कवियों । २. सहन ।

* 'आसीने इन्हें कमरुद्दीन खाँका दामाद लिखा है । और डा० अब्दुल-हक़ने दौहित्र । पता नहीं क्या गोरखधंधा है । वस्तुतः यह अजामुल्ला खाँके पुत्र थे ।

गये । यह सन् १७४८ ई० की बात है । इस समय मीरकी उम्र २५-२६ सालकी रही होगी । उनके शेरोंकी धूम थी और कविके रूपमें वह दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो चुके थे । इसीके ३ साल बाद १७५१ ई० में उन्होंने 'नकातुश्शुअरा' लिखा जिससे प्रकट होता है कि लोग इनके शेरोंकी बड़ी इज्जत करते थे ।

इस समय देशकी दशा बहुत बुरी थी । कब क्या होगा, कोई नहीं जानता था । मीर साहबने वह जामाना देखा था, जब पिताके पास लोगों की भीड़ लगी रहती थी । उनकी साधुता तथा चचाकी प्रेमोपासनाका उनपर गहरा असर पड़ा था । फिर वह एकदम अनाथ हो गये । स्नेहकी छाया उनपरसे उठ गयी । जिनसे उम्मीदें थीं,

परिवर्तनोंकी
आँधीके बीच
चलते हुए

उन्होंने कनाराकशीकी । बे-आस, बेसहारे यह संसारके अनजान मार्ग पर चल पड़े । दुनियामें जो कुछ देख रहे थे, उससे सांसारिक ऐश्वर्य परसे इनकी आस्था उठ गयी थी । जैसे हवाके झोंके आते और चले जाते हैं वैसे ही वह उसे समझते थे । दरवेशों और ईश्वर-भक्तोंकी संगतसे इनके दिलमें प्रेमकी गरमी पहिलेसे ही पैदा कर दी थी; जीवनका जो रूप देखा उसने हृदयको और कोमल एवं करुणार्द्र कर दिया । वह देख रहे थे कि अभी जिनके यहाँ महफिल लगी है, मुसाहब घेरे हुए हैं, सुख एवं विलासके सब साधन प्रस्तुत हैं, थोड़ी देर बाद वही सूखी रोटीको मोहताज हैं, न कोई दोस्त है न पुरसाँ हाल । देहली जो किसी समय ऐश्वर्य एवं शान्तिका केन्द्र थी, रोजकी लड़ाइयों, परिवर्तनों और रुधिर-पिपासाके बीच व्याघ्र-बाणके सामने पड़ी मृगी की भाँति भयभीत थी । चारो ओर गुण्डों और उच्चकोंका राज्य था । आज एक उठा, कल दूसरेने उसे क़त्ल किया और इसके पहिलेके अधिकार उसके हाथमें आवे, खुद मार दिया गया :—

चोर उचक़े सिख मरहठे शाहो गदा^१ सब ख्वाहाँ^२ हैं,
चैनसे हैं जो कुछ नहीं रखते फ़ुक^३ भी एक दौलत है यहाँ ।

मतलब हालत ऐसी थी कि शान्ति एवं सुखकी बात तो दूर रही, लोगोंको ज़िन्दगी और इज्जत बचानी मुश्किल हो गयी ।

‘मीर’ सुबह कुछ शाम कुछकी इस अवस्थासे बहुतोंको गुज़रता हुआ देख रहे थे और खुद भी गुज़र रहे थे । रियायत खाँके साथ रहते कुछ ही दिन बीते थे कि दुर्रानियोंका हमला हुआ । रियायत खाँके साथ इन्हें भी जाना पड़ा । मोहम्मद शाहका अन्त हुआ; अहमदशाहको तख्त पर बिठाया गया । इस समय ख्वाजासरा जावेद खाँकी तूती बोलती थी । उधर राजस्थानकी ओरसे मरहठे चले आ रहे थे । साँभरके समीप उनसे लड़ाई हुई जिसमें रियायत खाँके साथ यह भी थे । वहींसे अजमेर ख़ाजा मुई-नुद्दीन चिश्तीकी दरगाहकी ज़ियारत^४ को गये । देहली वापिस आये तो फिर बेकार हो गये । नवाब साहबके साथ रहे; कुछ चैन मिला । अरबीका अध्ययन शुरू किया कि फिर हवा बदल गयी । सफ़्फ़दर जंगने धोकेसे नवाब बहादुरको मरवा डाला । फिर बेकारी आई पर अबतक वह काफ़ी प्रसिद्ध हो चुके थे इसलिए इस बार ज़्यादा कठिनाई न हुई । दीवान महानारायणने इन्हें बुलवा लिया । कुछ दिन चैनसे कटे कि बादशाह और वज़ीरमें युद्ध आरम्भ हो गया । छः महीने तक यह सिलसिला चलता रहा । इसी ज़माने (१७५३ ई०) में अपने उस्ताद और मामा खाँ आरजूका स्थान छोड़ कर स्वयं अमीर खाँ ‘अंजाम’ की हवेलीमें रहने लगे । उधर सफ़्फ़दर जंगका देहाबसान हो गया; शुजाउद्दौला अवधके सूबेदार बनाये गये ।

‘मीर’ के काव्योत्कर्षका यह मध्यकाल था । अपनी गहराई और दर्दमन्दी, अपनी ज़बान और प्रसाद गुणके कारण यह दिल्ली पर छा गये थे । ग़ज़लोंका यह हाल था कि लोग उन्हें तोहफ़े^५ की तरह दूर-दूर अपने

सम्बन्धियोंको भेजते थे। बड़े-बड़े लोग उनकी अच्छी भावनाओं और कविताओं पर जान देते थे। जिसे देखिये, इनसे मिलनेको उत्सुक रहता था। पर इनका ज़रा-ज़रा सी बात पर गर्म हो जानेका स्वभाव मतलब इनकी तुनुक-मिजाजी बढ़ती ही जा रही थी। एक दिन राजा जुगलकिशोरने* इन्हें अपने मकान पर बुलाया। कुछ सुना-सुनाया और अपना कलाम^१ इस्लाम^२ के लिए पेश^३ किया। मीर साहब तिनक गये। मामूली शिष्टाचार और दुनिया-दारीका भी पालन न किया। क्रोधमें सारे कलाम पर छुरी फेर दी। भला ऐसे आदमीसे क्या सत्संग हो सकता था। परिणाम वही हुआ कि कष्ट और विपत्तिमें पड़े रहे; राजासे जो लाभ हो सकता था वह नहीं हुआ। फिर भी इतना ज़रूर हुआ कि राजा जुगलकिशोरने राजा नागरमलसे परिचय करा दिया। नागरमल उस समय खालसाके दीवान थे। उन्होंने भी मीरके काव्यकी बड़ी तारीफ़ की। राजाके लड़केने कुछ मासिक वृत्ति बाँध दी। यह वृत्ति एक साल तक उन्हें मिलती रही। फिर स्वयं राजाने भी एक सालकी तनखाह दिलवा दी। बीच-बीचमें भी मीरको उनसे कुछ न कुछ मिलता रहा।

इस बीच राजाकी उन्नति हुई। वह नायब वज़ीर हुए। उम्दतुल मुल्ककी उपाधि प्राप्त की किन्तु उससे मीरको कोई विशेष लाभ पहुँचनेके पूर्व ही अचानक दुर्रानीका दूसरा आक्रमण हो गया। राजा नागरमल अपने कुटुम्बियों और साथियोंको लेकर भरतपुरके राजा सूरजमलके क़िलेमें चले गये। मीर भी उन्हींके साथ थे। उधर वे गये; इधर दिल्लीमें बहशतकी एक आँधी आई। नालियोंमें खून बहने लगा; लाशें सड़कोंपर बिछ गयीं।

* यह कौमका भाट और पेशेसे मद्यविक्रेता था। मोहम्मद शाहके ज़मानेमें बंगालका वकील हो गया। अपने बेटेकी शादी इस शानसे की कि ऐसी दूसरी न हुई।

१. काव्य-रचना । २. संशोधन । ३. प्रस्तुत ।

कुछ शान्ति हुई तो मरहठोंने फिर दिल्लीको दबोच लिया। उधर मीर साहब राजा नागरमलसे आज्ञा लेकर तरह-तरहकी विपत्ति झेलते हुए बरसाना पहुँचे। वहाँसे मुखेर गये। यहाँ सफ़्दरजंगके खजांची राधाकृष्ण-के पुत्र बहादुरसिंहने इनका बड़ा आदर-सत्कार किया। जब मरहठों और दुर्रानियोंका युद्ध समाप्त हो गया तो राजा नागरमल मुखेर पहुँचे। राजाके पुत्र राय बिशनसिंहने मीर साहबको ठहरा लिया था और कुछ मासिक वृत्ति भी नियत कर दी थी। पर मीर साहबकी तो किसीसे पटती न थी। उन्होंने राजासे कहा कि अबतक हुजूरका इन्तज़ार^१ था वर्ना मैं यहाँ रहनेवाला नहीं था; अब जानेकी आज्ञा दें। राजाने कहा—कुछ खबर है कि आप यह फर्मा क्या रहे हैं? ऐसे खतरेके वक़्त मैं आपको जानेकी इज़ाजत नहीं दे सकता। इसके बाद तनख्वाह नियत कर दी और कुछ और भी उपहार दिया। इसलिए यह वहीं रह गये और काफ़ी असें तक वहाँ रहे। जब मराठे हार गये और दुर्रानियोंका पूर्ण अधिकार दिल्लीपर हो गया तब पुराने सरदारोंको फ़र्मान^२ भेजकर बुलाया गया। राजा नागरमलके नाम भी संदेश पहुँचा। वह दिल्ली आये। मीर साहब भी उनके साथ ही आये। पर इस बीच दिल्लीपर जो तबाही गुजरी थी उसका वर्णन सम्भव नहीं है। “नक्शा ही बदल गया था; न वे गृह न वे गृही, न वे मुहल्ले, न वे बाज़ार, हर तरफ़ बहशत, हर तरफ़ वीरानी, न दोस्त न^३ आशना।” * मीर साहबका दिल रो पड़ा। उनपर इस परिवर्तन एवं विनाशका गहरा असर पड़ा। उनका हृदय निम्नलिखित शेरोंमें रो रहा है :—

दिल्लीमें आज भीक भी मिलती नहीं उन्हें,
था कल तलक दिमाग़ जिन्हें तस्लतो ताजकार^४।

१. प्रतीक्षा। २. राजाज्ञापत्र। ३. प्रेमी। * आसी—‘कुल्लियाते मीर’ में पृ० २६। ४. सिंहासन और मुकुट।

दिल्लीमें अबके आकर उन यारोंको न देखा
कुछ वे गये शिताबी^१ कुछ हम ब-देर^२ आये ।

× × ×

मंज़िल न कर जहाँको^३, कि हमने सफ़रसे आ,
जिसका लिया सुराग^४, सुना वे गुज़र गये ।

× × ×

शहाँ कि कहे जवाहर^५ थी खाके पा^६ उनकी
उन्हींकी आँखोंमें फिरती सलाइयाँ देखीं ।

नागरमल जहाँ भी जाते, मीर साहबको साथ ले जाते थे । जब उन्हें
शुजाउद्दौलाके पास सफाईके लिए भेजा गया तब भी मीर साथ थे;
जब सूरजमलके बुलानेपर अकबराबाद (आगरा) गये तब भी मीर साथ
थे । लगभग तीस सालके बाद वतनमें लौटे थे इसलिए अपने बुजुर्गोंकी
मज़ारों पर प्रार्थना की, प्रियजनोंसे मिले । अकबराबाद भी बहुत बदल गया
था इसलिए जी न लगा । फिर भी चार महीने वहाँ रहे । बादमें राजाके
साथ ही सूरजमलके क़िलेमें लौट गये । आगरामें इनके पास शायरोंकी
भीड़ लगी रहती थी ।* इससे ज्ञात होता है कि कविके रूपमें वह बड़े

१. शीघ्रतासे । २. देरसे, विलम्बसे । ३. संसार । ४. भेद ।
५. रत्नांजन, श्रेष्ठ सुरमा । ६. पद-धूलि ।

* 'मीर' खुद लिखते हैं :—“वहाँके शुअरा मुझे उस्तादे फ़न समझ
मुझसे मिलने आते थे । मैं सुबह शाम दरियाके किनारे जा बैठता ।.....मेरी
शेरगोई...की शोहरत आलममें फैल गयी थी चुनौचे शर्मगीं माशूक, खुश-
तरकीब और जामाज़ेब हसीन और बहुतसे पाकीज़ा तीनत और मौजू-
तबीयत मेरे गिर्द जमा रहते और मेरी इज्जत करते । दो-तीन बार शहर
भी गया और वहाँके उल्मा, फुक्रा और शुअरासे मिला लेकिन कोई ऐसा

लोकप्रिय हो गये थे। उनकी विद्या और ज्ञानकी अपेक्षा लोग उनके काव्यके प्रेमी अधिक थे।

राजा नागरमलके साथ ही दूसरी बार भी आगरा गये। इस बार केवल १५ दिन रहनेका मौका मिला।

कुछ समयके बाद यह राजासे अलग होकर फिर देहली आये। कुटुम्बको अरब सरायमें छोड़कर फिर जीविकाकी खोजमें घूमने लगे। यह इनके जीवनका सबसे कठिन समय था। उम्र काफ़ी हो चुकी थी। अब कठिनाइयाँ सहन करनेकी वह ताक़त न थी। फिर भी एक-एकके सामने गये, प्रार्थना की पर किसीने इन पर ध्यान न दिया। बहुत दिनों तक तकलीफ़ें झेलनेके बाद हिशामुद्दौलाके भाई वजीहउद्दीनख़ाने कुछ वृत्ति दी जिससे किसी प्रकार जीवन बीतने लगा।

इस कठिन समयमें काव्य ही इनके जीवनका एक मात्र सुख था। वही इन्हें कठिनाइयोंके बीच भी आनन्द प्रदान करता था। यह मुशायरोंमें जाते, दोस्तोंसे मिलते, हँसते, गप्पें लगाते। मतलब उनमें खूब स्फूर्ति थी। ख़ाजा मीर दर्द, मीर सज्जाद, मीर अलीनक़ी काफ़िर तथा मसहफ़ी इत्यादिके यहाँ आना-जाना होता रहता था।

मुखातिब जिससे दिले बेतावको तसल्ली होती, नहीं मिला। मैंने दिलमें कहा—“सुभानअल्ला ! यह वह शहर है जिसकी हर गली, कूचेमें आरिफ़े कामिल, फाज़िल, शायर, मुंशी, दानिशमंद, मुतकल्लिम, हकीम, सूफ़ी.... दरवेश और खानकाह, मेहमांसराएँ, मकान और बाग़ मिलते थे। आज वहाँ कोई ऐसी जगह नहीं मिलती कि कुछ देर खुशीसे बैठूँ और कोई आदमी ऐसा नहीं मिलता कि उससे बातें करके लुत्फ़ उठाऊँ। सारा शहर एक बीराना है जिससे एक वहशत टपकती है। मैं चार माह आगरेमें रहा। चलते वक्त बड़ी हसरत हुई....।”

मैं पहले लिख चुका हूँ कि 'मीर' आरम्भसे ही बड़े तुनुकमिजाज थे। जब उनका काव्योत्कर्ष हुआ वह दिल्ली पर छा गये तथा दूर-दूर तक उनकी प्रसिद्धि हो गयी। इससे उनके स्वाभिमानने अहंकारका रूप धारण कर लिया। दूसरे शायरों पर फबतियाँ कसने लगे। इससे काफ़ी नाराज़ी फैली। यहाँ तक कि धीरे-धीरे लोगोंने इनसे मिलना-जुलना छोड़ दिया, बल्कि बहुतसे लोग इनके विरुद्ध हो गये। लोगोंने इनके खिलाफ़ कहना और लिखना भी शुरू कर दिया। 'बक्ता' का एक शेर देखिए, जिसमें इस विरोधकी झलक है :—

पगड़ी अपनी सँभालियेगा 'मीर'
और बस्ती नहीं य दिल्ली है।

दिल्लीकी बर्बादी, जीविका की कठिनाई, साथियोंकी कनाराकशी तथा शायरोंमें बढ़ते हुए विरोधके कारण इनका दिल और टूट गया। बाहर निकलना छोड़ दिया। खुद लिखते हैं :—

“फ़कीर इन अय्याम^१में खानानशीन^२ था। बादशाह अक्सर तलब फर्मते^३ थे मगर मैं न गया। अबुलक़ासिम खाँ, सूबेदार कश्मीर मेरे साथ बहुत सलूक करता था। मैं कभी-कभी उसकी मुलाकातको जाता था, और बादशाह भी कभी-कभी कुछ भेज देते थे।”

शेरोंमें भी इस स्थितिकी झलक है :—

मार साहबको देखिए जो बने,
अब बहुत घरसे कम निकलते हैं।

×

×

×

क्या कहें मीर जी हम तुमसे मआश अपनी गरज़,
ग़मको खाया करे हैं लोहू पिया करते हैं।

१. दिनों। योमका बहुवचन। २. घरमें रहने वाला। ३. बुलाते

मनमें बार-बार दिल्ली छोड़नेकी इच्छा भी होती थी पर साधन-हीन होनेसे विवश थे। फिर जाते तो कहाँ जाते ? अकबराबादकी वही हालत थी। दिल्लीका पतनकाल था। बार-बार उसकी इज्जत लुटती थी। कल क्या होगा, कोई जानता न था। दक्षिणकी ओर जानेमें लम्बा सफ़र था। ले देके रह गया था लखनऊ, कभी-कभी उधर ही ध्यान जाता था।

संयोग कहिए या 'मीर' का भाग्य, वजीरुलमुल्क नवाब आसफ़उद्दौला को एकाएक इनका ख्याल आया। उन्होंने नवाब सालार जंग और उनके छोटे भाई इसहाक खाँ नजीमुद्दौलासे मीरका जिक्र किया और फर्माया कि अगर मीर मोहम्मद तक़ी यहाँ आ जायें तो अच्छा है। उन लोगोंने निवेदन कियाकि अगर नवाब साहब राह खर्चके लिए कुछ हुक्म कर दें तो मीर साहब यहाँ आ सकते हैं। राह खर्च मिल गया। और उन लोगोंने इन्हें लिख दिया कि श्रीमन् नवाब साहब याद करते हैं, जिस तरह हो सके आप यहाँ आ जाइए। दिल्लीकी लड़ाइयों, अशान्ति, अव्यवस्था, आर्थिक कष्टसे यह ऊबे हुए थे ही, खत मिलते ही लखनऊ जानेके लिए तैयार हो गये। यद्यपि दिल्ली उनके प्राणोंमें बसी हुई थी और मरते दम तक बसी रही परन्तु चाह कर भी वहाँ रहनेका साधन न होनेसे इन्हें उसे छोड़ना ही पड़ा।

आँसू भरे हुए और यह कहते हुए कि 'रुखसत ऐ अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं' दिल्लीसे रवाना हुए। पहला वतन अकबराबाद बचपनमें ही

लखनऊ छूट गया था, अब बुढ़ापे में दूसरा वतन और
आगमन प्यारा शहर दिल्ली भी छूट गया। उन्होंने स्वयं
लिखा है :—

“चूँकि खुदा का यही मंशा था, मैं बे यार व मददगार बग़ैर क़ाफ़ले और रहबर^१के फर्रुखाबादके रास्तेसे गुज़रा। वहाँके रईस मुज़फ़्फ़र जंग थे। उन्होंने हरचन्द^२ चाहा कि कुछ रोज़ वहाँ ठहर जाऊँ मगर मेरे दिलने

कबूल न किया। दो रोज़के बाद खाना होकर मंज़िले मक़सूद पर पहुँच गया।”

लखनऊमें पहिले सालार जंगके यहाँ गये। उन्होंने बड़ी आव-भगत की और नवाबसे कहला भेजा। उन दिनों लखनऊमें मुर्गोंकी लड़ाईका बड़ा जोर था; जहाँ देखो मुर्गोंकी पालियाँ हो रही हैं। संयोगकी बात कि नवाब एक दिन मुर्गोंकी लड़ाई देखने आये। मीर भी वहाँ मौजूद^१ थे। एकाएक नवाबकी नज़र इन पर पड़ी। पूछा कि क्या आप मीर तक्की मीर हैं। आसिफ़ुद्दौला शिष्टाचार, सम्यता और प्रेमकी मूर्ति थे। मालूम होते ही गले लगे और अपने बैठनेकी जगह ले गये। अपना कुछ कलाम^२ सुनाया; ‘मीर’ को अच्छा लगा, उन्होंने खुलकर प्रशंसा की। उन्होंने मीरसे भी कुछ सुनानेकी फर्माइश की। अपनी एक ग़ज़लके चंद शेर इन्होंने सुनाये। जब चलने लगे तो नवाब सालार जंगने कहा कि अब मीर साहब, आपके आदेश के अनुसार, हाज़िर हो गये हैं। उन्हें कोई जगह दे दी जाय। वज़ीरुल्मुल्क आसिफ़ुद्दौलाने कहा—मैं कुछ नियत करके आपको इत्तिला^३ कर दूँगा। दो तीन दिन बाद याद फर्माया। हाज़िर हुए और एक क़सीदा पढ़ा। उसी दिनसे वहाँ नौकर हो गये। तीन सौ रुपये मासिककी वृत्ति बाँध दी गयी और यह सम्मान और आरामकी ज़िन्दगी बिताने लगे।

उपर्युक्त विवरणसे मालूम होता है कि ‘मीर’ बड़े आदरपूर्वक लखनऊ बुलाये गये थे, और जैसा ‘मीर’ ने खुद लिखा क्या ‘आज़ाद’ का बयान ग़लत है? है कि आनेके बाद वह सालारजंगके पास पहुँचे थे। पर मुहम्मद हुसेन ‘आज़ाद’ ने अपने ‘आबेहयात’ में लिखा है :—

“.....इसलिए १७७६ ई०* में दिल्ली छोड़नी पड़ी। जब लखनऊ चले तो सारी गाड़ीका किराया भी पास न था। नाचार एक शख्सके साथ शरीक हो गये और दिल्लीको खुदा हाफ़िज़ कहा। थोड़ी दूर आगे चलकर उस शख्सने कुछ बात की। यह उसकी तरफ़से मुँह फेरकर हो बैठे। कुछ देरके बाद फिर उसने बात की। मीर साहब चींबची^१ होकर बोले कि साहब क़िबला^२ आपने केराया दिया है, बेशक गाड़ीमें बैठिये मगर बातोंसे क्या तअल्लुक^३ ?” उसने कहा—“हज़रत ! क्या मुज़ायका^४ है, राहका शग़ल है, बातोंमें ज़रा जी बहलता है।” मीर साहब बिगड़कर बोले—“आपका शग़ल है, मेरी ज़बान खराब होती है।” §

*‘गुलशने हिन्द’ और ‘गुलज़ारे इब्राहीमी’ दोनोंमें इनके लखनऊ जानेका समय सन् १७८२ ई० दिया हुआ है। स्पष्ट लिखा है कि उस समय सौदाकी मृत्यु हो चुकी थी। सौदा १७८० ई०में मरे थे। मीर हसनने भी अपने तज़किरेमें १७८० में मीरके दिल्लीमें होनेकी बात लिखी है। इससे १७-८२का समय ही ठीक जान पड़ता है।

§ सआदत अलीखाँ नासिरने अपने ग्रन्थ ‘तज़किरा खुश मार्कए ज़ेबा’ में भी, ज़रा परिवर्तित रूपमें इस घटनाका ज़िक्र किया है :—

“जब मीर साहब अकबराबादसे पूरबको चले, हस्ब इत्तफ़ाक एक बनियेके साथ गाड़ीमें सवार हुए मगर वक्त सवार होनेके कुछ रात बाक़ी थी। जब रोज़ रोशन हुआ और सूरत उसकी देखी, मुँह अपना उधरसे फेर लिया और लखनऊ तक उसकी तरफ़ मुँह करके न बैठे। सुभान-अल्ला ! क्या आली दिमाग़ लोग थे कि ज़रूरतमें भी नागवारको ग़वारा न करते थे।”

१. चिढ़ना। २. बड़ोंके प्रति सम्बोधनका ढंग। ३. सम्बन्ध। ४. हर्ज।

“लखनऊ पहुँचकर, जैसा मुसाफ़िरोँका दस्तूर^१ है, एक सरायमें उतरे । मालूम हुआ, आज एक जगह मुशायरा है । रह न सके । उसी वक्त ग़ज़ल लिखी और मुशायरेमें जाकर शामिल हुए । इनकी वज़अ^२ क़दीमाना^३ खिड़की दार पगड़ी, पचास ग़ज़के घेरका पाजामा, एक पूरा थान पिस्तौलिका कमरसे बँधा, एक रूमाल पटरीदार तह किया हुआ.....नागफनीकी अनीदार जूती जिसकी डेढ़ बालिस्त^४ ऊँची नोक, कमरमें एक तरफ सैफ़र यानी सीधी तलवार दूसरी तरफ़ कटार—“गरज़ जब दाखिल महफिल^५ हुए तो वह शहर लखनऊ नये अन्दाज़^६, नयी तराशों^७ बाँके टेढ़े जवान जमा । इन्हें देखकर सब हँसने लगे । मीर साहब बेचारे गरीबुल वतन^८, ज़माने^९के हाथ पहिले ही दिल शिकस्ता^{१०}, और भी दिलतंग^{११} हुए और एक तरफ़ बैठ गये । शमअ^{१२} इनके सामने आई तो फिर सबकी नज़र पड़ी और बाज़ अशखासने^{१३} पूछा कि हुज़ूरका वतन कहाँ है ?” मीरने तीव्र वेदना भरे स्वरमें पढ़ा—

क्या बूदो बाश^{१४} पूछो हो पूरबके साकिनो^{१५} ।

हमको गरीब जानके हँस-हँस पुकारके ॥

दिखी जो एक शह था आलमे^{१६} में इन्तखाव^{१७} ।

रहते थे मुन्तखब^{१८} ही जहाँ रोज़गार^{१९} के ॥

१. ढंग, नियम । २. रूपरंग । ३. पुरातन । ४. वित्ता । ५. सभामें प्रविष्ट । ६. ढंग । ७. काट । ८. जिसका वतन छूट गया हो । ९. युग । १०. मन्महृदय । ११ खिन्न । १२. मोमबत्ती, दीपक । पुराने मुशायरोँमें हर शायरके सामने शमअ लाई जाती थी, तब वह ग़ज़ल पढ़ता था । १३. कुछ व्यक्तियों । १४. रहन-सहन । १५. निवासियों । १६. संसार । १७. प्रसिद्ध । १८. चुने हुए । १९. युग ।

उसको फलकने लूटके वीरान कर दिया ।
हम रहनेवाले हैं उसी उजड़े दियार^१ के ॥

सबको मालूम हुआ । लोगोंने माफ़ी माँगी । सुबह होते-होते मशहूर हो गया कि मीर साहब तशरीफ़ लाये हैं ।*

इस बयानमें और 'मीर' तथा दूसरोंके बयानमें विरोध मालूम होता है । एकका कहना है कि राह खर्च भेजकर आसफ़उद्दौलाने मीरको बुलवाया और वह सालार जंगके पास पहुँचे, दूसरा बयान ऊपर दिया गया है कि कैसी बुरी हालतमें लखनऊ आये । पर विचार करने पर मुझे दोनों विवरणोंमें कोई विशेष विरोध नहीं जान पड़ता । दिल्लीमें मीर साहबकी आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गयी थी । ऐसे वक़्त राह खर्चमेंसे, बहुत मुमकिन है, कुछ हिस्सा दिल्लीमें ही खर्च हो गया हो, लोगोंका हिसाब-किताब करनेमें । दूसरी बात यह कि बिल्कुल संभव है कि पहले वह सरायमें जाकर ठहरे हों और दूसरे दिन सफ़रकी थकान मिटाने और कपड़े वगैरह बदलनेके बाद सालार जंगके यहाँ गये हों । हाँ, यह जरूर है कि 'आज़ाद' ने नमक मिर्च मिलाकर घटनाको रंगीन बनानेकी कोशिश की है ।

लखनऊमें मीर साहबकी बड़ी इज्जत हुई । लोगोंने उनको हाथों हाथ लिया । दरबारमें उनका बड़ा सम्मान था और नवाब वज़ीर उनको

लखनऊ निवास

इतना मानते थे कि यात्रामें भी साथ रखते थे ।

कई बार तराईकी ओर शिकारमें ले गये ।

आर्थिक दृष्टिसे भी लखनऊमें जो सुविधा इन्हें मिली, वह कभी नहीं मिली थी । यह इनका सौभाग्य है कि इन्हें तीन सौ रुपये मासिक मिलते थे, जब 'शालिब' तकको दिल्ली और रामपुरसे इतनी बड़ी रक़म मयस्सर न हुई ।

१. आकाश (उर्दू काव्यमें समस्त विपत्तियोंका मूल आकाश है ।)

२. शहर, देश ।* आबेहयात पृष्ठ २०५-२०६ ।

‘जौक’ को तो आरम्भमें सिर्फ़ चार रुपये महीना वजीफ़ा मिलता था, बादमें पाँच और सात रुपये हुए और अन्तमें सौ रुपये मिलने लगे थे। ‘मसहफ़ी’ की हालत भी बहुत खराब थी।

लखनऊने हर तरह इनका सम्मान किया। आसफ़ उद्दौलाके बाद नवाब सआदत अलीख़ाने भी इनको तनखाह जारी रखो। चारों तरफ़ दिल्लीका जादू इन इनकी धूम थी; लोग इनकी इज्जत करते थे पर अपने अभिमानी स्वभावके कारण इनकी ज़्यादा दिन किसीसे न बनी फिर गरीबीकी मारसे यह लखनऊ आ तो गये थे पर दिल्लीका जादू इनके सिरसे कभी न उतरा। उस उजड़े दयारमें एक विचित्र आकर्षण था जो भीरको बराबर खींचता था इसलिए रुपया-पैसा, सामान सब पाकर भी लखनऊमें यह कभी दिलसे खुश न रहे। लोगोंकी तारीफ़को ‘असमझवार सराहिबो’ समझते थे।* उनके काव्यमें इस शिकायतकी झलक बार-बार मिलती है—

रही न गुफ़्त^१ मेरे दिलमें दास्ताँ मेरी।

न इस दयारमें समझा कोई ज़बाँ मेरी ॥

×

×

×

बहुत कुछ कहा है करो मीर वस।

कि अल्लाह बस और बाक़ी हवस ॥

जवाहर^२ तो क्या-क्या दिखाया गया।

खरीदार लेकिन न पाया गया ॥

×

×

×

१. व्यक्त, कथन। २. रत्न।

*मसहफ़ीने लखनऊके एक मशायरेके बारेमें लिखा है—“वज़मे नाम-हरम व मर्दुम हमा बेगाना तमाम।

मुताए^१ हुनर फेर कर ले चलो ।
बहुत लखनऊमें रहे घर चलो ॥

× × ×

दिल्लीकी प्रशंसा करते नहीं अघाते—

हप्रत अकलीमें^२ हर गली है कहीं ।
दिल्लीसे भी दयार होते हैं ॥

× × ×

दिल्लीके न थे कूचे^३ औराके मुसव्विरें^४ थे ।
जो शक नजर आई तस्वीर नजर आई ॥

× × ×

दिल्ली थी तिलिस्मात कि हर जागह मीर ।
इन आँखोंसे आह हमने क्या-क्या देखा ॥

× × ×

दिलो दिल्ली दोनों हैं गचें खराब,
पै कुछ लुप्त उस उजड़े नगरमें है ।

एक जगह अत्यन्त व्यथापूर्ण एवं करुणाद्रि स्वरमें वायुको दूत बना
दिल्लीवालोंके पास सन्देश भेजते हैं:—

ऐ सब^५ गर शहके लोगोंमें हो तेरा गुजार ।

कहियो हम सहरानवदों^६ का तमामे हाले ज़ार^७ ।

१ ख़ाके देहलीसे जुदा^८ हमको किया एकबारगी ।

आसमाँको थी कुदूरत^९ सो निकाला यों गुबार ।

१. पूंजी । २. सप्तदेश । ३. गलियाँ । ४. चित्रकारके पृष्ठ ।

५. प्रभाती वायु । ६. मरुवासियों, वनवासियों । ७. बुरा हाल ।

८. अलग । ९. मनोमालिन्य ।

इतना ही नहीं, लखनऊसे एक प्रकारकी घृणा-सी थी। देखिये:—

खराबा दिल्लीका दहचन्द^१ बेहतर लखनऊसे था।

वहीं मैं काश मर जाता सरासीमा^२ न आता यों ॥

× × ×
बरसोंसे लखनऊमें अक्रामत^३ है मुझको लेक^४।

याँके चलनसे रखता हूँ अज़मे सफ़र^५ हनोज़^६ ॥

× × ×

आबाद उजड़ा लखनऊ चुरादों^७ से अब हुआ।

मुश्किल है इस खराबेमें आदर्मकी बूदोबाश^८ ॥

यद्यपि वह अन्तिम दिन तक लखनऊमें रहे और वहींकी मिट्टीमें समाधिस्थ हुए पर अन्त तक दिल्लीका आकर्षण इन पर छाया रहा। जैसे वहाँकी उजड़ी ज़मीन इन्हें पुकार रही हो।

सामान्य दृष्टिसे देखें तो उन्हें लखनऊमें कोई तकलीफ़ न थी। दिल्लीकी तरह यहाँ उनका जीवन अनिश्चित न था। आरामसे गुज़रती थी। उनका इस आकर्षणका कारण यश भी फैला हुआ था। लोग उनकी प्रशंसा भी करते थे तब क्या कारण है कि इनका मन दिल्लीकी ओर दौड़ता था और लखनऊ इनके दिलको विजय न कर सका था। मनोवैज्ञानिक अध्ययनसे ये सब गुत्थियाँ भी खुल जाती हैं:—

१. लखनऊमें उनके काव्यके प्रशंसक तो थे पर उसके पारखी न थे।

लोग ऊपरसे प्रशंसा करते थे, समझकर नहीं।

१. दसगुना। २. व्यग्रचित्त, परीशान। ३. निवास। ४. लेकिन, किन्तु। ५. प्रवासका संकल्प। ६. अबतक। ७. उल्लुओं। ८. आदमी। ९. रहन-सहन।

२. मीर पुरानी तर्जके आदमी थे । जीवनमें गंभीरताके अनुरागी, इसलिए लखनऊकी काट-छाँट और छेलापन उन्हें बिलकुल न भाता था । लखनऊकी सम्यतामें रंगीनी और रूप था पर दिलकी गर्मी न थी । आँखें उससे ठंडी होती थीं पर दिल नहीं । वह बाहरी चमक-दमक वाली सम्यता थी ।
३. उजड़ी दिल्ली इनके मानसिक जगत्के अधिक अनुकूल थी । इनका टूटा, उजड़ा, लुटा दिल, इनकी सारी व्यथारंजित जिन्दगी दिल्ली से मेल खाती थी क्योंकि वह उस खिजांका प्रतीक थी जो इनकी जिन्दगी पर सदाके लिए छा गयी थी ।
४. वह लखनऊकी भीड़के बीच भी अपनेको सदा अकेला अनुभव करते थे । वह उस पौधेकी भाँति थे जो एक प्रतिकूल जलवायुमें रोप दिया गया हो ।
५. जिस प्रेम और सौन्दर्यका वर्णन सुनकर लखनऊके दिलकी कली खिल उठती थी वह हलका, चूमाचाटी वाला प्रेम था, उसमें गहराई न थी । उसमें वह दर्द न था जो जिन्दगीकी घाटियोंको हरा-भरा रखता है; उसमें वह आग न थी जिसमें जलकर आदमी नवयौवन प्राप्त करता है; उसमें वह सूक्ष्म दृष्टि न थी जो जगत् एवं जीवनके प्रश्नोंके भीतर प्रवेश करती है ।
६. लाख लोग तारीफ़ करते हों पर 'मीर' को सुनकर नहीं बल्कि जुर्रतको सुनकर लखनऊ वाले खिल उठते थे । मीर जिन मूल्योंके लिए अमर हैं जुर्रत उनका विनाश-साधक था । 'मीर' के दिलकी व्यथाभरी पुकारें जुर्रतके चूमा-चाटीमें बदल जाती थीं ।*

* 'तजकिरा करीमुद्दीन' (पृष्ठ २०६-२०७) में लिखा है :—

“मजलिसे शुअरा मिर्जा मोहम्मद तक़ी खाँ तरक्कीके घर मुनअक़द हुई । जुर्रतकी बहुत तारीफ़ हुई । जुर्रत मीर तक़ी 'मीर'से दादखाह अपने

७. यौवन कालमें 'मार' उन्मादके रोगी रह चुके थे। रोग अच्छा हो गया था पर अपना असर छोड़ गया था। उसने इनकी अकड़ और तुनुक मिजाजीको और बढ़ा दिया था। अपनी झुंझलाहटमें बार २ उन्हें दिल्ली याद आती थी।

वस्तुतः मीरके जीवनकी सम्पूर्ण प्रेरणाएँ दिल्लीसे प्राप्त हुई थीं। सम्यताके उनके मानदण्ड, सांस्कृतिक मूल्यांकन, रंग-ढंग, रहन-सहन, शिष्टाचार, सब दिल्लीसे उन्हें प्राप्त हुए थे। इस उजड़े नगरका शताब्दियोंका अतीत आदमीको कुछ शिक्षा देता था। उसने न जाने कितने साम्राज्योंकी समाधि देखी थी; इस विनाश-परम्पराने जीवनकी जड़ोंको अन्तःस्थ कर दिया था, वह ज्यादा गहराईमें चली गयी थीं इसलिए एक प्रकारकी आध्यात्मिक दृष्टि लोगोंमें थी। यहाँ लखनऊका हाल दूसरा था। यह नगरी उस रमणीके समान थी जो यौवनकी पहलौ अँगड़ाईमें हो और उसकी आँधी उसे उड़ाये लिये जा रही हो। डा० फारुकीने भी यही बात लिखी है—

“मीरके लिए लखनऊ जाना एक तहजीबी सानहा^१ से कम न था। दिल्ली लाख उजड़ चुकी थी लेकिन वह एक अज्जीमुश्शान^२ तहजीबकी निशानी थी”...सल्लनत मुगलियाके कमजोर हो जाने और दौलतमन्दीके मिट जानेसे लखनऊको तरक्की करनेका मौका मिला और दिल्लीकी सारी

अशआरका हुआ। मीरने दो-चार वार खातिरदारी की। जब देखा कि मग़ज़ उसका चल निकला है, कहा कि जब तुम बर्दी जद्दो कद पूछते हो, लाचार कहता हूँ—कैफ़ियत इसकी यह है कि तुम शेर तो कहना नहीं जानते हो अपनी चूमाचाटी कह लिया करो।”

हकीम क़ुदरत उल्ला क़ासिमने ज़ुरतको लखनऊके कवियोंका शिरमौर लिखा है और इस घटनाको भी उद्धृत किया है।

१. सांस्कृतिक, सम्यतागत, दुर्घटना, २. ज्वलन्त, श्रेष्ठा।

रौनक^१ वहीं सिमट आई लेकिन अवघने बादशाहतके एलानके साथ तमद्दुन व मुआशरत^३ में अपने मजाकके मुताबिक इस्लाहे^५ कीं और इस बातकी पूरी कोशिश की कि देहलीकी तहजीबी क्रयादत^२ से भी छुटकारा मिल जाय चुनाञ्चे लिबास^४, वज्रअ क्रतअ^६, तराश-खराश, नशस्त व बर्खास्त^७, आदाबो इख्लाक^८ और शेरो अदब^९ में.....तब्दीलियाँ^{१०} हुई.....। मीर जिस जमानेमें लखनऊ गये हैं, दिल्ली सयासी^{११} और इक्रतसादी^{१३} मुश्किलात में घिरी हुई थी और आलम^{१४} यह था कि—

हर रोज़ नया क्राफ़ला पूरब को रवाँ है ।

लखनऊमें एक नई बिसात बिछाई जा रही थी, नई रवायतें कायम हो रही थीं ।.....मीरकी ज़ेहनी नशवोनुमा^{१५} देहलीमें हुई थी और उसकी तहजीबी क्रदरें^{१६} उनकी रूह^{१७} में दाखिल^{१८} हो चुकी थीं इसीलिए उनके यहाँ लखनवी माहौल^{१९} के खिलाफ़ रूअमल भी सख्त है ।”

यह हाल कुछ मीरका ही न था । देहलीकी सांस्कृतिक जलवायुमें पले जो भी शायर लखनऊ आये, सब कुछ ऐसा ही अनुभव करते थे । इस नये वातावरणमें उनका दम घुटता था; वे इसके अनुकूल अपनेको ढालनेमें असमर्थ थे । ‘मसहफ़ी’ का भी अनुभव ‘मीर’ ही-जैसा था । उन्होंने लिखा है :—

यारब शहर अपना यों छुड़ाया तूने ।

वीरानेमें मुश्क़ो ला बिठाया तूने ॥

१. शोभा, २. संस्कृति, ३. जीवन-प्रणाली, ४. संशोधन, ५. बन्धन, ६. वेशभूषा, ७. रंग-ढंग, ८. उठना-बैठना, ९. शिष्टाचार, १०. काव्य और साहित्य, ११. परिवर्तन, १२. राजनीतिक, १३. आर्थिक, १४. हालत, १५. बौद्धिक निर्माण, १६. सांस्कृतिक मूल्य, १७. आत्मा, १८. प्रविष्ट, १९. वातावरण ।

मैं और कहाँ यह लखनऊकी खिलक़त ।

ऐ वाय यह क्या किया खुदाया तूने ॥

दिल्लीवालोंको अपनी ज़बान पर अभिमान था । वे दिल्लीके बाहर-
वालोंको इस मामलेमें नीचा समझते थे । 'मसहफ़ी' लिखते हैं :—

दिल्ली नहीं देखी है, ज़बाँदाँ य कहाँ हैं ?

पुनः लिखते हैं :—

सहराइयाने पूरब क्या जानते हैं इसको ।

ऐ मसहफ़ी जुदा है अन्दाज़ इस ज़बाँका ॥

मीरका अपनी भाषा पर अभिमान डेखिए—

अव्वल तो मैं सनदेँ हूँ, फिर य' मेरी जुबाँ है ।

×

×

×

यह हमारी ज़बान है प्यारे ।

बक़ौल उनके लखनऊमें उनकी ज़बानको समझनेवाले न थे—

किस-किस अदासे रेखते मैंने कहे वले ।

समझा न कोई मेरी जुबाँ इस दयारमें ॥

'मीर' की जन्म-तिथिके सम्बन्धमें काफ़ी मतभेद है । इतना तो निश्चित है कि पैदा अकबराबाद (आगरा) में हुए थे । बादमें कठिनाइयोंके

जन्म-मृत्यु

कारण दिल्ली गये ।* १७१४ से १७३२ तकके बीचमें कभी इनका जन्म हुआ होगा । इन्होंने लम्बी उम्र पाई । कोई १००, कोई ९० लिखते हैं । पर मृत्यु-तिथिके प्रमाण निश्चित हैं । १२२५ हिजरी (१८१२ ई०) शोबानकी २० तारीख

१. जनता । २. प्रमाण ।* नकातुश्शुअरामें 'मीर' ने स्वयं लिखा है :—“बतन अकबराबाद अस्त । बसबब गर्दिशे लैलो निहार अज़चन्दे दर शाहजहाँबाद अस्त ।” (पृष्ठ १६३) ।

शुक्रवारको शामके वक्त इनकी मृत्यु लखनऊमें हुई । नासिखने जो तारीख कही ९ है; उससे भी यही प्रमाणित होता है ।

बूढ़े हो गये थे । निराशा और अन्तर्वेदना तेजीसे उन्हें खा रही थी । आँखें कमजोर हो गयीं थीं; और भी छोटे-मोटे एकाध रोग लग गये थे पर

अन्तिम दिन ऐसे अशक्त न हुए थे कि किसी पर निर्भर करते हों या खाट पर पड़े हों । अपने सब काम अपने

हाथों करते थे । काव्य-गोष्ठियोंमें भी बराबर शामिल होते थे । पर माम्य ने पलटा खाया । एक पर एक चोट उनको लगती गयी । पहिले उनकी लड़कीकी मृत्यु हुई । दूसरे ही साल एक लड़का मरा और तीसरे साल उनकी पत्नी चल बसीं । इन घटनाओंने उनका दम तोड़ दिया; भग्न हृदय हो गये । बुढ़ापेमें कोई अपना न रहा । दुःखसे पागल हो गये । बाहर निकलना छोड़ दिया; मशायरों तथा दूसरी रंगीन मजलिसोंमें जाना छोड़ दिया । दिल्लीकी जीवन-प्रणाली* यों ही लखनऊमें बदल गयी थी, अब

९ तारीख कहना—उर्दू और फारसी साहित्यमें यह परम्परा है कि जब कोई प्रसिद्ध कवि, साहित्यकार वा महान् पुरुष परलोकवासी होता है तो उसका कोई विद्वान् या कवि भक्त कुछ ऐसे काव्यात्मक पदकी रचना करता है जिसमें एक ओर तो उसके गुणोंका सूत्रवत् वर्णन रहता है और दूसरी ओर उन अक्षरोंके मूल्य (ध्यान रहे कि इनके यहाँ प्रत्येक अक्षरका सांख्यिक मूल्य नियत है) का योग करने पर वह तिथि निकलती है जब मृत्यु-घटना घटी रहती है । 'नासिख' ने 'मीर' की जो तारीख कही, वह यों है :—'बावेला मर्दे शहे शायरा ।'

* "नागाह दर मुहल्ला रसीदम कि दर आनजामी मान्दम । सोहबत मी दास्तम । शेर मीखान्दम । आशकाना मी जीस्तम । इश्क बाखुशक्रदा मी बाल्तम । ऐशान राबुलन्द मी अन्दास्तम । बा सिलसिला मूर्या मी बूदम । परस्तिश न कोर्या मी नमूदम । अगर दमे बेऐशा मी नशस्तम तमन्ना बर तमन्ना मी शिकस्तम । बज्म मी आरास्तम । खूबारा मी स्वास्तम । मेहमानी मी करदम । जिन्दगानी मी करदम ।"

निराशा और दुःखके कारण वह समाप्त-सी हो गयी। श्वेत-शायरीका मजा भी जाता रहा; जीवन-प्रवाह शिथिल हो गया। वह स्वयं अनुभव करने और कहने लगे:—

लुप्त सखुन^१ भी पीरी^२में रहता नहीं है मीर,
अब शेर हम पढ़े हैं तो वह शब्दोमद नहीं।

कुछ परलोककी भी फ़िक्र हुई। ख्याल आया, अब ऊँची बातोंकी ओर, पुष्प कार्योंकी ओर ध्यान देना चाहिए। लिखते हैं:—

किसको दिमाग़े श्वेत सखुन जोफ़^३में कि मीर
अपना रहे हैं अब तो हमें बेशतर ख्याल।

×

×

×

बस बहुत वक्त किया शेर के फ़न में ज़ायो
मीर अब पीर हुए तर्क ख्यालात करो।

एक ओर यह अन्तर्वेदना, दूसरी ओर धीरे-धीरे रोगोंमें वृद्धि। यह बीमार पड़ गये। छाट पकड़ ली और छः मास तक बिस्तरपर पड़े रहे। जितने भी राजचिकित्सक और प्रसिद्ध हकीम थे, इनके दोस्तों और प्रशंसकोंमें थे। अन्त्रशूल हो गया था और वह बढ़ता जाता था। सबकी राय हुई कि ऐसी दवा देनी चाहिए कि क्रब्ध न रहे। उन्हें एक रेचक दवा दी गयी। नियतिका खेल देखिए कि जिस दवाको चिकित्सकोंने लाभके लिए दिया था वही उनके लिए घातक हो गयी। एक-एक दिनमें डेढ़-डेढ़ सौ दस्त आने लगे। रोग और मौतने साँठ-गाँठ की और एक सच्चा शायर सदाके लिए सो गया। महल्ला सिठिट्ठीमें यह रहते थे। अब यह महल्ला नहीं है पर उन दिनों काफ़ी आबाद था। इसी मुहल्लेमें

१. काव्यानन्द । २. वृद्धावस्था । ३. दुर्बलता । ४. नष्ट ।

उर्दूके प्रसिद्ध कवि और बेजोड़ मसिया-लेखक मीर अनीसका भी मकान था। यह मुहल्ला गोमतीके दक्षिणी किनारेपर, आज जहाँ डालीगंज है उसीके समीप, बसा हुआ था। इसमें इसी नामका एक बाजार भी था जहाँ सूतका क्रय-विक्रय होता था।

दूसरे रोज़ दोपहरको अखाड़ा भीम नामके एक प्रसिद्ध कब्रिस्तानमें दफनाये गये। लगभग ४०० आदमियोंने इनके जनाजेकी नमाज़ पढ़ी थी। यह कब्रिस्तान गोलागंजमें रेलकी पटरीके बराबर दूर तक चला गया है। यहाँ टूटी-फूटी बहुतेरी कब्रें हैं; इन्हींमें कोई 'मीर' की भी होगी। शायद उन्हें भविष्यका आभास था, तभी तो उन्होंने खुद कहा है :—

मत तुर्बते^१ मीरको मिटाओ
रहने दो गरीबका निगाँ तो।

मृत्युके ठीक पहिले उन्होंने यह शेर पढ़ा—

साज़ पेच आमादा^२ है सब काफ़लेकी तैयारी है।
मजन्नू हमसे पहिले गया है अबके हमारी बारी है ॥

मीर साहबके तीन सन्तानें थीं—दो बेटे, एक बेटो। तीनोंमें काव्य-रचनाकी प्रतिभा थी। बड़े बेटे मीर अस्करी उर्फ़ मीर कल्लू बड़ी मस्त तबीयतके आदमी थे और पहले 'राज़', फिर 'अर्श' उपनामसे कविता करते थे इनका एक दीवान भी है जो पहिले छपा था पर अब दुर्लभ है। यह अपने पिताके ही शिष्य थे और बहुत अच्छी कविता करते थे। कहीं-कहीं जबानकी सफ़ाईमें अपने पितासे भी आगे हैं। "उम्र भर न किसी रईसकी दरबारदारी की, न किसीकी शालमें क़सीदा लिखा। फ़ुकू व फ़ाफ़ा^३ में बसर कर दी^४। बापकी तरह नाज़ुक थे।" * काफ़ी नाम कमाया।

१. कब्र, २. तैयार, ३. साधुता व उपवास, ४. बिता दी।

* लाला श्रीराम (खुमखानए-जावेद)

१८६७ ई० में मृत्यु हुई और लखनऊमें ही रकाबगंज मुहल्लेमें दफन हुए। इनके शिष्य शेख मोहम्मदजानने इनके बारेमें लिखा है :—

“आप मोतवस्तुलकामत^१ दोहरे जिस्मके थे। सांवल रंग, कुर्ते पहिने, कभी सिर पर पगड़ी और कभी टोपी, अफीम पीनेके आदी थे और हुक्का कभी हाथसे न छूटता; मुशायरों और महफिलोंमें भी साथ लाते। मशायरोंमें तरतीबे ख्वांदगी के आदी न थे, जब जीमें आता, साहब खाना^३ की इजाजत लेकर अपनी गज़ल सुना देते और हुक्का उठाकर रखसब्ब^४ हो जाते।”

इनमें मीरके अनेक गुण थे। मीर इन्हें मानते भी बहुत थे। मीर जब ज्यादा वृद्ध और दुर्बल हुए तो एक रोज़ इन्हें बुलाकर कहने लगे—

“बेटा, हमारे पास माल ब मुताए दुनियासे तो कोई चीज़ नहीं है जो आइन्दा तुम्हारे काम आये लेकिन हमारा सरमायए-नाज़^५ कानूने ज़बाँ ६ है जिसपर हमारी ज़िन्दगी और इज्जतका दारोमदार^६ रहा, जिसने हमको खाके ज़िल्लत^७ से आसमाने शोहरत ९ पर पहुँचा दिया। इस दौलतके आगे हम सलतनते आलम^{१०} को हेच^{११} समझते रहे तुमको भी अपने तकमें यही दौलत देते हैं।”

बेटेने बापकी इस दौलतको न केवल ग्रहण किया बल्कि उसमें वृद्धि की। ज़बानका बहुत ख्याल रखा। बस इनकी ज़बान देखिये—

गर हो न खफ़ा^{१२} तो कह दूँ जी की।

इस दम तुम्हें याद है किसी की।

१. मझोले क्रदके, २. पढ़नेके क़म, ३. अध्ययन, मीर मजलिस।
४. विदा, ५. गौरवपूर्ण पूंजी, ६. भाषाके नियम, ७. निर्भरता,
८. तुच्छ-भूमि, ९. प्रसिद्धिके आकाश, १०. संसारका राज्य, ११. तुच्छ,
१२. क्रुद्ध।

गुल्लगीर^१ ने काट कर सिरें शमअ^२
 पर्वाना^३ से शब जली कटी की ।
 तर्तबि कुहन^४ को वज़अ ऐ अर्श
 हमने दीवानमें नयी की ।

इनका एक शेर बहुत प्रसिद्ध है:—

आसिया^५ कहती है हर सुबह बा आवाज़ बुलन्द^६
 रिज्क^७ से भरता है रज्ज़ार्क^८ देहन^९ पत्थरके ।

मीर फ़ैज़ अली

‘मीर’ के दूसरे बेटेका नाम था—मीर फ़ैज़ अली । इनके नामपर मीरने फ़ैज़ मीर पुस्तक लिखी । इनके चन्द शेर नीचे दिये जाते हैं :—

न मानी तूने मेरी अपनी ही ज़िद बेवफ़ा रक्खी,
 करें हम किससे अब जाकर हमारी तूने क्या रक्खी ।
 ‘^{१०}कुदूरत जब न तब अन्दाज़से निकला ही की तेरे,
 हमारी खाक^{११} इस कूचे^{१२} में तूने कब सबा रक्खी ।
 बनाये सानये कुदरत^{१३} ने क्या-क्या फूल गुल यूँ तो,
 मेरे इस गुलबदनमें कुछ अदा सबसे जुदा^{१४} रक्खी ।

×

×

×

१. बत्ती काटनेवाला, २. मोमबत्तीका सिर, ३. पतंग, ४. पुराने क्रम, ५. पनचक्की, ६. ऊँची, तेज़, ७. भोजन, ८. दाता, ईश्वर, ९. मुँह, १०. मनोमालिन्य, रंजिश, ११. मिट्टी, १२. गली, १३. प्रकृति-निर्माता, १४. अलग ।

दौरमें साक्री^१ तेरे आ निकले हैं मैनोश^२ हम,
जाम^३ खाली दे है क्या ? इतने नहीं मदहोश^४ हम ।
बे-ज़बानीकी न पूछो वजह हमसे कोप्रतमें,
चोट कुछ ऐसी लगी दिल पर कि हैं खामोश हम ।

×

×

×

नहीं मालूम किस रश्के क्रमर^५ की राह तकते हैं,
कि सारी रात आँखोंमें कटा करती है तारोंको ।

‘मीर’ के एक लड़की भी थी जिसे वह बहुत प्रेम करते थे । शादीके थोड़े ही दिनों बाद उसका देहावसान हो गया । मीर खूब रोये और लिखा:—

अब आया ध्यान ऐ आरामेजाँ !^६ इस नामुरादीमें,
कफ़न देना तुम्हें भूले थे हम असबाबे शादीमें ।

कई ग्रन्थोंमें इनकी लड़कीका जिक्र मिलता है जो ‘बेगम’ के नामसे कविता करती थीं । ‘बेगम’ की एक ग़ज़लके चन्द शेर देखिए—

बरसों ख़मे गेसू^७में गिरप्रतार तो रक्खा,
अब कहते हो क्या तुमने मुझे मार तो रक्खा ।
कुछ बेअदबी^८ और शबेवस्ल^९ नहीं की,
हाँ यारके रुख़सार^{१०} पै रुख़सार तो रक्खा ।

१. पिलाने वाला, २. मद्यप, ३. सुरापान, ४. मूर्छित, ५. जिसे देख चन्द्रको ईर्ष्या हो, ६. प्राणोंके विश्राम, ७. अलककी चक़ता, ८. अशिष्टता, ९. मिलन-रात्रि, १०. कपोल ।

वह ज़िबह करे या न करे गम नहीं इसका,
 सर हमने तहे खंजरे खूँखार^१ तो रक्खा ।
 इस इश्ककी हिम्मतके मैं सद्के^२ हूँ कि 'बेगम',
 हर वक्त मुझे मरने पै तैयार तो रक्खा ।

कहीं-कहीं मिलता है कि मीरने बुढ़ापेमें शादी भी की थी । पर इसका कोई प्रमाण नहीं है ।



१. रक्त-पिपासु तलवारके नीचे । २. निछावर ।

‘मीर’ : चरित्र-पक्ष

किसी व्यक्तिके निर्माणमें अनेक संस्कार काम करते हैं। पहला स्थान तो उन संस्कारोंका है जो माँ-बापसे या आनुवंशिक परम्परा द्वारा सन्ततिको प्राप्त होते हैं। उसके बाद उस वातावरणकी बात आती है जिसमें बच्चा पलता और साँस लेता है। फिर प्रशिक्षण और बौद्धिक प्रगतिके लिए प्राप्त सुविधाओंकी बारी आती है। इसके बाद मित्र-मण्डली तथा कौटुम्बिक वातावरणका स्थान है जिसमें वह चलता-फिरता, खेलता और हृदयका रस प्राप्त करता है।

मीरको बचपनसे ही अपने पूज्य पिता और चचाकी उच्च भावभूमिमें रहने और सैर करनेका अवसर मिला था। ये दोनों ही संत प्रकृतिके

बचपनका

वातावरण

थे; दुनियासे ज्यादा सम्बन्ध न रखते थे; प्रेम-रस में डूबे हुए थे। प्रभुके ध्यानमें मस्त रहनेवाले; कभी-कभी उसी मस्तीमें रोते, बिलखते और सिर

धुनते थे। प्रियतमके विरहकी आगमें जलते थे; रात-दिन, खाते-पीते, उठते बैठते, चलते-फिरते उसीका ध्यान था। आदमियोंमें भी उसीकी छाया दिखाई देती थी। उदार, सन्तोषी, त्यागी, साम्प्रदायिक क्षुद्रताओंसे ऊपर उठे हुए उनमें सूफियोंकी सब विशेषताएँ थीं।

‘मीर’में जो स्थिरता, दृढ़ता, भौतिक सुखोंके प्रति लापरवाही, उच्च मूल्योंके प्रति निष्ठा, आत्म-नियन्त्रण है उसका स्रोत उनके पिता और चचा

पिता और

चचासे

प्राप्त पूँजी

ही हैं। दोनों इन्हें बहुत मानते थे। बचपनसे ही मीरमें एक अद्भुत आर्द्रता थी जिसे पिताने लक्ष्य किया था। इस प्रेमकी तड़पको देख कर ही पिताने एक दिन कलेजेसे लगाकर कहा था—

“ऐ सरमायए जान ! यह कौन-सी आग है जो तेरे दिलमें निहोई है ?” वह

सदा कहते रहते थे कि बेटा, इस संसारमें प्रेम ही एक सत्य है। उसीसे और उसीको लेकर सम्पूर्ण जगत् है। इसमें दिल खोना, प्रेममें निमज्जन ही मानवका गौरव है। यद्यपि 'मीर'की उम्र इन गूढ़ शिक्षाओंको समझने की न थी पर वह उनकी ओर खिंचते ही गये। इस तरह बचपनसे ही इनमें इसकी आग जल उठी थी,—वह आग जो जल कर फिर जन्म भर नहीं बुझी। यह दिन-दिन अन्तःस्थ होते गये; दिल दर्द और करुणासे पूरित होता गया। बाहरी टीम-टामसे ध्यान हटता गया। बचपनमें चचाके साथ अनेक दरवेशोंके पास जाते थे। वहाँ जो देखा, जो सुना वह इनके अन्तःमन पर बैठता गया।

एक ओर इस आन्तरिक संस्कृतिका लाभ उनको मिला, दूसरी ओर बचपनमें ही, उस संस्कृतिको पूर्णतः अपना बना लेनेके पूर्व ही इन पर पहाड़ टूट पड़ा। मुसीबतोंकी ऐसी आँधी आई कि यदि पिता चचाके प्रारम्भिक संस्कार इन्हें दृढ़ न रखते तो यह उसमें उड़ कर लापता हो जाते। पहिले चचा मरे, फिर पिता चल बसे। ऐसी मानसिक व्यथामें भी बड़े भाईने उपेक्षा एवं स्वार्थपरताका व्यवहार किया। जो लोग पिताके समय इन्हें हाथों हाथ रखते थे उन्होंने आँखें फेर लीं। दुनियाकी भीड़के बीच भी एक अजब वीरानापन इनके चारों ओर था। इस इकलपन, इस वीरानेपनकी छाया इनके समस्त काव्यमें है। यह बिना किसी पथ-दर्शक एवं यारदोस्तके सुनसान दुनियामें भटकनेको विवश हुए।

छोटी-सी उम्र, साथी कोई नहीं, हमदर्द कोई नहीं और जमाना ऐसा था कि बड़े-बड़े कलेजे वाले घरसे बाहर निकलते डरते थे। मुगलशक्तिका अधःपतन तीव्र गतिसे हो रहा था। दिल्ली, शान-शौकतकी दिल्ली, शक्तियों का केन्द्र दिल्ली, भारतकी शासनसत्ताका प्रतीक दिल्ली, मध्ययुगीन भारतीय सभ्यताका स्रोत दिल्ली झूलुंठिता थी। बे-आबरू, बर्बाद, लुटी हुई, अपहृता नारीके समान बाल छिटकाये, विधवा-सी पर वैधव्यके तेज एवं

प्रवित्रतासे हीन दिल्ली, जहाँ कोई किसीका न था, जहाँ आजका मित्र कलका दुश्मन था, जहाँ आज आलिंगन करने वाला मित्र कल कलेजेमें कटार भोंक देता था, दिल्ली डूब रही थी; रिक्तताके सागरमें डूबते हुए संध्या-कालीन सूर्यकी भाँति । अन्धकार घिरता आ रहा था । लोग अकेले राह न चलते थे । क्राफिलोंमें चलते थे और फिर भी लुटते थे । ऐसी अस्थिरताके युगमें सब प्रकारकी छायासे हीन, साधनहीन, अनाथ मीर जीविकाकी खोजमें उस दिल्लीकी ओर जा रहे हैं ।

उन मानसिक एवं शारीरिक विपत्तियोंकी कल्पना कीजिए जो बाप एवं चचाकी मृत्युके बाद इस बच्चे पर पड़ी होंगी । स्वभावतः उसका कलेजा कुम्हला गया, उसमें ऐकान्तिकता आई । अपने साथ और दुनियामें दूसरोंके साथ जो व्यवहार उसने होते देखा उससे उसका दिल बुझ गया । यौवन कालमें दुनियाकी रंगीनियों, चटक-मटक, उत्फुल्लता और मञ्जोंकी ओर आकर्षित होनेकी जगह एक प्रकारका गहरा सूनापन, दुनियासे अलहदगी इनमें आती गयी ।

यौवनमें प्रेम किया, उसमें भी असफलता ही हाथ लगी । इसलिए वह दुःख और घना होता गया । गंभीर विरह-दुःखसे इनका जीवन और उस जीवनसे निकलने वाला सम्पूर्ण काव्य भर गया ।

बाह्य एवं अन्तर्जगत्के इन अनुभवोंको भावनाकी तीव्रताके कारण काव्यमें व्यक्त करनेमें इन्हें अद्भुत सफलता मिली । इनमें वह शोखी, छेड़-छाड़, शरारत कभी न आई जो यौवनमें जिन्दगीके इर्दगिर्द बिखर जाती है । जिस वातावरण और जीवनके तीव्र दुःखद अनुभवोंसे यह गुजरे उसके कारण इनमें एक तुनुकमिजाजी आ गयी । संसारके प्रति तीव्र विरक्तिके संस्कारोंके बीच काव्यकी सफलताने इनके स्वाभिमानको इतना तीव्र कर दिया कि उस पर अभिमानका आवरण चढ़ता ही गया । सारी जिन्दगी यह दुनियासे खिंचे, साधियों और समकालिक साहित्यकारोंसे खिंचे रहे । करुणा, संसारके प्रति व्यापक सहानुभूति, दिलकी लोच, दूसरोंको कलेजेसे

बाँध लेने, अपना लेनेकी जो शक्ति सामान्य अवस्थामें होती है, वहीं असाधारण स्थितियोंके कारण इनमें गहरी वेदना, विरक्ति, खीझ, दूसरोंके प्रति असहनशीलता और अहंकार बन गयी ।

ये सब वृत्तियाँ इनके जीवन एवं काव्यमें मिलती हैं । इतने पर भी इनकी सफलता यही है कि आँधीमें भी यह अडिग रहे । दूसरा लड़का इन स्थितियोंमें बह जाता; ऐशो इशरतमें, लफंगईमें पड़ जाता पर पिता चचा एवं दरवेशोंसे प्राप्त संस्कारोंने इन्हें गिरने न दिया । प्रेमकी अभिव्यक्तियाँ सदा मामूली सतहसे ऊँची रहीं ।

बेखुदी पिता, चचा एवं दरवेशोंमें जो बेखुदी, मस्ती,
अद्भुत बेहोशी थी—वह उस स्तर पर तो नहीं
पर कुछ नीचे उतर कर इनमें भी थी । देखिए—

बेखुदी ले गई कहाँ हमको,
देरसे इन्तज़ार है अपना ।

बेखुदीमें न जाने कहाँ पहुँच गये हैं और अपने ही लौटनेकी, अपने ही प्रत्यावर्तनकी प्रतीक्षा है । अपनी मानसिक स्थिति, खोये हुए मीरकी स्थितिको बार-बार बयान किया है:—

बेखुदी पर न मीरके जाओ,
तुमने देखा है और आलममें ।

×

×

×

करते हो बात किससे वह आपमें कहाँ है ?

और भी देखिए, जब दूसरी दुनियामें होते थे, मिलते न थे—

मिलने वालो, फिर मिलिएगा है वह आलमे दीगरमें,
मीर फ़क़ीरको सक है यानी मस्तीका आलम है अब ।

और यह पिता चचा तथा दरवेशोंकी शिक्षाका ही परिणाम था कि भीर साम्प्रदायिक भेदभावसे सदा ऊँचे उठे रहे। मन्दिर और मस्जिदमें कोई देरो हरम से ऊपर भेद उन्हें कभी अनुभव न हुआ। वस्तुतः यह इन दोनोंको सच्ची उपासनामें बाधक और वैमनस्य उत्पन्न करने वाला मानते थे। सूफियोंका मार्ग प्रेमका मार्ग था; वे प्रियतमके गहरे सान्निध्यके रसमें डूबे रहते थे और कर्मकाण्डीन उपासनाके प्रति उदासीन रहते थे। 'भीर' पर भी इसका असर है:—

हम न कहते थे कहीं जुल्फ^१, कहीं रुख^२ न दिखा,
इस्तिलाफ^३ आया न हिन्दू-मुसलमाँ के बीच।

×

×

×

हम न कहते थे कि मत देरो-हरम^४ की राह चल,
अब य' दावा हश्र^५ तक शेखो-बरहमन में रहा।

मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि इनपर बचपनमें जो मुसीबतें आईं, उनके कारण दुनियाके प्रति एक बे-दिमागी, एक कड़वाहट इनमें आती गयी;

अहंकी स्वाभिमानने अहंकारका रूप धारण कर लिया।
प्रतिक्रियाएँ प्रचलित मतों एवं फैशनों के प्रति, संसारकी प्रशंसा एवं मूल्योंके प्रति एक विद्रोहका भाव

इनमें आता गया। इसीलिए काव्योत्कर्षके जमानेमें किसीको कुछ न समझने की बे-दिमागी इनमें आई। इनके अभिमानी स्वभाव, खीझ और तुनुक-मिजाजीके सम्बन्धमें अनेक कहानियाँ कही जाती हैं। स्वभावतः यह गम्भीर थे; बातें कम करते थे। तुच्छ विलास-भावनाओंसे सदा दूर रहते थे।

१. अलक, २. मुख, ३. मिश्रता, ४. मन्दिर और क़ाबा,
५. प्रलय।

आत्माभिमान विकृत होकर इतना बढ़ गया था कि अधीनता तो दूर नौकरी का नाम भी बर्दाश्त नहीं कर सकते थे, किन्तु संसारका मार्ग इतना सरल नहीं है; विवश होकर उसमें चलना ही पड़ता है। इस अकड़का परिणाम भोगते थे फिर भी अकड़े रहते थे। इन शिकायतोंके लोगोंमें जो चरचे थे उससे वह स्वयं भी परिचय रखते थे। एक मुल्लम्मस (पंचपदी) में इसकी झलक मिलती है। कहते हैं :—

हालत तो यह कि मुझको ग़मोंसे नहीं फ़ुराग़।

दिल सोजिशे दरबनी^२ से जलता है जूँ चिराग़ ।

सीना तमाम चाक³ है सारा जिगर है दाग ।

है नाम मजलिसोंमें मेरा मीर बे-दिमाग़ ।

अज बस कि कमदिमागीने पाया है इशितहारें ।

अपनी नाजूकमिजाजीके बारेमें खुद कहते हैं :—

नाज़ुकमिजाज आप क्यामत है मोरजी ,

जूँ शीशा मेरे मुँह न लगे मैं नशेमें हूँ ।

x

x

X

तेरी चाल टेढ़ी, तेरी बात रूखी ,

तुझे भीर समझा है यों कम किसूने ।

X

X

X

ज्यादा मिलने-जुलनेमें न थे; एकान्तप्रिय थे :—

सोहबत^५ किसीसे रखनेका उसको न था दिमाग ।

था मीर बे-दिमागको भी क्या बला दिमाग ।

१. मुक्ति, २. अन्तर्दाह, ३. विदीर्ण, ४. प्रसिद्धि, विज्ञप्ति,
५. संग ।

बातें करे बरश्तगीए दिलकी पर कहाँ ,
करता है इस दिमागजलेका वफ़ा दिमाग ।
दो हर्फ़^१ जेरे-लब^२ कहे फिर हो गया ख़मोश ,
यानी कि बातें करनेका किसको रहा दिमाग ।

निरन्तरकी कठिनाइयों, असफलताओंने इन्हें चिड़चिड़ा बना दिया था ।
अक्सर कड़ी बातें कह जाते; लोगोंको बुरी लगतीं पर परवा न करते थे ।
जो मनमें आता कह डालते थे; ज़बान पर काबू न था । स्वयं स्वीकार
करते हैं :—

कहना जिससे जो कुछ होगा सामने मीर कहा होगा ,
बात न दिलमें फिर गई होगी मुँह पर मेरे आई हुई ।

अपने ज्ञान-भण्डार और काव्य-प्रतिभाको अक्षय धन समझ कर ग़रीब-
अमीर किसीकी परवा न करते थे । अपने बेटेसे वृद्धावस्थामें कहा ही

अहंकार एवं
स्वामिमान

था—“बेटे मेरे पास माल व मुताए दुनियासे
तो कोई चीज़ नहीं है जो आइन्दा तुम्हारे काम
आये लेकिन हमारा सरमाए नाज़ क़ानूने ज़बाँ

है ।” इसी दौलत पर उनको गर्व था । अनेकानेक कठिनाइयाँ सह कर भी
अपना सिर सदैव ऊँचा किये रहे । ऐसा कोई काम न करते जिससे अपनी
स्वतन्त्रता पर कुछ भी भार पड़ता । चार दिनके भोग-विलासके लोभसे
अथवा दीनताके दुःखसे अपना सिर दुनियाके आगे कभी न झुकाया । इनका
काव्य इस बातका साक्षी है कि इनके दिलकी कली और त्योंरीकी गिरह
कभी खुली नहीं । यदि इनका अभिमान इन्हें केवल अमीरोंकी प्रशंसा
करनेसे रोकता तो विशेष हानि न थी परन्तु दुःखकी बात है कि औरोंके
कलामकी विशेषताएँ भी इन्हें दिखाई न पड़ती थीं । मुखसे दूसरोंकी प्रशंसा

बहुत ही कम निकलती थी। यह बात इनके यश रूपी शुभ्र वस्त्र पर एक भद्दे काले घब्बेके समान है। मामूली लोगोंकी तो कौन गिनती, फ़ारसीके सबसे प्रसिद्ध कवि सादी और शीराज़ीकी ग़ज़लोंकी भी खुल कर प्रशंसा नहीं करते थे।

दिल्लीमें मीर क्रमस्ददीन खाँ 'मिन्नत' एक कवि हो गये हैं। एक बार संशोधनके लिए उर्दूकी एक अपनी ग़ज़ल मीर साहबके पास ले गये।

मीर साहबने बतन पूछा, उन्होंने सोनीपत (पानी-पतके पास एक स्थान) बताया। मीरने फर्माया—
फ़ारसी-वारसी “जनाब उर्दू खास दिल्लीकी जुबान है; आप
कह लिया कीजिए उसमें तकलीफ़ न कीजिए; अपनी फारसी-वारसी कह लिया कीजिए।”

एक बार नबाब तहमास्प बेग खाँके पुत्र सआदतयार खाँ ‘रंगी’, जिनकी उम्र १४-१५ वर्षकी थी, बड़ी सज-धजसे मीर साहबके पास गये, और इस्लाह (संशोधन) के लिए ग़ज़ल पेश की।
कविता मीर साहबने देख कर कहा—“साहबज़ादे!
दिल जलानेका आप अमीर हैं, कुलीन हैं, तलवार-तीरन्दाज़ी
काम है वग़ैरा सीखिए, कविता दिल जलानेका काम है,
 उधर मत जाइए।” जब उन्होंने बहुत हठ किया तो कहा—“आमकी तबीयत इसके योग्य नहीं है, शायरी आपको नहीं आयेगी, व्यर्थ अपना समय न खोइए।” इसी प्रकार उर्दूके प्रसिद्ध कवि ‘नासिख’को भी इन्होंने बेतरह फ़टकार बताई थी।

X

X

X

दिल्लीमें जब थे तब ‘अज़दरनामा’ नामकी एक मसनवी लिखी। उसमें अपनेको अजगर लिखा और अन्य कवियोंमेंसे किसीको चूहा, किसीको कनखजूरा, किसीको बिच्छू और किसीको साँप
अज़दरनामा बनाया। कहानी यों बनाई कि किसी पर्वतकी घाटीमें एक भयंकर अज़दहा (अजगर) रहता था। एक बार उसे हराने

और नष्ट कर देनेके लिए जंगलके सब जानवर मिल कर उससे लड़ने गये । जब सामना हुआ तो अजगरने ऐसी गहरी साँस ली कि सब उसके पेटमें चले आये और नष्ट हो गये । इसका नाम 'अजदरनामा' रखा और उसे मुशायरेमें लाकर पढ़ा ।* मोहम्मद अर्मा 'निसार' शाह हातिमके शिष्योंमें एक तेज और आशु कवि थे । उन्होंने वहीं एक कोनेमें बैठकर पाँच-सात शेरोंका एक 'क़ता' लिखा और उसी समय मुशायरेमें पढ़ा । चूँकि 'मीर' साहबकी बात किसीको पसन्द न आयी थी अतएव इस क़ते पर खूब क्रह-क्रहे लगे और बाह बाहकी धुन लग गयी । इस क़तेका एक शेर है :—

हैदरे करारने वह ज़ोर बरूशा है निसार,
एक दममें दो कल्ले अजदरके कल्ले चीरकर ।

'मीर' साहबको बड़ा लज्जित होना पड़ा ।

×

×

×

लखनऊमें जब थे तो एक दिन किसीने पूछा—“क्यों जनाब ! आपके विचारसे आज कल शायर कौन-कौन हैं ?” मीर साहबने उत्तर दिया—

पौने तीन

शायर

एक तो सौदा और दूसरा यह खाकसार है ।”

कुछ ठहर कर कहा—“खाजा 'मीर दर्द' भी आवे शायर माने जा सकते हैं ।” उस व्यक्तित्वने

पूछा—“हजरत ! और मीर सोज साहब ?” झुंझलाकर बोले—“मीर सोज

* सआदतउल्लाके बेटे थे । यह और इनके पूर्वज भवन-निर्माण-कला (इंजीनियरिंग) में पारंगत थे । जब दिल्ली आबाद थी तो वहीं रह कर अपनी विद्याके बलसे काल-क्षेप करते थे । दिल्लीके उजड़ जाने पर लखनऊ चले गये और वहाँ सुखपूर्वक रहे । शेर भी खूब कहते थे । शाह हातिमके नामी शागिर्दोंमेंसे थे । रेखते खूब लिखे हैं । इनके दीवान दुर्लभ हैं । मीर साहबसे और इनसे प्रायः छेड़-छाड़ रहता करती थी ।

साहब भी शायर हैं ?” उसने कहा—“नवाब (आसिफउद्दौला) के उस्ताद हैं ।” मीर साहबने कहा—“खैर, यह है तो पौने तीन सही किन्तु सहृदय कवियोंके ऐसे उपनाम मैंने कभी नहीं सुने ।” *

X

X

X

एक दिन लखनऊके कुछ प्रतिष्ठित लोग भेंट करने तथा शेर सुननेके लिए मीर साहबके घर गये । दरवाजे पर पहुँच कर आवाज दी । लौंडी निकली, समाचार पूछ कर भीतर गयी, और एक टाट लाकर ड्योढ़ीमें बिछा दिया । उसी पर लोगोंको बिठाया और एक हुक्का ताजा करके उनके सामने रख गयी । थोड़ी देर बाद मीर साहब तशरीफ़ लाये । साहब सलामतके बाद लोगोंने शेर सुनानेका अनुरोध किया । मीर साहबने पहिले कुछ टाल-मटोल की, फिर साफ़ जवाब दिया कि “जनाब, मेरे शेर आप लोगोंकी समझमें नहीं आनेके ।” यद्यपि लोगोंको बात बुरी लगी किन्तु

* मीरसाहबसे कौन कहता कि बेचारे (मीर सोज) ने उपनाम तो ‘मीर’ ही रखा था जिसे हुजूरने छीन लिया । इसलिए विवश होकर यह उपनाम रखना पड़ा कि न आपको अच्छा लगे न आप उसपर अधिकार जमायें ।

जिस व्यक्तिसे मीरसाहबने ये बातें कहीं थीं उसने जाकर ‘मीर सोज’ साहबसे कहा कि ‘हज़रत, एक आलिम आदमी आपके उपनामपर आज हँसते थे ।’ उन्होंने कहनेवालेका नाम पूछा । बहुत हठके बाद सब हाल बताया गया । सोज साहबने कहा—“अच्छा, अगले मुशायरेमें सबके सामने यह सवाल करना ।” उसने ऐसा ही किया । तब मीरसोजने उत्तर दिया—

“जनाब ! फ़क़ीरने पहिले तख़ल्लुस (उपनाम) तो मीर किया था मगर उसे मीर तक्की साहबने पसन्द किया । मैंने सोचा उनके सामने मेरा नाम न रोशन होगा इसलिए मजबूर होकर ‘सोज’ तख़ल्लुस किया ।” बड़े क्रहक्रहे लगे । मीरको लज्जित होमा पड़ा ।—‘आबेहयात’

सभ्यताके विचारसे उन्होंने पुनः अनुरोध किया। प्रस्ताव इस बार भी अस्वीकृत हुआ। निदान उन लोगोंने पूछा—“हज़रत ! अनवरी व खाकानीके कलाम समझते हैं, आपका क्यों न समझेंगे ?” मीर साहबने फर्माया—“यह दुस्त, मगर उनकी शरहें (टीकाएँ) मौजूद हैं, और मेरे कलामके लिए फ़क़त^१ “मुहाविर-ए-अहले उर्दू”^२ है या जामा-मस्जिदकी सीढ़ियाँ। इन दोनोंसे आप महरूम^३ हैं” इतना कहकर निम्नलिखित शेर पढ़ा—

इश्क़ बुरे ही ख़्याल पड़ा है, चैन गया आराम गया ।
दिल का जाना ठहर गया है, सुबह गया या शाम गया ॥

“अब आप अपने क़ायदेसे कहेंगे ‘ख़्याल’ के ‘इये’^४ को जाहिर^५ करो, लेकिन यहाँ इसके सिवा कोई जवाब नहीं कि मुहाविरा ऐसा ही है।”

×

×

×

मैं लिख चुका हूँ कि आसिफ़उद्दौलाके दरबारमें ‘मीर’ की बड़ी इज्जत थी। नवाब इनको बहुत मानते थे पर यह उनसे भी टकरा जाते थे। ‘आज़ाद’ ने ‘आबेहयात’ में लिखा है कि एक दिन नवाबने ग़ज़लकी फरमाइश की। दूसरे-तीसरे दिन जो फिर गये तो नवाबने पूछा कि मीर साहब, हमारी ग़ज़ल लाये ? मीर साहबने तय़ोरी बदल कर कहा—“जनाब आली ! मजमून गुलामकी जेबमें तो भरे ही नहीं हैं कि कल आपने फरमाइश की और आज ग़ज़ल

“मजमून
ग़ुलामकी जेबमें
नहीं हैं !”

१. केवल । २. उर्दू बोलनेवाले लोगोंके मुहाविरें । ३. बञ्चित ।
४. एक उर्दू अक्षर । ५. प्रकट ।

हाजिर कर दे ।” सज्जनताकी मूर्ति नवाबने सिर्फ़ इतना कहा—“खैर, मीरसाहब ! जब तबीयत हाजिर होगी, कह दोजियेगा ।”

×

×

×

एक दिन नवाबने बुला भेजा । जब पहुँचे तो देखा कि नवाब हौज़के किनारे खड़े हैं । हाथमें छड़ी है । पानीमें लाल-हरी मछलियाँ तैरती फिरती

“मुतवज्जह हों हैं । आप तमाशा देख रहे हैं । ‘मीर’ साहबको देखकर बहुत खुश हुए और कहा—“मीर साहब, तो पढ़ें !” कुछ फर्माइए ।” मीर साहबने गज़ल सुनानी

शुरू की । नवाब साहब सुनते जाते थे और छड़ीके साथ मछलियोंसे भी खेलते जाते थे । मीर साहब झुंझलाते और हर शेरपर ठहर जाते थे । नवाब साहब कहे जाते कि हाँ, पढ़िए । आखिरकार शेर पढ़कर मीर साहब ठहर गये और बोले कि ‘पढ़ूँ क्या ? आप तो मछलियोंसे खेलते हैं, मुतवज्जह हों तो पढ़ूँ ।’ नवाबने कहा कि ‘जो शेर होगा, आप मुतवज्जह कर लेगा ।’ बात ठीक थी पर मीरको बहुत बुरी लगी । गज़ल जेबमें डालकर घरको चले आये और उनके पास जाना ही बन्द कर दिया । कुछ दिनोंके बाद एक दिन बाज़ारमेंसे चले जा रहे थे कि नवाब साहबकी सवारी सामनेसे आ गयी । वह देखते ही बड़े प्रेमसे बोले—“मीर साहब ! आपने हमें बिल्कुल छोड़ ही दिया ? कभी तशरीफ़ भी नहीं लाते ।” मीर साहबने कहा—“बाज़ारमें बातें करना आदाबे शुफ़ा^२ नहीं । यह क्या शुफ़्तगू^३ का मौक़ा है ?”

×

×

×

अहदअली ‘यकता’ ने अपने ग्रन्थ ‘दस्तूरुलफसाहत’ (२५-२६) में इसी प्रकारकी एक घटनाका वर्णन किया है । उसके अनुसार घटना निम्नलिखित है :—

१. ध्यान दें, २. सम्बन्धोंके आचरण, ३. वार्तालाप ।

“एक रोज़ मीर साहब नया क़सीदा लिखकर नवाब वजीर^१ की खिदमतमें ले गये। इत्तिफ़ाक़न^२ उस रोज़ मुल्ला मोहम्मद मोग़ली भी ईरानसे

मुझे कब
तहम्मुल है ?

आया था और चाहता था कि नवाब वजीर-ल्मुल्ककी मदह^३में कुछ पड़े। किन्तु मीरका क़सीदा इतना तूलानी^४ था कि वक्त बाक़ी नहीं रहा।

मुल्ला मोहम्मदने जल कर कहा कि मीर साहब ! क़सीदा खूब है लेकिन तवील^५ है। अगर नवाब साहबको इतना तहम्मुल^६ न होता तो इसे कौन सुनता ? मीर साहबने गुस्सेमें आकर बयाज^७ फेंक दी और बदमज़ा^८ होकर कहा कि अगर नवाब साहबको इतना तहम्मुल नहीं तो मुझे कब है। नवाब साहब खल्ले मुजस्सिम^९ थे। मुल्ला मोहम्मदकी बिल्कुल पर्वा न की और ‘मीर’ का वक़ीय^{१०} क़सीदा कमाले मेहबानी^{१०} से सुना और दाद^{११} दी।”

×

×

×

सआदत अली खाँ ‘नासिर’ने भी ‘मीर’की नाजुकमिज़ाज़ीका जिक्र किया है :—

“जब सरकार आसफ़उद्दौला बहादुरमें मीर साहब सींगए शायरी^{१२}में नौकर हुए, एक दिन वह आसफ़जाह कुतुबख़ाना^{१३}में ज़ल्वागर^{१४} थे। और देखो, तुम्हारे आक्रा दवावीन जेरो बाला^{१५} रखे थे। एक जिल्द नवाब नामदारके हाथसे दूर और मीर साहबके क्या फ़र्माते हैं ? नज़दीक थी। फ़र्माया—“मुझे उठा दीजिए।” मीर साहबने एक खादिम^{१६}से कहा—“सुनो, तुम्हारे आक्रा^{१७} क्या फ़र्माते हैं ?” नवाबने रास्त^{१८} हो कर उठा लिया मगर यह मीरज़ाई निहायत

१. आसफ़उद्दौला, २. संयोगवश, ३. प्रशंसा, ४. लम्बा, ५. घायं, ६. कविताकी कापी, ७. खीझकर, ८. शिष्टताके मूर्तिमान रूप, ९. शेष, १०. अत्यन्त कृपा, ११. प्रशंसा, १२. काव्य-विभाग, १३. पुस्तकालय, १४. सुशोभित, १५. ग्रन्थ ऊपर नीचे, १६. सेवक, १७. स्वामी, १८. सीधे।

नागवार गुजरी । बाद एक लमहेके फर्माया—क्यों मीर साहब, मिर्जा सौदा कैसा शायर मुसल्लमस्सबूत^१ था । मीर साहबने कहा—बजा^२—‘हर ऐब कि सुलतान बपसन्द हुनर अस्त^३ । हुजूर पुरनूरने^४ फर्माया कि “हम ऐबपसन्द^५ हैं? एक न शुद दो शुद^६ ।” इतनेमें मीर सोज कि उस्ताद हज्जरते आलीके थे, वास्ते मुजरे^७ के हाजिर हुए । हुजूरने फर्माया—“कुछ पढ़ो ।” हस्बुल्हुकम^८ मीर सोजने दो तीन गजलें पढ़ीं । नवाबने तारीफमें उनकी मुबालगा^९ किया । दिलेरी^{१०} मीर सोज साहबकी और तारीफ नवाबकी मीर साहबको बहुत नागवार गुजरी । मीर सोजसे कहा—“तुम्हें इस दिलेरी पर शर्म न आई?” मीर सोजने कहा—“साहब! बन्दा क्या है? मैं शाहजहानाबादमें भाड़ झोंकता था ।” कहा—“बुजुर्गी और शराफत^{११} में तुम्हारी क्या ताम्मुल^{१२} है मगर शेरे मीरसे किसीको क्या हमसरी^{१३} ? मौक्का और महल^{१४} तुम्हारी शेरखानी^{१५} का वह है जहाँ लड़कियाँ जमा हों और हुंढकलियाँ पकती हों, न कि मीरतक्रीके सामने ।” मीर सोजसे तो यह कहा और वह शक्का^{१६} कि मीरकी तलबको हुजूर पुरनूरने लिखा था, जेबसे निकाल कर हुजूरके आगे रख दिया और यह कह कर उठ खड़े हुए—‘खाना आबाद । दौलत जियादा ।’ नवाबने फर्माया—“खुदा हाफिज^{१७} ।”

“दो महीनेके बाद तहसीनअलीखाँ खाजासराने जिक्र इनकी उसरत^{१८} और गरीबुलवतनी^{१९} का हुजूरमें गुजारिश किया । उस हातिमे जर्मा^{२०} ने

१. प्रामाणिक, उच्च, २. ठीक, ३. राजाको पसन्द आनेवाला प्रत्येक दुर्गुण भी गुण है, ४. प्रकाशमान, ५. दुर्गुणाप्रिय, ६. एक न रही, दूसरी भी, ७. दर्शन, ८. आज्ञानुसार, ९. अत्युक्ति, १०. साहस, ११. बड़प्पन और शिष्टता; १२. सन्देह, १३. बराबरी, १४. अवसर एवं स्थान, १५. काव्य पढ़नेका, १६. राजपत्र; १७. ईश्वर रक्षा करे । १७. गरीबी, तंगी, १९. अपने बतनका छूट जाना, २०. युगके हातिम (परोपकारी) ।

अब्वल शिकायत उसकी बेएतनाई^१ की बहुत- सी की। बादये शफ़ाअत^२
 यह अकड़ खाजासरा क़बूल फ़र्माई। खाजासरा खुश
 खुश मीर साहबके पास आया और वह ज़िक्र^३
 सुनाया। मीरसाहबने दरबारमें खाजासराकी माफ़त^३ जाना नंगेमर्दी^४
 समझकर इन्कार किया।

“एक दिन वह जौहरशनासे हुनरमन्दा^५ अक्रीक़उल्लाके इमामबाड़ेकी
 तरफ़ आया और तहसीनको इशारेसे कहा कि मीरसाहबको ले आ। खाजा-
 सराने मीरसाहबसे कहा—“चलो, तुम्हारे लेनेको हुज़ूर आये हैं।” सुमान
 अल्लाह क्या क़दरशनास^६ थे कि अपने नौकरकी रईसोंकी-सी
 खातिर^७ थी।”*

×

×

×

मौलवी मोहम्मद हुसेन ‘आज़ाद’ ने ‘आबेहयात’में लिखा है :—
 “जब नवाब आसफ़उद्दौला मर गये, सआदतअलीख़ाँका दौर हुआ
 तो यह दरबार जाना छोड़ चुके थे। वहाँ किसीने तलब न किया। एक
 दिन नवाबकी सवारी जाती थी, यह तहसीनकी
 “मैं भी बादशाह मस्जिद पर सरेराह बैठे थे। सवारी सामने
 हूँ !” आई। सब उठ खड़े हुए। मीरसाहब उसी
 तरह बैठे रहे। सम्यद इंशा ख्वासीमें थे। नवाबने पूछा कि इंशा, यह कौन
 शख्स है जिसकी तमकनत^८ ने उसे उठने भी न दिया। अर्ज की, जनाब-
 आली ! यह वही गदाये मुतकब्बिर^९, है, जिसका ज़िक्र हुज़ूरमेंअक्सर^{१०} आया
 है, गुज़ारेका वह हाल और मिज़ाजका यह आलम^{११}। आज भी फ़ाक्रासे

१. लापरवाही, उपेक्षा, २. सिफ़ारिश, ३. जरिये, द्वारा, ४. अपमान,
 ५. गुणियोंके पारखी, ६. गुणोंके पारखी, ७. सम्मान, * तज़क़िरा खुशमार्क़ए
 ज़ेबा, ८. अभिमान, ९. स्वाभिमानी फ़कीर, १०. प्रायः, ११. अवस्था।

ही होगा। सआदतअलीखाने खिलअत^१बहाली और एक हजार रुपये दावत^२का भेजवाया। जब चोबदार लेकर गया, मीर साहबने वापिस कर दिया, और कहा कि “मस्जिदमें भेजवाइए। यह गुनहगार^३ इतना मोहताज^४ नहीं।” सआदतअलीखाने जवाब सुनकर मुतअज्जिब^५ हुए। मुसाहबोंने फिर समझाया। राज^६ नवाबके हुक्मसे सय्यद इंशा खिलअत लेकर गये और अपनी तर्ज^७ पर समझाया कि न अपने हालपर बल्कि इयाल^८ पर रहम कीजिए और बादशाहे वक्तका हदिया^९ है, इसे क़बूल^{१०} फर्माइए। मीर साहबने कहा कि साहब, वह अपने मुल्कके बादशाह हैं, मैं अपने मुल्कका बादशाह हूँ। कोई नावाक़िफ़^{११} इस तरह पेश आता तो मुझे शिकायत न थी। वह मुझसे वाक़िफ़, मेरे हालसे वाक़िफ़। इसपर इतने दिनों बाद एक दस रुपयेके खिदमतगारके हाथ खिलअत भेजा। मुझे अपना फुकू^{१२} व फाक़ा^{१३} क़बूल है मगर यह ज़िल्लत नहीं उठाई जाती। सय्यद इंशाकी लस्सानी व लफ़्फ़ाज़ी^{१४} के सामने किसकी पेश जाती। मीर साहबने क़बूल फ़र्माया और दरबारमें भी कभी-कभी जाने लगे।”

X

X

X

सआदत अलीखाने ‘नासिर’ने अपने ग्रन्थ ‘तजक़िरा खुशमाक़रए ज़ेबा’ में लिखा है :—

“मिर्जा मोग़ल ‘सबक़त’ कहते थे, जब मीर साहब लखनऊमें तशरीफ़ लाये बन्दा उनकी शरफ़े मुलाज़मत^{१५} को गया। ख़बर होनेके बाद देरमें

१. राजकी ओरसे उपहारमें दिया जानेवाला परिधान, २. निमंत्रण, ३. अपराधी, पापी, ४. मुखापेक्षी, अकिंचन, ५. चकित, ६. ढंग, ७. बाल-बच्चों। ८. भेंट, ९. स्वीकार, १०. अज्ञ, ११. फकीरी, १२. उपवास, अनशन, अनाहार, १३. वाचालता व वाग्मिता, १४. सेवाका सौभाग्य।

तशरीफ़ लाये । मैंने दौलते क़दमबोसी^१ हासिल की और बाद कीलोक़ाल^२ के मुल्लतमिस^३ हुआ कि कुछ अपने कलामसे मुस्तफ़ीद^४ फर्माइए । बेताम्मुल^५ फर्माया कि तुम्हारे बशरे शेरफहमी^६ मालूम नहीं होती, सखुन^७ को जाया करनेसे क्या हासिल^८ ?”

×

×

×

नासिरने एक और घटना लिखी है :—

“एक दिन शाह कुदरतउल्ला और मीर साहब किस्तीपर सवार थे । कुदरत उल्लाने चन्द ग़ज़लें अपने दीवानकी ‘मीर’ साहबके आगे पढ़ीं ।

दरियामें डाल दो ‘मीर’ साहबने कुछ न कहा । वह मुलतमस हुआ कि “आपने कुछ न फर्माया ।” मीरसाहबने कहा—“सवाबदीद^{१०} यह है कि दीवानको अपने दरियामें डाल दो ।”

×

×

×

‘नासिर’ ही ‘तज़किरा खुशमार्कए ज़ेबा’ में एक और घटना लिखते हैं :—

“इमादुल्मुल्क नवाब ग़ाज़ीउद्दीनखाँ* लबेदरिया^१ बैठे हुए थे और

१. चरण-स्पर्श-धन, २. शिष्टाचार, ३. प्रार्थी, ४. लाभान्वित, ५. बेघड़क, ६. काव्य समझनेकी योग्यता, ७. काव्य, ८. नष्ट, ९. लाभ, १०. पुण्यकारक, ११. नदीके तट पर ।

* शेफ़ताके बयानसे डा० फारूकीने अपनी पुस्तक ‘मीरतक़ी मीर’ (पृष्ठ २९१) में निम्नलिखित सूचना उद्धृत की है :—

“निज़ाम तख़ल्लुस, नवाब इमादुल्मुल्क ग़ाज़ीउद्दीन खाँ बहादुर

मुर्गावियाँ, आबी बत^१ और सुरखाब^२ वास्ते सैरोतमाशाके दरियामें छूटी हुई थीं। इत्तिफाकन^३ मीर साहब उधरसे आ निकले।
 “देखकर चल
 राह बेखबर”— नवाब चन्द कसीदे अपने उनको पढ़कर दाद-तलब^४ हुए। मीर साहबने फर्माया—“मेरी तारीफ़की क्या एहतियाज^५ है? हरबतको साहबके अशआर^६ पर हालते बज्द^७ व समाज^८ है।” नवाब पर यह सखुन निहायत नागवार गुजरा और दूसरे रोज़ मीर साहबको फिर तलब किया। आप कुर्सीपर बैठे, जमीन पर सिवाय खाक कुछ न बिछवाया। मीर साहबने लमहेके लमहे इन्तजार^९ मोढ़े चौकीका किया। बाद अज्जा^{१०} दुपट्टा अपना दोतहा करके बिछाया और बैठ गये। नवाब साहबने फर्माया—“कुछ इर्शाद^{११} कीजिए।” मीर साहबने यह क़ता पढ़ा—

बज़ीरस्त जलिलुलक़दर, अमीरेस्त, आलीशान, हालिश मुस्तग़नी अज शरह
 व बयाँ मिर्जा रफीअ सौदा औरा अजसना गुस्तरान अस्त।” (गुलशने बेखार पृष्ठ २३२)। पर ‘तज़किरा करीमुद्दीन’में बड़ी निन्दा की गयी है—“यह अमीर बहुत नमकहराम और बर्बाद करनेवाला खान्दान तैमूरियाका था। आलमगीर सानी भी इसीकी नमकहरामी की सबब मक़तूल हुआ। मिर्ज़ारफीअ सौदा उसकी मददाहीनमेंसे है।” (पृ० १२३) इसका एक शेर यह है—

आया न कभी खाबमें भी वस्ल मयस्सर,
 क्या जानिये किस वक्त मेरी आँख लगी है।

इसकी स्त्री ग़ज़ा बेग़म ‘शोख’ भी शेर कहती थी।

१. जल हंस, २. चक़वाक, ३. संयोग-वश; ४. प्रशंसारथी,
५. आवश्यकता, अपेक्षा, ६. शेरका बहुवचन, ७. मस्तीमें झूमना,
८. राग, ९. प्रतीक्षा, १०. इसके बाद, ११. कथन।

कल पाँव एक कासए^१ सर पर जो आ गया,
नागह वह उस्तखान^२ शिकस्तोंसे चूर था ।
कहने लगा कि देखकर चल राह बेखबर,
मैं भी कमू किसूका सरे पुर गरूर^३ था ।’

यह ठीक है कि स्वाभिमान उनमें मर्यादा उल्लंघन कर गया था और तुनुकमिजाजी अहंकारकी उस सीमापर पहुँच गयी थी जहाँ वह समाजका दूषण बन जाती है पर इसके कारण ही संसारके बड़ेसे बड़े प्रलोभनके लिए भी उनका सिर न झुका । स्वाभिमानके आगे राजसम्मान भी उनके लिए तुच्छ था । यह भी मानता हूँ कि यह उनके चरित्रकी विकृति थी क्योंकि वास्तविक स्वाभिमानी वह हैं जो दूसरेके स्वाभिमानका भी उतना ही ख्याल रखता है जितना अपना, इसलिए वह दूसरोंको भी ऊपर उठाता है, उसपर प्रहार करके नहीं, उसे गले लगाकर ।

कदाचित् मीरके पिता या चचा जीवित रहते और इनकी छाया बराबर उन्हें मिली होती, प्रेम एवं स्नेहका वह स्रोत अकस्मात् टूट न गया होता तो मीरका निर्माण वैसा ही हुआ होता । मानसके अतलमें तब वह दूसरोंके प्रति गहरी संवेदनाओं और सहानुभूतियोंसे भरे होते । पर जब वह उग रहे थे तभी उनके गिर्द एक तूफ़ान, एक बवण्डर आया जिसने उनको अस्थिर कर दिया—विपत्तियोंकी ऐसी धारा, जिसका पाट बढ़ता ही गया और जो जीवन भर कभी समाप्त न हुई । इसलिए जहाँ उनमें एकान्तप्रियता, दर्दमन्दी, गम्भीरता और प्रेम-प्रवणता आई, वहाँ चिड़चिड़ापन, तुनुकमिजाजी, जीवन एवं जगत्से असन्तोष भी आया । अपनीसे भिन्न विचार-प्रणालियों, जीवन-विधियोंसे समझौता करनेकी शक्ति एवं सामाजिकता देनेवाला प्रेम उनका न था ।

१. सिर रूपी प्याला, २. हड्डियाँ, ३. स्वाभिमानी मस्तक ।

स्नेही एवं सन्तकी जगह, इसीलिए, वह आलोचक एवं उपदेशक बन गये, संशोधक हो गये, दूसरोंसे सीखने और दूसरोंको ग्रहण करनेकी जगह दूसरों के दोषों पर प्रहार कर उन्हें उठानेका आग्रह उनमें प्रबल होता गया। अतीतके प्रति, जो चला गया है या जा रहा है उसे भूलकर जो सामने है उसे ग्रहण करनेकी जगह अतीत और अतीतके मूल्योंके प्रति प्रबल आसक्ति उनमें सदा रही। इसीलिए वह हरएकसे उलझ पड़ते थे, हरएकसे खीझ जाते थे।

उलझाव है ज़मीं से झगड़ा है आसमाँ से।

वह दिलसे नेक थे, क़त्तई किसीका बुरा न चाहते थे पर किसीको ऐसी राह पर चलते देखते, जिसे वह हृदयसे ग़लत समझते थे, तो चुप न रह सकते थे। प्राचीन मूल्योंके प्रति, दिल्लीकी शताब्दियोंकी परम्पराके प्रति, उनमें जो मोह था, उसके कारण वह सचमुच अनुभव करते थे कि ज़माना ग़लत राह पर जा रहा है; ज़बान ख़राब की जा रही है; शिरो सखुन नीचे पाये पर ले जाया जा रहा है। उनके निकट काव्य, या ज़बान एक आन्तरिक श्रेष्ठता, एक अन्तःसौष्ठव, एक अन्तःसंस्कृतिका चिह्न है, केवल रचना-चातुरी नहीं, केवल शब्द-चमत्कार नहीं। इसीलिए वह खीझते थे, अन्दर ज़मानेके प्रति जो खीझ थी, ज़रा भी अवाञ्छनीय दृश्य सामने आते ही निकल पड़ती थी। पर युग दूसरी ओर जा रहा था। लोग उनकी इज़्ज़त करते थे, उनके महत्वको समझते थे, पर उसका अनुसरण न कर पाते थे। उसके गहरे प्रयोजन और तात्पर्यको समझ न पाते थे। मीर साहब इससे दुखी होते थे और हाथ मार कर कहते थे:—

समझा न कोई मेरी ज़बाँ इस दयार में

×

×

×

इधर यह स्त्रीक्ष्ण थी और उधर वह इक्ष्ण था जिसकी गहरी छाप इन पर इनके पिता और चचाने डाली थी। यौवन कालमें इन्होंने किसी विधुवदनी को प्रेम किया। उसमें असफल हुए। पर असफलता केवल इस अर्थमें कि दोनोंका मिलन न हो सका। इससे प्रेमकी संवेदनाएँ व्यक्तिगत और गहरी होती गयीं। विपत्तियोंके साथ दर्दकी सम्पत्ति तो इन्हें बचपनसे मिली थी, प्रियतमाके आजीवन विरहने उसमें वह आग पैदा कर दी कि जिसमें जलना जीवनका सर्वोत्तम पुरस्कार है; उसने उनमें वे बूँदें भरीं जिनमें समुद्र समा जाता है और जिसके लिए कहा गया है—

य' वह क्रतरा है जिसमें डूबना ही है उभर जाना

शायद है कि प्रियतमा इन्हें मिल गयी होती तो यह खो गये होते; जीवनकी रंगीनियारें इनके अन्तःकरणकी प्यासको ले डूबतीं; शायद है कि यह फिर उतना ऊँचा न उठ पाते; वह स्थायी, कभी स्थिर न होनेवाली वेदना इनमें न आती जो इनके जीवनको साधारण भोग-विलास, ऐशो-इशरतके स्तरसे ऊपर उठा सकी और इनके काव्यको वह प्रकाश दे सकी जो उर्दू ज़बानमें दूसरे किसीको नसीब न हुआ। इस प्रकार विरहका रस इनके जीवन और काव्यपर छा गया है। दुःखोंसे भरी अपनी ज़िन्दगीका सारा रास्ता वेदनापूर्ण सीनेके बल पार किया है और संसारके, समष्टिके दुःखको प्रियतमके विरहमें इस तरह मिला दिया है कि दोनोंको अलग करना मुश्किल है। उन्होंने प्रेमको सर्वोच्च सभ्यताका स्रोत बना दिया है।

मीर अकबराबाद, दिल्ली, लखनऊ जहाँ भी गये, बीच-बीचमें उन्हें गहरी आर्थिक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। वह ज़माना ही ऐसा था जब राजकुमार भी भूखों मरते थे। दिल्लीमें इनकी आर्थिक विपत्तियों का अनुमान मिर्जाअली लुत्फ़के निम्नलिखित बयानसे किया जा सकता है जो उन्होंने 'गुलशने हिन्द' (पृ० २०९) में दर्ज किया है :-

“मीर सा शायर जो कि सेहरकारिये सखुनमें तिलस्मसाज है
 ख्यालका, और जादूतराजिए बयानमें मानी परदाज़ है मक्कालका,
 वह नान शबीनाका मोहताज है, और बात कोई नहीं उसकी पूछता
 आज है ।”

ऐसी कठिनाइयोंमें भी वह उन्हीं मूल्योंसे ठहरे रहे जो अपने ऊपर
 उन्होंने खुद लगाये थे—

मेरी क्रद्ध क्या इनके कुछ हाथ है,
 जो रुतबा है मेरा मेरे साथ है ।

इनका सबसे बड़ा गुण यही है कि इन कठिनाइयोंके आगे वह कभी
 झुकनेको तैयार नहीं हुए; अपने मार्ग पर चलते ही गये । ऐसा नहीं कि
 ज़िन्दगी और बन्दगी उनमें संसारका रस चखनेकी भावना न थी ।
 उनमें ज़िन्दगीकी प्रेरणाएँ थीं पर बन्दगी की,
 साथ-साथ है पूजाकी भावनाएँ भी थीं । इसीलिए इनके
 जीवन और काव्यमें कभी एक तत्व की, कभी दूसरे तत्व की अधिकता हम
 पाते हैं । जैसे एक ही शरीरमें दो आत्माएँ हों । एक इस्ककी गहराईमें
 डूबी, समर्पणशील, दूसरी गर्वोन्नता, संसारके आगे न झुकनेवाली । खूबी
 यह है कि यह गिरते हैं, पर गिरकर उठते और आगे चलते हैं—काँटोंको
 रौंदते हुए, फूलोंको आशीर्वाद देते हुए, कलेजा हथेली पर रखे, सिर ऊँचा
 किये, आँखें तर किये चले जा रहे हैं और चले जा रहे हैं ।



मीर : जीवन एवं काव्यको ऐतिहासिक पृष्ठभूमि



मीर जिस ज़मानेमें हुए उस समय उत्तर भारत, विशेषतः दिल्लीके समीपवर्ती भागकी स्थिति बड़ी डाँवाडोल थी। रईसोंका तख्ता उलट रहा था; गद्दियाँ जहाँ तहाँ लुङ्की हुई फिरती थीं। आज जो राजा है, कल उसका पता नहीं वह कहाँ गया; आज जो अहंकारसे भरा, ऐश्वर्यके सिंहासन पर है, कल अकिंचन और परमुखापेक्षी होकर किसी गड्ढेमें पड़ा है। मतलब सब तरफ़ अँधेरगदीं, अव्यवस्था, अनिश्चितता, लूट, झगड़े-लड़ाईका राज था। मुगल साम्राज्य विभ्रल होता जा रहा था; राजकोष पारस्परिक झगड़ोंमें समाप्तप्राय था; कानूनका बन्धन ढीला पड़ गया था। मालगुजारी वसूल ही न हो पाती थी या अगर मुश्किलसे कुछ वसूल हो पाती थी तो वसूल करनेवालोंकी जेबोंमें चली जाती थी। राज-पूत, सिख, जाट, मरहठे जिसे देखिए, विद्रोह और नये राज्य स्थापित करने को तैयार। सेनाको न समयपर वेतन मिलता था, न उसके जीवनकी कोई निश्चितता थी। इसलिए सैनिकोंकी दृढ़ता और निष्ठा सदा डाँवाडोल रहती थी। हर आदमी अपनी बनानेके फेरमें था; साम्राज्य वा देशकी भलाईका भाव लोगोंमें बहुत ही कम रह गया था।

दिल्लीकी शक्ति नाम मात्रको रह गयी थी। सबकी लोलुप आँखें उसी क़ी ओर जाती थीं। पतनमें भी दिल्लीमें गहरा आकर्षण था। केन्द्रीय-मुगल-साम्राज्यका चिराग टिमटिमा रहा था। मरहठे, रूहेले, जाट, पठान, सिख सब अपनी ढौड़में थे। मज़ा यह कि दिल्लीश्वरको इन उठती आँखियोंसे कोई खास सरोकार न था, वह जब तक गुजरे चैनसे गुजरने दो, सिद्धान्तका अनुयायी था। मोहम्मदशाह दिल्लीके तख्त पर था। उसे अपने ऐशोद्देशरतमें दीन दुनियाकी खबर न थी।

दिल्ली, निर्बिर्य, निःशक्त दिल्ली, अफ़वाहकी तरह विदेशोंमें घन-दौलत के लिए मशहूर दिल्लीकी तरफ़ इसी देशके फिरकों, क्षत्रपों तथा छोटे-मोटे लुटेरोंका आकर्षण-राजा-नवाबोंकी आँख नहीं लगी थी, विदेशों तक भी उसकी अव्यवस्थाकी खबर पहुँच चुकी थी। इसलिए दुस्साहसी विदेशी सरदारोंके लिए

यह अच्छा अवसर था। फलतः नादिरशाहने हमला किया; पंजाबको सर करता दिल्ली पहुँचा और उसे लूटकर नंगी-बुच्ची कर दिया। ५८ दिनतक यहाँ रहा, जिस तरह लूटते बना लूटा और हज़ारों ऊँटों पर हीरे ज़वाहिर, सोने-चाँदी तथा लूटका और सामान लादकर ईरान लौट गया। फ़ौज़र नामक इतिहासकारने अपने नादिरशाह ग्रंथमें इस लूटकाअन्दाज़ सत्तर करोड़ किया है पर मैं समझता हूँ वह इससे कहीं ज्यादा माल ले गया; फिर उसके सरदारों, सैनिकोंके हाथ जो कुछ लगा होगा, उसकी तो बात ही न पूछिए। पीढ़ियोंकी दौलत, विशेषतः जवाहरात उसके हाथ लगे। अन्दाज़ है कि सिर्फ जवाहरात पचास करोड़से कमके नहीं रहे होंगे। इसी लूटमें वह मशहूर तख्तेताऊस (मयूर सिंहासन) तथा कोहेनूर भी था। तीन सौ हाथी, दस हज़ार घोड़े, दस हज़ार ऊँट अलग थे। हज़ारों आदमी नादिरकी तलवारके घाट लगे। 'मीर'के ऊपर कृपा रखने और उन्हें संरक्षण प्रदान करनेवाले नवाब समसामउद्दौला भी इस हंगामेमें १५ फरवरी १७३९ ई० को क़त्ल कर दिये गये।

इस क़त्लेआमसे दिल्लीमें त्राहि-त्राहि मची हुई थी। वह एक महा-श्मशान बनी हुई थी। ११ मार्चको जो क़त्लेआम हुआ उसमें चाँदनी-चौक, दरीबा और पहाड़गंजकी बस्तियाँ बिल्कुल साफ़ और बीरान हो गयीं। स्वयं ईरानी इतिहासकारोंका अन्दाज़ है कि इस अवसर पर तीस हज़ारसे कम आदमी क़ृपाणकी भेंट न हुए होंगे। जो मर गये वे फिर भी अच्छे रहे। जो बचे वे अपने मरे हुए गुरुजनों एवं प्रियजनोंके दुःखपर रोने भी न पाये,

उनसे गहरा दण्ड और कर वसूल किया गया। अमीर-उमराओं पर बड़ी बेरहमी की गयी। किसीको धूपमें खड़ा किया गया; किसीके कान काट लिये गये। इस बेरहमी और अपमानके डरसे कितनी औरतोंने आत्म-हत्या कर ली; कितने आदमी कुओंमें डूब मरे। वजीर क्रमरुद्दीनखाँको धूपमें खड़ा कराके एक करोड़से ज्यादाके जवाहरात प्राप्त किये गये। उसके दीवान मजलिसरायका खुले दरबारमें कान काट लिया गया। उसे अपना ऐसा अपमान लगा कि उसने १८ अप्रैल १७३९ ई० को आत्महत्या कर ली। आदमियोंको ही नहीं, औरतोंको भी नहीं बख्शा गया। उनकी बुरी तरह बेइज्जती की गयी, उनकी आबरू छीन ली गयी। समसाम उद्दौलाके भाई मुजफ्फरखाँकी पत्नियों और बेटियोंकी वह बेइज्जती हुई कि उनके शत्रु भी धिक्कारने लगे।

नादिरशाहकी इस लूट और हमलेके बाद दिल्ली बेपानी हो गयी। उसकी जड़ें उखड़ गयीं; आर्थिक दुरवस्थाकी सीमा हो गयी और दिल्लीका रहा-सहा ऐश्वर्य भी समाप्त हो गया। नादिर ५ मई १७३९ ई० को दिल्लीसे विदा हुआ। दिल्लीको कमजोर पाकर उसने अफ़ग़ानिस्तान और सिंध नदीके पारके इलाकों पर क़ब्ज़ा कर लिया। फिर पंजाब भी मुग़लोंके हाथसे निकल गया। पंजाबके हाथमें आजानेके कारण नादिरशाहके बाद उसका स्थान लेने वाले अहमदशाह अब्दालीके लिए दिल्ली पर आक्रमण करना और उसे लूटना सरल हो गया। उधर सिख उठे; दक्षिण तथा मध्यभारतमें मरहट्टे अपनी शक्ति बढ़ाते जा रहे थे। कुछ दिनोंमें पूर्वमें अवध तथा दक्षिणमें हैदराबाद स्वतन्त्र हो गये।

जैसा मैं कह चुका हूँ, ऐसे भयानक समयमें मोहम्मदशाह जैसा दुर्बलमना व्यक्ति दिल्लीके सिंहासन पर था। आश्चर्य तो यह है कि इसका बचपन ७ सालके लम्बे अरसे तक क़ैदकी मुसीबतोंमें बीता था

तब भी इसने दुनियासे कुछ न सीखा। सत्रह वर्षकी आयमें सिंहासन पर

बैठा। कदाचित् उसने सोचा कि दिल्लीमें बादशाह रोज़ बनते-बिगड़ते रहते हैं, जो ज़रा भी स्वतन्त्र वृत्ति ग्रहण करता है सरदार और बज़ीर उसे दबा देते हैं इसलिए अच्छा यही है कि शासनका काम उन्हीं पर छोड़ कर अपने दुःखोंको मधुयामिनी और मधुपात्रोंमें डुबा दिया जाय। इसने २८ वर्षके लम्बे समय तक राज्य किया किन्तु कदाचित् ही एक-दो बार बाहर निकला होगा। सारा समय राग-रंगमें कटता था। वह शिथिल, सुस्त, विलासी और आरामतलब था। धीरे-धीरे शरीर दुर्बल पड़ गया। तब इसने फकीरों और जोगियोंकी ओर मुँह फेरा। यहाँ तक कि दरबारमें दरवेशोंका प्रभाव बहुत बढ़ गया।

चूँकि सरदारों और अमीरोंके हाथमें शासन चला गया और कोई देखने वाला न था, इसलिए वे मनमानी करते थे। उनमें भी स्वार्थकी

ईरानी-तूरानी संघर्ष भावना इतनी प्रबल हुई कि एक-दूसरेको फूटी आँख देख नहीं सकते थे। ये सरदार प्रधानतः

दो दलोंमें विभाजित थे। एकका नेता था—क़मरउद्दीन एतमादउद्दौला द्वितीय जो १७२४ ई०में निज़ामुल्मुल्कके बाद बज़ीर नियुक्त हुआ। इसमें प्रमुखतः तूरानी थे। दूसरा दल ईरानियोंका था जिसका नेता अबुल मन्सूर ख़ाँ सफ़दरजंग था। इसे १७३८में अवधकी सूबेदारी मिली। सच पूछिए तो मुग़ल साम्राज्यके अन्तिम युगका इतिहास इन्हीं दो गुटोंके विरोध और संघर्षका इतिहास है। यह संघर्ष केवल राजनीति तक ही सीमित नहीं था, जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें फैल गया था; यहाँ तक कि साहित्य भी इससे बच न सका। 'आरज़ू' और 'हज़ी' तथा क़तील और शालिबके संघर्षमें इसीका प्रतिबिम्ब है। कभी एक दलके हाथमें शक्ति आती, कभी दूसरे के। १७३२ से १७३९ तक समसामउद्दौला और मुज़फ़्फ़र ख़ाँ की चली पर जब नादिरआहके आक्रमणमें ये मारे गये तो अमीरख़ाँ प्रथम के लड़के मीरमीरान अमीरख़ाँ अम्दतुलमुल्क द्वितीयकी चमकी। यह

बड़ा प्रत्युत्पन्नमति था। स्वयं अच्छा कवि था, फिर उसकी मृदुभाषिता तथा विद्या एवं कलाका संरक्षण प्रसिद्ध है।

इसके द्वारा मोहम्मद इसहाकखाँ प्रथमकी पहुँच बादशाह तक हुई। चूँकि दोनों ईरानी शिया थे इसलिए परस्पर बड़ी बनती थी। धीरे-धीरे इसहाकखाँका बादशाह मोहम्मदशाह पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह उसे एक क्षणके लिए अलग न करता था। जब बादशाह नादिरशाहके विरुद्ध लड़ाईमें हार कर भागा तो इसहाकखाँ भी उसी हाथी पर सवार था और उसे बराबर हिम्मत दिलाता रहा। नादिरशाह भी उसकी तारीफ़ करता था। अतः उसकी ज़ोरोसे उन्नति हुई और ऊँचे पद पर पहुँचा। १८ एप्रिल, १७४५ को उसकी मृत्यु हो गयी। उसके बाद उसका पुत्र मिर्जा मोहम्मद (नजमुद्दौला इसहाक द्वितीय) दीवान खालसा नियुक्त हुआ और कुछ दिनों तक, पिताकी भाँति ही, शाही दरबारमें उसकी प्रतिष्ठा रही। बादशाहके आदेशसे इसहाकखाँ प्रथमकी पुत्रीका विवाह सफ़्दरजंगके पुत्र शुजाउद्दौलासे हो गया। १७४५ ई० में इन्हीं से आसफ़उद्दौलाका जन्म हुआ। यह महिला इतिहासमें नवाब बहू बेगमके नामसे प्रसिद्ध हुई। बादमें इन्हीं पर वारेन हेस्टिंग्सने अत्याचार किया था।

मीरने 'ज़िक्र मीर' में एक और अमीर असदयारखाँका भी जिक्र किया है जिसकी मददसे वह नवाब बहादुर जावेदखाँके यहाँ नियुक्त हुए। यह ३५ वर्षकी उम्रमें अवधका सूबेदार बनाया गया था। धीरे-धीरे उसने एक अत्यन्त शक्तिमान सेनाका संघटन कर लिया। शियोंका तो नेता ही बन गया। इस ज़मानेमें लाहौरसे आग भड़की। १७२६ ई० में जिक्रयार खाँ पंजाबका गवर्नर नियुक्त हुआ। उसका विवाह वज़ीर एतमादुद्दौला प्रथमकी लड़कीसे हुआ था और उसके ज्येष्ठ पुत्रका, उसके लड़के एतमादुद्दौला द्वितीयकी बेटीसे। इस प्रकार दरबारमें उसकी बड़ी पहुँच थी। जनतामें भी उसको पर्याप्त सम्मान मिला था। यहाँ तक कि पहली जुलाई १७४५ को जब उसकी मृत्यु हुई तो लाहौरकी जनता उसके

शोकमें मग्न हो गयी। लोग ढाढ़ें मारकर रोते थे; तीन दिनतक नगर में चूल्हा और दिया नहीं जला। लाहौरमें एक भी समर्थ व्यक्ति ऐसा न था जो उसके जनाङ्गेके साथ न गया हो।

पर दुनियाकी विचित्रता तो देखिए कि उसके मरनेके बाद उसके दोनों पुत्रों, यहियाखाँ और शाहनवाजखाँमें ही युद्ध हो गया। शाहनवाज

अब्दालीको

निमन्त्रण

ने यहियाखाँ सूबेदार पंजाबके पूरे माल-असबाब पर कब्जा कर लिया। जब पंजाबकी हालत इस प्रकार बिगड़ रही थी, नादिरशाह कत्ल कर

दिया गया और अहमदशाह अब्दाली उसके स्थानपर गद्दीपर बैठा। जून ४७ में वह हिन्दुस्थानपर आक्रमण करनेकी योजना बनाने लगा। चूँकि शाहनवाजखाँको भलीभाँति मालूम था कि दिल्लीश्वर मोहम्मदशाह उसे पंजाबका शर्वर्नर न बनायेगा क्योंकि अधिकार बड़े भाईका है इसलिए उसने अहमदशाह अब्दालीको भारतपर अधिकार करनेके लिए निमन्त्रण दिया। उसे खुश करनेके लिए उसने 'शियाघर्म' भी अंगीकार कर लिया और अपनी मुहरपर १२ इमामोंके नाम खुदवाये। उसे आशा थी कि इन बातोंसे अहमदशाह खुश हो जायगा और ईरानी सिपाही उसकी मदद करेंगे।

८ जनवरी १७४८ ई० को अहमदशाह अब्दाली लाहौरके पास पहुँच गया। उसने अपने गुरु बाबा साबिरको शहरमें भेजा। उसकी माँ लाहौर में थी और वह उससे मिलना चाहता था। किन्तु जन-साधारणमें यह प्रसिद्ध था कि बाबा साबिर जादूगर है। शाहनवाजने उसे गिर-फ्तार करवा लिया पर बिना उसकी आज्ञाके ही उसके किसी छोटे अधिकारीने दूसरे दिन उसे कत्ल कर दिया। अब्दाली क्रुद्ध हो गया और बदला लेनेका हुक्म दिया। शाहनवाज रातों-रात शहरसे निकल भागा। उसकी देखा-देखी, और अफसर भी निकल गये। उनके भगनेसे क्रौंदमें पड़े जिक्रियारखाँके निष्ठावान् सेवक छूट गये। उन्होंने अब्दालीसे कहा ३०

लाख रुपये ले लीजिए और शहरको चौपट न कीजिए। वह मान गया, फिर भी बहुत-सा माल उसके हाथ लगा। लाहौर पर अधिकार हो जाने से उसकी ताकत दुगुनी हो गयी और वह विश्वासपूर्वक १९ फरवरीको दिल्लीकी ओर रवाना हुआ।

अब्दाली दिल्लीके निकट आता जा रहा था पर मोहम्मदशाहके विलासी दरबारी कुछ निश्चय नहीं कर पाते थे। ज्यादातर लोग मोहम्मदशाहसे यही कहते थे कि हुजूर लड़ाईमें शरीक न हों, अब्दाली ऐसा कहाँका खस्तम है, बादशाहका कोई भी गुलाम जाकर उसे क्रोध कर लायेगा (देखिए मज्मुल तवारीख)। जो कुछ समझदार थे वे कहते थे कि बादशाह पानी-पत या करनाल तक जरूर जायें, इसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। मोहम्मदशाह भी इसे समझता था पर उसमें साहस न था।

अन्तमें तय हुआ कि बजीर क्रमख़दीनखाँ सेनाकी कमान हाथमें लें और ईश्वरीसिंह महाराज जयपुर तथा नासिरखाँ उनकी मददके लिए जायें। ८ जनवरीको प्रयाणका निश्चय हुआ था किन्तु ४-५ दिन तोपखाने की प्रतीक्षामें ही लग गये। उधर ईश्वरीसिंह भी बादशाहसे खुश न था क्योंकि उसने रणथंभौरका क़िला माँगा था जिसे देनेसे बादशाहने इन्कार कर दिया था, इसलिए वह भी टालमटोल करता रहा। यह फ़ौज दिल्ली से १६ मील, नरेला तक, पहुँची होगी कि समाचार मिला अब्दालीने लाहौर ले लिया। इस समाचारसे मुगल सरदारोंके होश-हवास जाते रहे। खैर, उनके कहनेसे शाहजादा अहमदशाहको उनके साथ भेजा गया। २५ जनवरीको ये लोग सरहिन्द पहुँचे पर वहाँके किले पर भी अफ़ग़ानोंने सरलतापूर्वक अधिकार कर लिया। क़िलेदार मार दिये गये; स्त्रियाँ क्रोध कर ली गयीं। अब दिल्लीका रास्ता साफ़ हो गया। दिल्लीवालोंने नादिर-शाहके अत्याचारोंकी याद करके अपनी स्त्रियोंको वेश बदल कर शहरके बाहर भेज दिया।

११ मार्चको एक गोलेसे घायल होकर बजीर क्रमख़दीन मर गया।

उसके पुत्र मुईनुल्मुल्कने सेनाको सँभाला और बड़ी बहादुरी दिखाई पर ईश्वरीसिंह अपने नाईकी सलाहसे भाग निकला । इस समय सफ़्दरजंगने बड़े साहससे काम लिया । इसी समय, संयोग-वश अब्दालीके गोला-बारूदमें आग लग गयी जिसमें एक हजार अफ़ग़ान सिपाही जलकर राख हो गये । इस घटनासे अब्दालियोंके पाँव उखड़ गये । ये लोग लौट कर पानीपतके पास पहुँचे थे कि मोहम्मनशाहके देहावसानका समाचार मिला । इस प्रकार अहमदशाह शाहजादाको विजय एवं सिंहासन एक ही साथ प्राप्त हुआ । मीरने इन बातोंका वर्णन 'ज़िक्रेमीर'में किया है ।

अब अहमदशाह गद्दी पर बैठा । इस समय उसकी उम्र २२ सालकी थी पर उसे न शासनका ज्ञान था, न सैन्य-संचालनका । उसका

अहमदशाहका शासन

समय बेगमोंके साथ गुज़रा था । उसे अच्छी शिक्षा भी न मिली थी; बापने भी ज्यादा ध्यान न दिया था । बड़ी कठिनाईसे अबतककी ज़िन्दगी बीती थी । अब एकदम बन्धन हट गये; कोई रोकटोक करनेवाला न रहा । परिणाम यह हुआ कि बुरी संगतमें पड़ गया । साथी जान-बूझकर इसे शलत रास्ते पर डालते थे । विशेषतः वह जाबेदख़ाँ ख़ाजासराके हाथ की कठपुतली था । शराब और औरतके सिवा उसे किसी बातसे मतलब न था । उसके साथ कोई मर्द तो दिखाई ही न देता था, सदा परियोंका क़ाफ़ला चारों ओर घेरे रहता था ।

जो इसे सूझती करता था । १७५३ ई० की बात है कि एक दिन अपने ६ सालके बच्चे महमूदशाहको खेमेमें मसनद पर बिठा कर दरबार लगवाया; सब सरदार उस बच्चेके सामने खड़े हुए; नज़रें दी गयीं । नवम्बर ५३ में इसी बच्चेको पंजाबका गवर्नर नियुक्त किया । और मजेकी बात यह कि उसका नायब एक सालका दूध-पीता बच्चा नियुक्त हुआ । इसी तरह कश्मीरकी सूबेदारी १ बरसके एक बच्चेको दी । यह सब खेल उस समय हो रहा था जब अब्दाली पंजाब और कश्मीरका दरवाज़ा खटखटा रहा था ।

वह बड़ा डरपोक भी था। सिकन्दराबादमें उसे मराठोंके विद्रोहका समाचार मिला; बस वह यों सर पर पैर रखकर भागा कि बेगमोंको भी साथ न लिया। वे सब क्रैद हुईं। अपने शासनके अन्तिम २-३ सालोंमें उसने प्रबन्धकी ओर कुछ ध्यान दिया पर अनुभवहीनताके कारण उसे कोई सफलता न मिली। इसके दरबारमें खाजासरायों और औरतोंका राज था। इसके पिता मोहम्मदकी बेगमोंमें एक नर्तकी ऊधमबाई भी थी। अहमदशाह उसके आदेश बिना कोई काम न करता था। इस औरतका चरित्र गिरा हुआ था। एक खाजासरा जावेदखासि उसका ऐसा लगाव था कि सब लोग थू-थू करते थे। वह रातको भी अन्तःपुरमें रहने लगा था। शाही दरबान उससे बड़े क्रुद्ध थे, इसलिए कि उन्हें महीनोंसे बेतन न मिला था। एक दिन वे सब गधा और एक-एक कुतिया पकड़ लाये। जो अमीर आता उससे कहते (गधेको दिखाकर) यह नवाब बहादुर हैं, और यह (कुतियाको दिखाकर) हज़रत क्रुदसिया हैं, पहले इनको सलाम कीजिए, फिर आगे बढ़िए।

जब बादशाहका यह हाल हो, राज्य क्या चलता ? आर्थिक स्थिति इतनी गिर गयी थी कि सिपाहियोंको महीनोंसे बेतन नहीं मिला था। वे रोज़ प्रदर्शन करते थे पर उनके लिए दो लाख रुपये भी एकत्र न हो सके। उधर ऊधमबाईने अपनी सालगिरहका समारोह मनाया जिसमें दो करोड़ खर्च किये गये।

अहमदशाहने सफ़्दरजंगको वज़ीर बनाना चाहा किन्तु निज़ामुल्मुल्क आसफ़जाहके भयसे तदनुकूल घोषणा न की जा सकी। वह काँटा भी शीघ्र ही दूर हो गया। २१ मई (१७४८) को बुढानपुरमें आसफ़जाहकी मृत्यु हो गयी। सफ़्दरजंगको मंत्रित्वके सम्पूर्ण अधिकार मिल गये।

उधर राजपूतानेमें मारवाड़के राजा अभयसिंह और नागौरके बल्लसिंह में चल रही थी। १७४९ से १७५१ तक यह झगड़ा चलता रहा। दिल्ली

बल्लुसिंहके साथ थी। अन्तमें उसीकी विजय हुई और उसके अधिकारमें जोधपुर एवं अजमेर दोनों आ गये।

दिल्ली बल्लुसिंहका साथ इसलिए दे रही थी कि उसके द्वारा राज-पूतानेसे शेष कर मिलनेकी संभावना थी पर उसने कुछ नहीं दिया। दिल्लीने सैनिक अभियान भी किया पर कोई विशेष सफलता न हुई। १७५० में मल्हार राव होल्करने जयपुर पर हमला किया। उस समय ईश्वरीसिंह राजा था। उसमें होल्करका सामना करनेका साहस न था। उसने विषपान करके आत्महत्या करली। सब तरहकी कोशिशें हुई पर न मराठे, न दिल्लीवाले राजपूतानासे विशेष धन पा सके।

इन लड़ाइयोंमें मीर भी रियायतखानेके साथ थे। उन्होंने इन लड़ाइयों का आँखों-देखा हाल लिखा है।

बहरहाल, विवश होकर मीरबख्शी दिल्ली वापस आगया। इस अभियानसे कुछ मिलना तो दूर रहा, उलटे कर्ज बढ़ गया। राजस्थानके अभियानमें ६० लाख खर्च हुए और मुश्किलसे पाँच लाख हाथ आया। फ़ौजमें १८ हजार सिपाही थे जिन्हें साल भरसे एक पैसा वेतन न मिला था। मीरबख्शी सादातखानेके रोज़के तक्राजोंसे ऊबकर दरबारका आना-जाना छोड़ दिया। पूछने पर कहता, कोई बादशाह ही नहीं, किसके पास जाऊँ ? उस ख़ाजासराके पास जाकर इज्जत न गँवाऊँगा।

ख़ाजासरा जावेदखाने सुना तो आग-बबूला हो गया। झूठी-सच्ची गढ़कर बादशाहसे हुक्म निकलवा दिया कि सादातखानेको मीरबख्शीके पदसे हटाया जाता है। उसके घर पर पहरा बैठा दिया और तोपें लगवा दीं तथा ग़ाज़ीउद्दीनखानेको मीरबख्शी बनवाया और इन्तज़ामउद्दौलाको अजमेर का सूबेदार। इस तरह तूरानी पार्टीका जोर बढ़ा दिया। सफ़्दरजंग और जावेदखानेके बीच राजनीतिकी बिसात पर शतरंजकी चालें चली जा रही थीं। इस समय मीर रियायतखानेकी नौकरी छोड़कर जावेदखानेकी नौकरीमें आ गये थे।

१५ सितम्बर १७४८ को रूहेला सरदार अली मोहम्मदका देहावसान हुआ। अफ़वाह थी कि उसने बड़ी दौलत छोड़ी है। सफ़्दरजंगने क़ायमख़ाँ

युगकी मकड़ीके
जाले

बंगशको रुपयेका लोभ देकर रूहेलखण्डका फ़ौज-
दार बना दिया। फलतः क़ायमख़ाँ बंगश तथा
हाफ़िज़ अहमदख़ाँ रूहेलामें लड़ाई हुई और
क़ायमख़ाँ मारा गया। पर आश्चर्य सफ़्दरजंगको उसकी मृत्यु पर दुःख
नहीं हुआ, उल्टे उसने उसकी सारी जायदाद पर अधिकार करना चाहा
किन्तु क़ायमकी माँ बीबी साहबाने अपने सौतेले बेटे अहमद बंगशसे मदद
माँगी और कहा कि 'अगर खुदा तुम्हें औरत पैदा करता तो मुझे सन्न आ
जाता। तुम मर्द हो, बड़ा अफ़सोस है, मुझ पर यह वक़्त पड़े और तुम
बैठे देखते रहो।' यही नहीं, उसने अफ़ग़ान किसानोंके पास अपनी चादर
भेजी और अपनी बेकसी बताकर फ़रयाद की। इसका नतीजा यह हुआ कि
सारे फ़र्ख़ोबादमें आग लग गयी। सफ़्दरजंगके आदमियोंने वहाँ बड़े
अत्याचार किये थे। इससे सारे अफ़ग़ान किसान भड़क उठे और सफ़्दरजंग
का नायब नवलराय उनके हाथों मारा गया। सफ़्दरजंग स्वयं सेना लेकर
आया पर वह भी घायल होकर और हारकर भाग गया। बज़ीरकी हार
कोई मामूली हार नहीं थी। इसका बड़ा असर पड़ा।

बादमें सफ़्दरजंगने मल्हारराव होलकर और सूरजमल जाटसे मिलकर
अफ़ग़ानों पर आक्रमण किया और उनको बुरी तरह पराजित किया।
मीरने लिखा है :—“बज़ीर बारे दीगर लश्कर कशीदद अफ़ग़ानाँरा
मग़लूब साख़्ता तसल्लुत तमाम दर हुज़ूरआमद।”

१७५२ ई० में अब्दालीने फिर हमला किया। इसमें रूहेलोंने अब्दाली
का साथ दिया और रूहेलोंके खोये अधिकार पुनः हाथ आये। उधर सफ़्दर-
जंगने अब्दालीसे बचनेके लिए मराठोंको ५० लाख रुपये और पेशवाको
आगरा एवं अजमेरकी सूबेदारी देनेके प्रलोभन पर मददके लिए बुलाया।

पर सफ़्दरजंगके पहुँचनेमें देर हुई और बादशाहने भयवश पंजाब और सिंधके सूबे अब्दालीको सुपुर्द कर दिये । जब २५ एप्रिलको सफ़्दरजंग ५० हजार मराठा सिपाहियोंके साथ दिल्लीके समीप पहुँचा तो जावेदख़ाने उसे बताया कि अब्दालीसे सुलह हो गयी है और अब इन मराठा सिपाहियों की आवश्यकता नहीं है । सफ़्दरजंग बड़ा क्रुद्ध हुआ । सबसे बड़ा सवाल यह था कि मराठोंको जो पचास लाख देनेका वादा किया गया था वह कैसे पूरा किया जाय ? रुपया न मिलनेपर मराठे दिल्लीके पहले ही रुक गये और लूट-मार शुरू कर दी । हजारों गाँव नष्ट हो गये । दिल्ली शहरके निवासी यह सब समाचार सुनकर भयसे कांपने लगे क्योंकि न जाने कब मराठे आकर लूटने लगेँ । सफ़्दरजंग चुप था । जावेदख़ाने स्वयं मल्हारराव होलकरसे मिलकर बातचीत शुरू की । तय हुआ कि उन्हें कुछ लाख रुपये दे दिये जायें और वे ४ मईको चले जायें । इस तरह ९ दिनके त्रासके पश्चात् फिर दिल्लीने चैनकी साँस ली ।

जावेदख़ाने और सफ़्दरजंगके सम्बन्ध बिगड़ते ही गये । मौक़ा पाकर अगस्त १७५२में सफ़्दरजंगने जावेदख़ानेको क़त्ल करा दिया । उसका सिर बज़ीरके महलपर लटका दिया गया और घड़ यमुनाकी रेतीपर फेंक दिया गया ।

किन्तु जावेदख़ानेके क़त्लसे सफ़्दरजंगका कोई लाभ नहीं हुआ । उसके सम्बन्ध बादशाह और ऊधमबाईसे और बिगड़ गये । जावेदख़ानेमें बहुत-सी बुराईयाँ थीं; सभी उसे बुरा कहते थे पर उसे पद और जागीरकी लालसा नहीं थी । उसकी मृत्युके बाद सब अधिकार इन्तज़ामउद्दौला और इयादुल्मुल्कके हाथमें आ गये जो बड़े वंशके थे पर जिनकी पद एवं धन-सम्बन्धी लालसाकी सीमा नहीं थी ।*

इन्तज़ामउद्दौला मोहम्मदशाहके मंत्री क्रमरुद्दीनख़ानेका पुत्र था और

* सर यदुनाथ सरकार ।

अपनी काहिली एवं कायरताके लिए प्रसिद्ध था। वह मार्च १७५३ ई०से मई १७५४ ई० तक मंत्री रहा पर शासनमें स्थिरता एवं सुधार लानेका कोई प्रयत्न नहीं किया। इयादुल्मुल्क आसफजाहका पोता था। उसका वास्तविक नाम शहाबुद्दीन था किन्तु धीरे-धीरे इमादुल्मुल्क, फीरोजजंग मीर बख्शी और निजामुल्मुल्क आसफजाहकी उपाधियोंसे विभूषित हुआ, यहाँ तक कि जून १७५४ ई० में प्रधानमंत्री भी हो गया। यह वीर एवं साहसी था तथा काव्यका प्रेमी किन्तु धन-सम्पत्तिके लोभने इसके इन गुणोंपर परदा डाल दिया और निर्दयता तथा अत्याचारकी कहानी पीछे छोड़ गया।

जावेदख़ाँकी मृत्युके बाद 'मीर' बेकार हो गये। पर सौभाग्य-वश सफ़्दरजंगके दीवान महानारायणने आदरपूर्वक इन्हें बुलाया और अपने पास रख लिया। यहाँ 'मीर' की खूब निमी। महानारायणके दीवानखानेके दारोगा मीर नजमुद्दीन अली 'सलाम'से इनकी खूब पटती थी। यह भी अकबराबाद (आगरा) के ही रहनेवाले थे। दोनों साथ बैठते, शेर कहते, दिल्लगीकी बातें करते। मीरने स्वयं उनकी प्रशंसा की है :—

“यह आदमीयत, हुर्मत^१, अज़मत^२ सब ही औसाफ़^३के जामअ^४ हैं और मुश्कमें और इनमें बड़ा इत्तिहाद^५ है।”

इस समय सफ़्दरजंग निष्कण्टक था। वह पूरे अर्थमें प्रधान मन्त्री था। सात महीने तक बिल्कुल शान्ति रही। यदि वह दूरदर्शी होता तो इस शान्तिके कालको शासन एवं सेनाके सुप्रबन्धमें लगाता पर लोभी आदमी दूरकी नहीं देखता। फलतः इसने कुछ नहीं किया बल्कि अपने अभिमानसे बादशाह तथा सरदारोंको नाराज कर दिया।

उधर सरकारी ओहदेदारों, चौबदारों और तोपखानेके सिपाहियोंको महीनेसे वेतन नहीं मिला था। सैनिकोंका विद्रोह रोज़की बात हो गयी। वे लोग सड़कोंपर शोर मचाते, अफसरोंका रास्ता रोककर खड़े हो जाते

और महलके दरवाजोंको बन्द कर देते थे । इससे कई-कई दिन तक क़िले-वाल्लोंको न पानी मिलता, न खाना । उधर मराठे सदा दिल्लीके आस-पास चक्कर काटा करते थे और अवसर देखकर लूट लेते थे । जाटोंका भी यही हाल था—यहाँ तक कि जाटगर्दी शब्द ही उनकी ज़बर्दस्तीके लिए चल गया ।

इस समय सम्राट्की सेना दुर्बल एवं भूखकी मारी थी किन्तु स्वयं सफ़्दरजंगके पास काफ़ी बड़ी सेना थी । इसमें अधिकांश मध्य एशियाके तुर्क सिपाही थे जो 'कुलाहपोश' या 'मुग़लिया' कहलाते थे । इन्हीं दिनों मीर बख़्शी गाज़ीउद्दीन फ़ीरोज़जंगकी मृत्युका समाचार आया । १२ दिसम्बर ५२ को सफ़्दरजंगने इस पदपर शहाबउद्दीन इमादुल्मुल्कको नियुक्त करवा दिया । इस समय वह केवल १५ सालका लड़का था और फ़ौजका उसे ज़रा भी अनुभव न था ।

सफ़्दरजंगने सोचा, यों तूरानी पार्टीका एक आदमी तोड़ कर अपने में मिला लूंगा, वह आजन्म कृतज्ञता-बंधनमें बँधा रहेगा । यही उसकी आस्तीनका ग़लती थी । वह भूल गया कि उस ज़मानेमें कृतज्ञता की परवा किसीको न थी । फलतः साँप इमादुल्मुल्क आस्तीनका साँप निकला । फिर सफ़्दरजंगके खर्च दिन-दिन बढ़ते जा रहे थे । जब बादशाह अपने पहरदारों और सैनिकोंको वेतन नहीं दे पाते थे तब सफ़्दरजंगने अपने पुत्र शुजाउद्दौलाकी शादीमें पैंतालीस लाख रुपये खर्च किये । इन कारणोंसे तथा जावेदखाँके कत्लसे बादशाह बहुत दुखी रहते थे । जावेदखाँके कत्लके बाद ऊधमबाई (साहिबउज्जमानी) को तो इतना दुःख हुआ कि उसने अपने सब रत्न-आभूषण उतार फेंके और विधवाओंकी तरह सफ़ेद कपड़े पहिन लिये । सफ़्दरजंगको भय हुआ कि कहीं वह बदला न ले इसलिए उसने अन्तःपुरपर अपने आदमियोंका पहरा रखा और अन्तःपुर में भी अपने विश्वासकी आठ स्त्रियोंको रखवा दिया जो एक-एक बातपर

ध्यान रखती थीं और एक-एक चिट्ठी-पत्री पढ़ती थीं। ऊधमबाईको यह बात और बुरी लगी। वह बिगड़ गयी और उसने तुरन्त इन जासूसोंको बाहर किया। इसपर सफ़्दरजंगने नाराज़ होकर दरबारका आना-जाना छोड़ दिया। चूँकि शक्ति उसके हाथमें थी, बादशाह और ऊधमबाई दोनों को इस रूठे हुए वज़ीरको मनाने उसके घर जाना पड़ा। बादशाहने सम्पूर्ण अधिकार सफ़्दरजंगको देनेका वादा किया और यह प्रतिज्ञा भी की कि आगे कोई उपाधि या पद किसीको बिना उसकी इच्छाके नहीं दिया जायगा।

अब क्या था सफ़्दरजंगकी तूती बोलने लगी। उसने क़िलेमें आने-जानेवालोंपर बंधन लगा दिये। इससे सरदारोंने क़िलेमें जाना छोड़ दिया। १४ सितम्बर १७५३ को शुक्र (जुम्मे) की नमाज़को बादशाह गये, तब सिर्फ़ एक आदमी उनके साथ था। १६-१७ सितम्बरको दरबार हुआ तो उसमें भी सफ़्दरजंगके चन्द आदमियोंके सिवा कोई शामिल नहीं हुआ। इस समय बादशाहकी स्थिति एक क़ैदी-जैसी थी; पैसा पास नहीं; राजकीय सेवकोंको दो सालसे वेतन नहीं मिला था। जब उनका तक्राज़ा बहुत बढ़ा तो राजकोष केवल ४ मासका वेतन चुका सका। बात यह थी कि सफ़्दरजंग जो कुछ वसूल करता खुद रख लेता, सरकारी ख़जानेमें जमा ही नहीं करता था।

ऊधमबाई यह सब देखती थी और कुढ़-कुढ़कर रह जाती थी। अन्तमें हारकर मार्च १७५३में उसने षड्यन्त्र किया। क़िलेदार अबूतराबख़ाँ (जो सफ़्दरजंगका आदमी था) को निकाल बाहर किया। अब दोनोंमें चलने लगी। यह लूट झगड़ा ७ नवम्बर १७५३ तक चलता रहा।

बादशाहने शुजाउद्दौलाको निकालकर समसामउद्दौलाके बेटे (समसाम द्वितीय) को रखा और अबूतराबख़ाँकी जगह अहमदअंगाको क़िलेदार बनाया। सफ़्दरजंगने सूरजमल जाटको दिल्लीपर हमला करनेके लिए उकसाया।

जाटों ने नगरप्राचीर तक खूब लूट-मार की और लाखों रुपये एकत्र किये । मुहल्ले के मुहल्ले तबाह हो गये । पुरानी दिल्ली के लोगों का यह हाल था कि लोग जान के डर से इस मुहल्ले से उस मुहल्ले, उस मुहल्ले से इस मुहल्ले भागते फिरते थे । विवश होकर बादशाह ने सफ़्दरजंग को पद से हटा दिया और उसकी जगह एतमादउद्दौला को मंत्री बनाया तथा इमादुल्मुल्क मीर बख्शी को निज़ाम एवं आसफ़जाह की उपाधियाँ प्रदान कीं । सफ़्दरजंग ने विद्रोह किया । उसने बादशाह के अधिकार एवं आदेश को मानने से इन्कार कर दिया । उसने शुजाउद्दौला द्वारा खरीदे हुए एक युवक खाजासरा को अकबर आदिलशाह की उपाधि के साथ सिंहासन पर बिठाया, स्वयं उसका वज़ीर बना । इमादुल्मुल्क ने बड़ी चालाकी के साथ सफ़्दरजंग के तुर्क सिपाहियों को तोड़ लिया और इस तरह २३ हजार की सेना बना ली । उसने सफ़्दरजंग के साथी ईरानियों के मकानों को लूटने का हुक्म दे दिया । हजारों घर लुट गये । २९ सितम्बर को खुलकर लड़ाई हुई । बादशाह एवं इमादुल्मुल्क की सहायता के लिए नजीबख़ाँ रूहेला भी आ गया था । स्वभावतः बादशाह ज्यादा प्रबल हो गया पर इमादुल्मुल्क एवं वज़ीर इन्तज़ामउद्दौला की पारस्परिक प्रतियोगिता बीच में आ पड़ी । उधर बादशाह की आर्थिक स्थितिके कारण भी मामला बिगड़ गया । इस समय बादशाह के पास ८० हजार सिपाही थे जिनको वेतन देने के लिए उसके पास धन नहीं था । उसने अपने रत्नादि बेच दिये, महल का सामान बेचा पर पूरा न पड़ा । भूखे सिपाही दिल्ली की गलियों में लूट-मार करते फिरते थे । दोनों पक्ष पस्त थे इसलिए जयपुर नरेश माधवसिंह ने बीच में पड़कर सुलह करा दी । सफ़्दरजंग अवध चला गया ।

सफ़्दरजंग के अवध जाने के ६ मास तक का समय बड़ी अव्यवस्था और अशान्तिका समय था । उपर्युक्त दोनों प्रधान अधिकारियों की पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता में सब कुछ चौपट हो गया । ८० हजार सैनिकों का खर्च २४ लाख मासिक था । ७ मास युद्ध चला, इस तरह १ करोड़ ६८ लाख तो

सिर्फ वही देने थे । पुराने सिपाहियोंको तो दो सालसे बेतन नहीं मिला था । रहेले और मराठे अलग रुपये माँगते थे ।

उधर जाटोंने सफ़्दरजंगके बिद्रोहकालमें अपनी शक्ति खूब बढ़ा ली थी । सूरजमलने महाराज जयपुरसे मैत्री कर ली थी । मराठोंने सूरजमलसे

जाट-मराठा
संघर्ष

दो करोड़ रुपये माँगे । उसने ४ लाखपर सौदा करना चाहा जो न हो सका । इसलिए मल्हार-राव होल्करने १६ जनवरी १७५४ को डीग,

भरतपुर और खम्भीर पर आक्रमण कर दिया । सूरजमलने देखा, मराठोंकी सेना अधिक है, इसलिए खम्भीरके किलेमें बन्द हो गया । मराठोंके पास तोपें नहीं थीं इसलिए उनका घेरा सफल नहीं हुआ । इस घेरेमें १५ मार्च १७५४ को खण्डेराव होल्कर मारा गया और उसकी नौ पत्नियाँ उसके साथ सती हो गयीं ।

पुत्र-शोकसे बूढ़ा मल्हारराव पागल हो गया और उसने बदला लेनेका निश्चय कर लिया । मज्जा यह कि उसके शोकमें शत्रु-मित्र सब सम्मिलित

बादशाहकी
बेबसी

हुए । सूरजमल तकने शोक-वस्त्र धारण किये । लड़ाई चलती रही । खम्भीर गढ़की दीवारें मिट्टीकी थीं पर टससे मस न हुईं । इसलिए

चार मासके घेरेके बाद सन्धि हो गयी और तय पाया कि जाट मराठोंको तीस लाख रुपये तीन किस्तमें देंगे और वह दो करोड़ रुपये जो इमादुल्मुल्क और मरहठोंने बादशाहकी तरफ़से माँगे थे, सुविधानुसार मीरबख्शी और होल्करको दिये जायेंगे । इस समय इमादुल्मुल्क ही सबसे शक्तिमान् सरदार था । उसीके कारण सफ़्दरजंगकी हार हुई थी, उसीने जाटोंकी प्रबलताको रोक दिया था तथा होल्कर उसीका सहायक था । किन्तु उसकी भी कठिनाई यही थी कि पैसा पास नहीं था । जो कुछ पूर्वजोंकी कमाई थी वह भी सफ़्दरजंगसे संघर्षमें खर्च हो चुकी थी; राजकोष रिक्त था और प्रान्तोंकी आय बन्द थी । विवश होकर उसने खालसा ज़मीनोसे

रुपया वसूल करना शुरू कर दिया और फरवरी १७५४ ई० में कोल एवं सिकन्दराबाद पर अधिकार कर लिया। उसने आक्रबतमहमूदको रिवाड़ी भेजा कि वहाँ पैसा एकत्र करे। यह बात बादशाहको बड़ी बुरी लगी क्योंकि उसका अवलम्ब ये ज़मीनें ही थीं; वह द्वार बन्द हो जानेसे महल-वालोंको उपवासपर उपवास होने लगे। उधर सिपाही वेतन माँगते थे। बादशाह बड़ा परीशान था। उसने बार-बार बख्शीको लिखा कि वह सिपाहियोंका वेतन चुका दे किन्तु वह बराबर टालमटोल करता रहा। खम्भौरके घेरेके बाद यह सम्बन्ध और बिगड़ गया। क्योंकि वहाँ तोपें भेजनेमें बादशाहके टालमटोल करनेपर इमादुल्मुल्कने आक्रबतमहमूदको मराठी सेनाके साथ भेजा। महमूदने दिल्लीके घनियोंको खूब लूटा। उधर सेनाके भूखे सिपाहियोंने हर जगह लूट-मार शुरू कर दी। किले वालोंको खाना भी न मिला। खारी बावली और लाहौरी दरवाज़ाके समीप हज़ारों घर वीरान और बेचिराग हो गये और लाशोंके ढेरके ढेर लग गये। आक्रबतमहमूद बराबर सिकन्दराबाद पर छापे मारता रहता था। पूछनेपर कहता कि तुर्क सिपाही उसके नियंत्रणमें नहीं हैं और अपनी तनखाहें वसूल करनेके लिए लूटमार करते हैं।

बिचसा हो बादशाह अहमदशाहने स्वयं सिकन्दराबाद जानेका निश्चय किया। पर तोपचियोंने बिना वेतन लिये एक पग आगे रखनेसे इन्कार कर दिया। शाही हाथी भी चार दिनके भूखे थे और उनमें बोझ उठानेकी शक्ति ही न थी। एक तो सामान ही क्या था, दूसरे उसे ले जानेके लिए कोई गाड़ी भी सुलभ न थी क्योंकि नक़्क़द दाम लिये बिना कोई इस सेवाके लिए तैयार नहीं था। किसी प्रकार २७ एप्रिलको यह दल रवाना हुआ। दो एक दिन बाद ऊधमबाई तथा दूसरी बेगमें भी पहुँच गयीं और सिकन्दराबाद बादशाहके अधिकारमें आ गया।

पर इससे बादशाहको कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। मराठों और जाटोंने सुलह कर ली। समाचार मिला कि वे बादशाहपर आक्रमण

करेंगे। इससे बादशाह इतना घबड़ाया कि रोने लगा और ईश्वरसे प्रार्थना की कि किसी तरह यह बला टल जाय पर बला टलनेवाली न थी। होलकर की सेनाएँ सिकन्दराबादके पास आती जा रही थीं। बादशाह दिल्ली भाग गया और इस परीशानीमें भगा कि बेगमोंको भी साथ न ले जा सका और वे (ऊधमबाई और साहब महल इत्यादि) मराठोंके हाथ बन्दिनी हुईं। उनके आभूषण छीन लिये गये। होलकरने ऊधमबाईके साथ सद्-व्यवहार किया पर अन्य बेगमोंको बड़े कष्ट उठाने पड़े। कुछ तो पैदल और नंगे सिर भागती-भागती, भूखी-प्यासी दिल्ली पहुँचीं। विवश हीकर बादशाहने इन्तजामउद्दौलाको हटा दिया और इमादुल्मुल्कको बखीर बनाया। २ जून १७५४ को इमादुल्मुल्क बादशाहकी सेवामें उपस्थित हुआ और कुरान शरीफपर हाथ रखकर बादशाहके प्रति वफ़ादारीकी क़समें खाई और कहा कि मैं अपना खून बहाकर आपकी रक्षा करूँगा।

पर ज़माना ऐसा आ गया था कि लोगोंके चरित्र गिर गये थे। किसी का भरोसा न था। कुरानको इन्सान धोके-घड़ीके लिए प्रयुक्त करने लगा था। इमादुल्मुल्कने उधर क़समें खाई इधर शाह आलम बहादुरशाहके बेटे आलमगीर द्वितीयको तख़्तपर बैठा दिया और जिसकी निष्ठाकी क़समें खाई थीं उसीके साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया कि मानवता शर्मसे पानी-पानी हो गयी। अहमदशाह डरके मारे रंगमहलकी झुरमुटोंमें छिप गया। जब पता लगा तबतक प्याससे उसका गला सूख गया था। उसने पानी माँगा तो आक्रबत महमूदके भाई सैफ़ुद्दौलाने वहीं पड़े एक मिट्टीके ठीकरेमें पानी डालकर उसके मुँहमें लगा दिया।

इमादुल्मुल्क भी चैनसे न बैठ सका। उसके हाथमें सब कुछ था पर शाही फ़ौजको सन्तुष्ट करनेका कोई उपाय न था। उसे न जाने कबसे बेतन नहीं दिया जा सका था। सैनिक फ़ाक़े कर रहे थे। बे रोज़ व्यापारियों और अमीरोंके घर लूटते थे और कोई रोकनेवाला न था। २१ जून १७५४ को तोपखानेके सिपाहियोंकी माँगोंने इतना उग्र रूप धारण किया कि उन्होंने

क्रोधमें आक्रबत महमूदके कपड़े फाड़ डाले। इमादने भी सारा दोष आक्रबतपर डाल दिया और तीन दिन बाद उसे क़त्ल करके उसकी लाश यमुनाकी रेतीपर फेंकवा दी। अहमदशाह बादशाह और उसकी माँ की आँखोंमें सलाइयाँ फेरकर उन्हें अन्धा कर दिया गया। मीरने इन घटनाओंका बड़ा दर्दनाक वर्णन किया है। उनका निम्नलिखित शेर भी इसी घटनाकी ओर इशारा करता है—

शहाँ कि कहले जवाहर थी खाके पा जिनकी
उन्हीं की आँखों में फिरती सलाइयाँ देखीं।

आलमगीर द्वितीय ५५ सालकी उम्रमें तख्तपर बैठा। उसका जीवन कष्टोंमें ही बीता था। इतिहास और साहित्यका दीवाना था। अधिकांश बूढ़े की विलासिता समय अध्ययनमें व्यतीत करता था। औरंगज़ेबकी भाँति वह भी पाँचों समय नमाज़ पढ़ता और सरल जीवन बिताता था। एक-एक सरकारी कागज़को स्वयं पढ़ता। मतलब अपने कर्तव्यके प्रति जागरूक था पर उसे सैनिक एवं शासनसम्बन्धी अनुभव बिलकुल न था, न दृढ़ता थी। इसलिए अपनी सारी अच्छाइयोंके होते हुए भी वह इमादुल्मुकके हाथकी कठपुतली बन गया।

फिर वह विलासी भी था। बुढ़ीतीमें भी नई-नई शायियाँ करता था। फरवरी १७५६ में जब उसकी उम्र साठके निकट पहुँच रही थी, उसने स्व० मुहम्मद शाहकी कन्या हज़रत बेगमसे शादीका इरादा किया। हज़रत बेगम अनिन्द्य सुन्दरी थी और केवल १६ सालकी थी। लड़कीने दृढ़तासे काम लिया और विवाहसे इन्कार कर दिया। यह भी कहा कि यदि मुझे अधिक तंग किया गया तो मैं ज़हर खा लूँगी। आलमगीर (द्वितीय) ने उसे एकान्त बन्दीगृहमें डाल दिया। १ सितम्बर १७५८ को बादशाहने

जीनत अफ़रोज़ बेगमसे शादी की—यह उस वक्तका हाल है जब जनाबको चक्कर पर चक्कर आते थे और साँस उखड़ी जाती थी ।

अशिक्षित इमादुल्मुल्कके कष्ट भी बढ़ते गये । रुहेल्लोके हाथों उसकी बड़ी दुर्गति हुई । उसे पानीपतकी सड़कोंपर घसीटा गया और उसकी बेगमोंके साथ अनेक प्रकारके दुर्य्यवहार किये गये ।

इन दिनों रुहेले ज़ोरों पर थे । १७५७ के अब्दालीके भयंकर आक्रमणके बाद नजीबुद्दौला तेज़ीसे उठ रहा था । अब्दालीने इमादुल्मुल्कको अलग कर दिया । इमाद मराठोंसे मिल गया । सितम्बर ५७ में मराठोंने हमला करके नजीबको निकाल बाहर किया और अहमद खाँ बंगशको मीरबख्शी बनाया । बंगश बराबर बीमार रहता था इसलिए उसकी आड़में मरहटे ही कर्त्ता-धर्त्ता थे ।

इस समय दिल्लीमें बादशाहका शासन नाम-भरको था । आर्थिक स्थिति अवर्णनीय रूपसे बिगड़ चुकी थी । बादशाहके नौकर-चाकर भूखों मर रहे थे । स्वयं बादशाहके पास ईदगाह तक जानेके लिए सवारी न थी । १० मई १७५८ को वह महलसे पत्थरवाली मस्जिद तक पैदल गया । सिपाहियोंको ५-६ सालसे वेतन नहीं मिला था । उन्होंने अपने घोड़े और कपड़े तक बेच दिये थे । शाही अस्तबलके जानवर भूखों मर रहे थे, उन्हें कई-कई दिनों तक फ़ाके होते थे । बेगमोंको प्रायः उपवास ही करना पड़ता था । एक दिन शाकिरखाँ शाहज़ादा आलीगुहरके सामने खैरातख़ाने का शोरबा ले गया । शाहज़ादेने कहा कि यह महलकी बेगमोंको दे दो जिनके मुँहमें तीन दिनसे एक दाना नहीं गया है । 'तारीख़ आलमगीर सानी' में लिखा है कि एक दिन क़िलेकी बेगमें भूखसे बिलबिला उठीं और पर्देका कुछ ख़्याल न कर महलसे शहरकी ओर जाने लगीं । किन्तु क़िलेके द्वार बन्द थे इसलिए वहीं चुप होकर बैठ रहीं और एक रात तथा एक दिन इसी तरह बैठी रहीं । १७५७ में दो बार अब्दालीने दिल्लीको लूटा; पाँच महीने नजीबुद्दौलाने लूट-खसोट जारी रखी । अनेक प्रकारकी

महामारियाँ फैल रही थीं। चारों ओर दुर्मिक्षका राज था। खाद्य द्रव्यका बाजारोंमें बड़ा अभाव था। मूंगकी दाल दो रुपये सेर बिकती थी और इमली सौ रुपये सेर। बेरोजगारी बराबर बढ़ती जाती थी; चोरी-डाका आम बात थी। नवम्बर १७५८ में भूकम्प भी आया जिसमें बहुतसे आदमी मर गये। इस समय मराठे पंजाब तक पर छा गये थे। मार्च ५८ में उन्होंने सर हिन्द तक ले लिया था। वे बढ़ते ही गये और अटक तक पर उनका अधिकार हो गया। वहाँ अपना आदमी रखकर वे फिर दक्षिण चले गये।

२९ नवम्बर १७५९ को इमादुद्दौलाने बादशाह (आलमगीर द्वितीय) और अपने प्रतिद्वन्द्वी इन्तजाम दोनोंको क़त्ल करवा दिया। इधर अहमद-शाह अब्दालीने पुनः आक्रमण कर दिया। १७६० में बरारी घाट (दिल्लीसे दस मील उत्तर स्थित) पर मराठों एवं अब्दालीमें घमासान लड़ाई हुई। इसमें दत्ताजी मारे गये, जनकोजी सिंधिया घायल हुए, मराठोंकी बुरी हार हुई। 'मीर' ने 'जिन्नेमीर' में लिखा है कि अब दिल्ली में न कोई बादशाह था, न कोई वज़ीर। उसकी हालत विघवासे अधिक व्यथाजनक थी। अब्दालियोंने उसे मन भर लूटा। इस लूट और बर्बादी का विस्तृत वर्णन मीरने लिखा है:—

“.....में शहरमें ही रहा। शामके बाद मुनादी हुई कि शाह अब्दालीने सबको क्षमाप्रदान कर दी है; रियायतों से कोई परीशान न हो;

दिल्ली की
लाचारी

लेकिन थोड़ी-सी रात गुज़री थी कि दुर्रानियोंने जुल्म शुरू कर दिया। शहरको आग लगा दी। घर जला दिये। अगली सुबह क़यामतकी सुबह थी।

अफ़ग़ान और रूहेले हत्या और विध्वंसमें लग गये। उन्होंने मकान तोड़ डाले, लोगोंकी मुश्कें कस लीं; अक्सरको जला दिया या उनके सिर काट लिये। एक आलम खाक और खूनमें मिल गया। तीन रात और दिन यह जुल्म जारी रहा। दुर्रानियोंने खाने-पीनेकी कोई चीज़ न

छोड़ी। उन्होंने छतें और दीवारें तोड़ डालीं और लोगोंके सीने जख्मी कर दिये। राज्यके सरदार फ़क़ीर हो गये, वज़ीर और शरीफ़ नंगे और बड़ी-बड़ी हवेलियोंवाले गृहहीन।.....लोगोंके बीबी-बच्चे क़ैद थे। और क़त्ल व ग़ारतका सिलसिला बिना रोक-टोक जारी था। अफ़ग़ान ज़लील करते और ग़ालियाँ देते थे और तरह-तरहके जुल्म करते थे। जो चीज़ मिली लूट ली। नई दिल्ली यानी शाहजहानाबाद खाकके बराबर हो गयी। इसके बाद यह बेरहम पुरानी दिल्लीकी तरफ़ मुतवज्जह हुए और बेशुमार लोगोंको हलाक कर डाला। सात आठ दिन तक यही हंगामा गर्म रहा। किसीके घर पहननेके कपड़े और एक दिनके खाने तकका सामान न रहा। मदोंके सिरपर टोपी और औरतोंके सिर पर दुपट्टा तक नहीं था। मुसीबतज़दोंकी फरियाद आसमान तक पहुँचती लेकिन अब्दालीके कान पर जूँ न रेंगती। बहुत-से लोग दिल्ली छोड़कर लखनऊ चले गये और वहाँ मर गये।”

इस हंगामेमें मीर साहबकी हालत, जो पहिले से ही ख़राब थी, बहुत बुरी हो गयी। उनका तकिया या निवासस्थान भी मिट्टीमें मिला दिया गया। यह दुखी हो, राजा जुगलकिशोरकी आज्ञा ले, शहरसे निकल गये। ८-९ मील चलनेके बाद रात एक पेड़के नीचे बिताई। प्रातः राजा जुगलकिशोरकी पत्नी उधरसे गुज़रीं। वह इनको और इनके साथियोंको बरसाना ले गयीं। फिर वहाँसे जब कामान गयीं तब यह भी गये। वहाँ लाला राधाकिशनके पुत्र बहादुरसिंहने इनकी इज़्जत की और अपने पास रखा। फिर राजाके छोटे लड़केने इन्हें अपने यहाँ बुला लिया और भली-भाँति रखा। इस प्रकार उस कठिनाईके समय अनेक सम्पन्न हिन्दुओंने मीरकी सहायता की। वस्तुतः उस समय साम्प्रदायिक दृष्टिकोण उच्च वर्गोंमें था ही नहीं।

मराठोंकी हारको पेशवा भूले नहीं थे। ज़रा अवकाश पाते ही सदा-शिवराव भाऊ को, एक बड़ी सेनाके साथ, उन्होंने उत्तरकी ओर रवाना

किया। इस सेनाने २ अगस्त १७६० को दिल्लीपर अधिकार कर लिया। अवधके नवाब शुजाउद्दौला इस प्रयत्नमें थे कि पेशवा और अब्दालीमें

भाऊ की किसी तरह सुलह हो जाय, शाह अलम द्वितीय, जो विहारकी ओर था और जिसकी अनुपस्थितिमें शाहे तुनुकमिर्ज़ाजी जहाँ द्वितीय गद्दी पर था, को दिल्लीकी गद्दी मिले

एवं उसके ज्येष्ठ पुत्र मिर्ज़ा जवान वस्तुको युवराज बनाया जाय तथा अब्दाली एवं मराठे दोनों अपने-अपने देशको लौट जायें। इस प्रस्ताव पर इमाद बिगड़ गया तथा जाटराज सूरजमल आगबबूला हो गये। दोनों बिना भाऊ से पूछे बल्लभगढ़ लौट गये। इससे मराठोंको बड़ी हानि पहुँची। भाऊके स्वभावमें कठोरता थी। वह किसीकी कुछ सुनता न था। उसने सूरजमलसे कहा, “तुम तो निरे ज़मींदार हो, सैनिक अभियानका तुमको क्या ज्ञान?” बूढ़े होलकरके लिए कहा—“वह तो सठिया गया है, और उसकी कोई बात बुद्धिसंगत नहीं होती।” इस प्रकार उसने सबको नाराज कर दिया। १७६१ में अब्दाली और मराठोंके बीच पानीपतकी मशहूर लड़ाई हुई। मराठोंकी सबसे बड़ी कठिनाई रसद और रुपयेकी थी। सिपाही भूखे, घोड़े भूखे। अन्तमें १३ जनवरीको भूखे सैनिक भाऊके पास पहुँचे और कहा—“आज दो दिनसे हममेंसे किसीके मुँहमें एक दाना नहीं गया। हम यों एड़ियाँ रगड़-रगड़ के मरना नहीं चाहते, आज्ञा दीजिए कि मर जायें या शत्रुको मार भगायें।” फलतः १४ जनवरीको भयानक घमासान मच गया। मराठे तथा उनकी ओरसे इब्राहीम गर्दी ऐसी बहादुरीसे लड़ा कि शत्रुओंने भी उसकी प्रशंसा की पर भूखी असन्तुष्ट

सेना कब तक लड़ती। फलतः मराठे हार गये। बार-बार लुटी पर्याप्त धन, घोड़े, ऊँट अफ़ग़ानोंके हाथ लगे। दक्षिण दिल्ली में मातम छा गया। पेशवाका पुत्र विश्वासराव मारा

गया; भाऊका सिर काट लिया गया और दो दिनके बाद उसकी लाश मिली; यशवंतराव, तिनकोजी सिंधिया, जनकोजी सिंधिया, इब्राहीम

खाँ, शमशेर बहादुर इत्यादि बड़े-बड़े सरदार एवं नायक मारे गये; संता जी को चालीस घाव लगे और महादजी सिंधियाके पाँवमें बह चोट लगी कि उम्र भर ठीक न हुई। सदाशिव राव भाऊकी उच्चाशयता, आत्मत्याग, वीरता असंदिग्ध होते हुए भी उसके स्वभावने उसके पक्षको दुर्बल कर दिया। इस हारने भारतका इतिहास बदल दिया। कहाँ मराठे भारतीय राष्ट्रके नेता थे, कहाँ इस हारका ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रभाव हुआ कि उनका साथ देना प्रत्येकने खतरनाक समझ लिया। वे इतने हतप्रभ हो गये कि उनकी भागती सेनाकी टुकड़ियोंको गाँवकी औरतोंने लूट लिया।

२९ जनवरी १७६१ को अब्दाली, कोहेनूर लगाये और रत्नजटित वस्त्राभूषणोंसे सज्जित, दिल्ली आया। उसने महलमें रहना शुरू किया। चाहता था कि कुछ महीने आरामसे गुजारे किन्तु उसके सैनिक घर जानेके लिए बेचैन थे इसलिए उसने २० मार्चको कूचका हुक्म दे दिया। इन सैनिकोंने भी दिल्लीको खूब लूटा। मीर लिखते हैं:—

“.....एक रोज़ शहरको निकला। चलते-चलते शहरके एक ताजे वीरानेमें पहुँचा। हर कदम पर आँसू बहाता....जैसे-जैसे आगे बढ़ता गया, मेरी हैरत बढ़ती गयी, मकान पहचाने नहीं जाते थे, मकानोंका कहीं पता नहीं था। मकान टूटे हुए, दीवारें बैठी हुई, खानकाहें बेसूफ़ीके और खराबात बेमस्तके वीरान पड़े थे।....बाज़ार कहाँ जिनका जिक्र करें, तिप्रलां तहे बाज़ार कहाँ, हुस्न कहाँ जिसको पूछूँ, जवानाने रैना चल बसे, पीराने पारसा गुज़र गये, महले खराब कूचे बर्बाद, हर तरफ़ बहशत हवैदा और उन्स नापैदा।....नागाह उस मोहल्लेमें पहुँचा जहाँ मेरा घर था, दिन रात सोहबतें गर्म रहती थीं, शेर पढ़ता था और आशिकाना बसर करता था, रातोंको रोता था और हसीनोंसे झूझ करता था, वहाँ कोई शनासा तक न मिला कि दो घड़ी बातें कर लूँ। कुछ देर खड़ा हैरतसे तकता रहा। सख्त सदमा हुआ और अहद किया कि अब फिर न आऊँगा और जबतक ज़िन्दा हूँ शहरका क्रन्द न करूँगा।”

मीर लिखते हैं:—“खूँकि अफ़ग़ानोंका गुरुर हृदसे गुज़र गया था इसलिए ग़ैरते इलाहीने उन्हें सिखोंके हाथों ज़लील किया” उन्होंने इस क्रूरदर दिक़्र किया कि ये भागे-भागे फिरते थे और कहीं पनाह नहीं मिलती थी। “सिख इनका पीछा करते हुए दरियाए अटक तक पहुँचे और उस सूबे पर मुतसर्रिफ हो गये। चंद दिनों बाद” उन्होंने लाहौर भी ले लिया।”

उधर १२ जून १७६१ को सूरजमलने आगरा (अकबराबाद) पर क़ब्ज़ा कर लिया। इस समय आगरा सबसे मालदार शहर था। दिल्लीकी बरबादीने इसे आगे बढ़ाया और समृद्ध किया। सूरजमलके हाथ पचास लाखकी रक़म आई। अस्त्र-शस्त्र, सामान, आभूषणका अनुमान करना कठिन है। सब सामान भरतपुर एवं डीग भेज दिया गया।

२९ नवम्बर १७५९ को आलमगीर द्वितीय मारा गया था। तबसे उसका बड़ा बेटा शाह आलम मारा-मारा फिरता रहा था, उसे दिल्ली आनेकी आज्ञा न थी। १२ वर्ष बाद उसका निर्वासनकाल समाप्त हुआ और उसने बादशाहके रूपमें दिल्लीमें प्रवेश किया (१७७२)। वह दिल्ली के राजकुमारोंमें सबसे योग्य था। वह अरबी, फ़ारसी, तुर्की, संस्कृत तथा कई भारतीय भाषाएँ जानता था। वह उर्दू, फ़ारसी तथा हिन्दीमें कविता करता था। उर्दू फ़ारसीमें ‘आफ़ताब’ के नामसे और हिन्दीमें शाहआलमके नामसे। शाहआलमके हिन्दी, फ़ारसी, उर्दू और पंजाबी शेरोंका संग्रह ‘नादिराते शाही’ रामपुरसे प्रकाशित हो गया है।

किन्तु उस युगमें देश और जातिका चरित्र गिर गया था। हर आदमी देशकी जगह अपने लाभकी बात सोचता था और उसके लिए बुरासे बुरा काम करनेको तैयार हो जाता था। इमाद स्वयं साहित्यिक व्यक्ति था; हर समय हाथमें तसबीह फेरता रहता था पर ज़रा-से लाभके लिए मित्रसे मित्रको क़त्ल करवा देता था। वह स्वयं शाह आलमका शत्रु था।

१७६३ में रूहेला सरदार नजीबुद्दौला तथा सूरजमलमें भी मिडन्त

हो गयी। इसी लड़ाईमें सूरजमल मारे गये। उधर अवधके नवाब शुजाउद्दौला तथा मरहठोंने मिलकर अंग्रेजोंसे लड़ाई की पर सफल न

सूरजमलका

अन्त

हुए। तब शुजा अवध चले गये; मराठे भाग कर ग्वालियर पहुँचे और फिर सूरजमलके पुत्र जवाहरसिंह पर आक्रमण कर दिया।

जवाहरसिंहने आठ-दस हजार सिख सैनिकों एवं अपने जाटोंकी सहायतासे मराठोंको खदेड़ दिया। मल्हार रावको इतना दुःख हुआ कि चन्द दिनों बाद मर गया।

इसके बाद मीरने जवाहरसिंह एवं जयसिंहके पुत्र माधवसिंह (जयपुर) के युद्धका वर्णन किया है। दक्षिणी राजपूतोंसे और सिख जवाहरसिंहसे मिल गये। इस प्रकार एक न एक युद्ध होता रहता था और देश बरबाद होता जा रहा था।

१७६८ में किसीने अकबराबाद (आगरा) में जवाहरसिंहको क़त्ल कर दिया और उसका भाई राव रतनसिंह गद्दी पर बैठा किन्तु वह व्यभिचारी, मद्यप एवं अत्याचारी था और किसीके द्वारा मार दिया गया। १७७० (३१ अक्तूबर) में नजीबुद्दौला भी मर गया।

ऊपर लिखा जा चुका है कि शाह आलमका निर्वासन १२ वर्षमें समाप्त हुआ। १७७२ में उसने दिल्लीमें प्रवेश किया। किन्तु सिंहासन में वास्तविक शक्ति न रह गयी थी। न खजाना था, न कोई निष्ठावान साथी था। देशकी हालत यह कि कहीं मराठे उठते हैं, कहीं जाट लूटते हैं, कहीं अफ़ग़ान अत्याचार कर रहे हैं; उधर अंग्रेज धीरे-धीरे एक ओर बिहार और दूसरी ओर मद्रासकी तरफ़ बढ़ते चले जा रहे हैं।

१७७४ के आस-पास शुजाउद्दौलाकी तूती बोल रही थी। अंग्रेज भी उसके सहायक थे। वारेन हेस्टिग्सकी सहायतासे उसने रूहेलों पर हमला कर दिया। रूहेला रहमतख़ाँ बड़ी बहादुरीसे लड़ा पर युद्धभूमिमें मारा गया।

यहाँसे लखनऊ लौटते ही शुजा बीमार हो गया और अच्छीसे अच्छी चिकित्सा भी उसे बचा न सकी। १७७५ में उसकी मृत्यु हो गयी और आसफ़उद्दौला अवधकी गद्दीपर बैठा। इन्हींके निमंत्रणपर मीर लखनऊ आकर रहे थे।

देशकी दशा इतनी अस्थिर थी कि कल क्या होगा और कौन किसके साथ होगा, कोई नहीं कह सकता था। पर इतना निश्चित था कि दिल्ली शक्तिहीन, बेबस थी और कोई न कोई उसपर हावी रहता था। सबसे ज्यादा भय उसपर मराठोंका था। बीच-बीच में वे भगा दिये जाते थे या चले जाते थे पर फिर आ जाते थे। इधर उनका जोर फिर बढ़ा। दिल्ली और बादशाहपर उनका प्रभुत्व-सा था। वे जहाँ चाहते बादशाहको ले जाते, जिस रूपमें चाहते उसका उपयोग करते।

उधर जाब्ताख़ाँके पुत्र रूहेला गुलाम क़ादिरका जोर सहारनपुरकी तरफ़ बढ़ रहा था। उसने सिखोंकी सेनासे मिलकर दोआबके बहुतेरे शाही

गुलाम क़ादिर
के अकल्पनीय
अत्याचार

क्षेत्रोंपर क़ब्ज़ा कर लिया। धीरे-धीरे वह इतना प्रचण्ड हो गया कि बादशाहसे भी माँगें करने लगा पर बादशाहने स्वीकार न किया। तब वह लड़नेपर आमादा हो गया। एक मास तक छिट-पुट लड़ाई होती रही। फिर वह आगरेकी ओर चला गया। वहाँ मिर्जा इस्माइल बेग़ क़िल्लेमें घिरा हुआ था। दोनोंके बीच मित्रताके वादे हुए। दोनों मिल गये और मराठोंसे मिलनेका निश्चय किया पर अवसर आया तो सारा बोझ मिर्जा इस्माइल पर पड़ा। वह बड़ी बहादुरीसे लड़ा और मराठोंको भगा दिया पर वे नई सेना लेकर फिर आ गये जिसमें मिर्जाकी गहरी पराजय हुई। गुलाम क़ादिर तमाशा देखता रहा। इससे मिर्जा निराश होकर अपने क्षेत्रमें लौट गया।

गुलाम क़ादिर बादशाहके नाज़िर मंज़ूरअलीख़ाँके साथ मिलकर बादशाह पर अपना प्रभुत्व जमानेके षड्यन्त्र करने लगा। इसमें उसकी

दादी ऊधमबाई और साहिबा महल भी शामिल थीं। वह किलेमें पहुँचा और मिर्जा बेदारबस्तका हाथ पकड़कर तल्लतपर बैठा दिया। अब धीरे-धीरे उसने सारे किले और महलपर वह अधिकार जमाया कि बादशाह कैदी हो गया। गुलाम क़ादिरके भयंकर अत्याचारसे इतिहास लज्जित होता है। उसने शाहआलम एवं उसके बेटोंपर अत्याचार करना आरम्भ किया। शरीरके कपड़े तक उतार लिये; छोटे-छोटे बच्चों तकको खाने-पीनेसे वंचित कर दिया। शाह आलम कहता—यदि अपराध किया है तो मैंने किया है; इन बच्चोंका क्या अपराध है। पर गुलाम क़ादिर ज़रा भी ध्यान न देता; वह आदमी नहीं शैतान था। दो दिन-रात भूख-प्याससे तड़पकर बच्चे मर गये तब राजा मनबहार सिंहने बड़ी खुशामद करके अट्टाईस रोटियाँ और दो बहंगी पानी भेज दिया। बादशाहके सैकड़ों स्वजन थे इसलिए एक टुकड़ा रोटी और चार बूँद पानीका औसत भी नहीं पड़ा। मिर्जा मेंदूने गुलामक़ादिरसे छिपाकर चौदह रोटियाँ और एक घड़ा पानी शाह आलमके पास भेजा। किसी तरह पता लग गया। आदमी बन्दी करके गुलाम क़ादिरके सामने लाया गया और उसे कुत्तोंके सामने डाल दिया गया।

क़ादिरने महलोंकी तलाशी ली। मिर्जा अकबरशाहके मकानमें चार हज़ार अशफ़ियाँ, चौदह हज़ार रुपये, एक मन सोनेके बर्तन, चार मन चाँदीके बर्तन, पैंतीस मन ताँबेके बर्तन, दस तल्ला दुशाले और पन्द्रह गठरियाँ किखाब की बरामद हुईं। इसी प्रकार सबके यहाँसे कुछ न कुछ प्राप्त हुआ। उसने नवाब ताजमहल, नवाब शाहाबादी, मुबारक महल तथा रानी जयपुरका माल ज़ब्त किया। नवाब शाहाबादीके मकानसे दो सन्दूक मुहरें, दस हज़ार अशफ़ियाँ, चालीस हज़ार रुपये, एक छोटा सन्दूक जवाहरात, सोनेका एक, चाँदीके पाँच मन बर्तन, एक सन्दूक स्वर्णभूषण तथा अन्य सामान बरामद हुए। बेलदारोंने रानी जयपुरीके मकानकी एक-एक दीवारको तोड़ा तो दो हज़ार अशफ़ियाँ और तीस हज़ार रुपये निकले। बेदारबस्तने सरफ़राज़ तथा तमकीन नामक खाजासरोको आदेश

दिया कि शाहआलमके महलोंकी परिचारिकाओंको लकड़ीसे बाँधकर कोड़ोंसे मारा जाय । हर महलसे रोने-पीटनेकी आवाज आने लगी । जो कुछ उनसे मिला, ले लिया और उनको नंगे सिर निकाल दिया । उसके बाद अपने बापकी छोकरीयोंको माल-असबाबका पता बतानेके लिए मारा-पीटा, उन्होंने दो स्थान बताये । वहाँसे दो सन्दूक चाँदीके बर्तनों और जवा-हरातके बरामद हुए ।

चंद दिन बाद गुलाम क़ादिर रंगमहलमें गया और एक-एकको बुलाकर कहा कि रुपया लाओ नहीं तो तुम्हारे साथ भी यही बर्ताव होगा । उन्होंने रोते-रोते जवाब दिया कि हमें रोटियोंके लाले पड़ रहे हैं, हमारे पास रुपया कहाँ जो दें ? शाह आलमसे कहा कि नकदी बताओ वरना अकबर शाहको उलटा लटकाकर कोड़े मारूँगा और गधीपर चढ़ाकर शहर में फिराऊँगा । शाह आलमने जवाब दिया कि जो कुछ है वह इन्हीं मकानोंमें है, मेरे पेटमें नहीं है । क़ादिरने जवाब दिया कि मकान की तलाशीके बाद तुम्हारे पेटकी भी तलाशी ली लायगी । वह हुक्का पीता जाता था और धुर्वा बादशाहकी तरफ़ छोड़ता जाता था । दो दिन बादशाह आलमकी बहिन करामतउन्निसा बेगमको उलटा लटकाकर तेल गरम उसपर डाला और कोड़े मारकर असबाबका पता पूछा । उसने चंद गड़े खजानोंका पता बताया । वहाँसे लाखों रुपयेका माल बरामद हुआ ।

मोतीमहलमें शाह आलमको, शहजादों सहित, गर्म इंटोंपर खड़ा किया और मिर्जा अकबर शाह और सुलेमान शिकोहको लकड़ीसे बाँधकर मारनेका हुक्म दिया । शाह आलम शुष्क ओठों एवं आर्द्र नयनोंसे धूपमें बैठा देखता और फ़रियाद करता था । गुलाम क़ादिरने हुक्म दिया कि इसे ज़मीन पर गिराकर इसकी आँखोंमें सलाई भोंक दी । लोग चिमट गये और बेचारेको ज़मीन पर गिराकर उनकी आँखोंमें सलाइयाँ फेर दीं ! वह ज़मीन पर तड़पने लगा । फिर उसे लकड़ियाँ मारकर बिठा दिया । गुलाम क़ादिरने व्यंग तथा उपहासपूर्वक पूछा कि क्या कुछ नज़र आता

है ? शाह आलमने जवाब दिया कि उस कुरानके सिवा जो हमारे-तुम्हारे दरमियान था कुछ नज़र नहीं आता । गुलाम क़ादिरने उठकर एक लात सीने पर मारी । वह चित गिर पड़ा । क़ादिर छाती पर चढ़ बैठा । कंदहारी ख़ाने शाह आलमके हाथ पकड़ लिये और दूसरोंने पाँव पकड़े । क़ादिरने छुरेसे एक आँख और कंदहारी ख़ाने दूसरी आँख निकाल ली । शाहआलम घायल पक्षीकी तरह तड़पता था । क़ादिरने चित्रकारको बुलाकर हुक्म दिया कि तस्वीर इसी रूपमें कि मैं शाह आलमके सीनेपर बैठा हुआ, छुरी हाथमें लिये आँखें निकालता हूँ, खींच दे । आदमी नियुक्त कर दिये कि इसको और इसके बच्चोंको न पानी दिया जाय, न खाना । रोज़े पीटनेकी आवाज़ सुनकर पूछा कि यह क्या गुल है ? लोगोंने उत्तर दिया कि शाह आलम की दशापर स्त्रियाँ रोती हैं । हुक्म दिया कि जो भी रोयेगा वह, शाह आलमकी तरह, अन्धा कर दिया जायगा ।

एक दिन एक ख़ाजासराने आकर सूचना दी कि शाह आलमकी दशवर्षीया लड़की भूक-प्याससे मर गयी । क़ादिरने हुक्म दिया कि जहाँ पड़ी है वहीं उन्हीं कपड़ोंमें दफ़न कर दो । एक दिन बेदारबस्तने कहला भेजा कि मोहम्मदशाहकी पटरानी मर गयी है उसके दफ़नकी क्या व्यवस्था हो ? क़ादिरने बहुत गालियाँ देकर कहा कि वहीं पड़ी रहने दो । जब लाश सड़ने लगी तो लोगोंकी अनुनय पर तीसरे दिन दफ़नका हुक्म मिला ।

माधवजी सिंधियाने जब ये दर्दनाक क्रिस्से सुने तो मराठी सेना भेजी, गुलाम क़ादिरको घोर दण्ड देकर १७८८ में मार डाला और शाह आलम द्वितीयको पुनः तख्त पर बैठाया तथा उसके व्ययके लिए नौलाख रुपये वार्षिक नियत कर दिये ।

भारतीय इतिहासके ऐसे अस्थिर युगमें 'मीर' हुए थे और उन्होंने इन व्यथाकारी घटनाओं तथा विस्मयकारी परिवर्तनोंको स्वयं देखा था । उन्होंने अपनी जीवन-कथामें इनका विस्तृत वर्णन किया है । इन घटनाओंने उनके प्रेमल एवं भावुक मनपर गहरा असर डाला । ये अनुभूतियाँ ही

उनकी ग़ज़लोंमें उतर आई हैं और उन्हें गहरी वेदनासे पूर्ण कर दिया है ।
डा० फारूकीने ठीक ही लिखा है कि “उन्होंने शेर नहीं कहे, दिल और

मीरके काव्यकी
विशेषता

दिल्लीके मसिये लिखे हैं । “...जिस तरह ‘शराब
खिचकर तलवार’ हो जाती है उसी तरह मीरका
तारीखी माहौल उनकी ग़ज़लोंमें ढल गया

है ।” जब उत्तर भारत और देहली राजनीतिक आँधियोंमें अस्थिर थे तब मीर चट्टानकी तरह स्थिर रहे और तेज़ीसे बदलते ज़मानेके चित्र अपने दिल और उस दिलका अक्स अपनी ग़ज़लोंमें उतारते रहे । वह मुक्तभोगी थे । उन्होंने धैर्यपूर्वक ज़मानेकी कठिनाइयों तथा प्रेमकी मुसीबतोंको भोगा, सिर ऊपर किये इसीलिए ‘उनमें जीवनका वह सौष्ठव है जो जीवन भर निराशाओं और असफलताओंके उपयोगसे उत्पन्न होता है ।’ उनके दर्दमें निजी प्रेम-वेदना तथा युग-वेदनाका ऐसा अनोखा सम्मिलन है जो उर्दू काव्यमें अन्यत्र नहीं मिलता । उनकी वेदना केवल आत्मरोदन नहीं, वह एक सम्यता, एक विशेष सामाजिक परम्पराकी असफलताका रोदन है । उनके रोदनमें उनके ही आँसू नहीं, समष्टिकी वेदनाके आँसू हैं । उनमें वह वेदना है, वह जलन है, वह तड़प है जिसके बिना मानव-जीवन मानव-जीवन नहीं, एक रेगिस्तान है । फिर तेज़ीसे बदलते हुए युगकी उथल-पुथलने उनके दुःखमें एक अजीब स्थिरता, एक संयम, एक आत्म-नियंत्रण, एक अपनी ज़िम्मेदारीकी भावना पैदा कर दी है । उनके काव्यमें उनके युगकी चीख है, उसकी आशा-निराशाएँ हैं, यहाँ हम इतिहासके एक भग्न होते युग-स्तूपके दर्शन करते हैं; उसका रोदन सुनते हैं—ऐसा रोदन जिसमें कलेजा बोलता है; जिसमें हाड़-मांस बोलता है, जिसमें खूनकी गर्मी है, जिसमें जीवनकी उठान और मृत्युकी अनुभूति है; जिसमें इन्सानियतकी पुकार और युगके संस्कार हैं । शब्दके झरोखोंमें युगकी व्यथासे प्रभावित प्रेममें डूबे एक सच्चे मानवके हृदयकी शत-शत भंगिमाएँ झाँकती हैं ।



काव्य-समीक्षा भाग

मीर-काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमि



मैं कहीं संकेत रूपमें लिख चुका हूँ कि मीरकी वेदनामें समष्टिकी संवेदनाएँ क्षाँक-क्षाँक उठती हैं। उनमें अपना दर्द भी है और जमानेका दर्द भी है। उनमें ज़िन्दगी है पर बन्दगीके आलिंगनमें बँधी हुई; उनमें इश्क़ है पर साधना की गोदमें सोता हुआ; उनमें मस्ती है पर दुनियाके दुखोंपर सौ-सौ आँसू बहानेवाली; उनमें कल्पना है जो आसमानको ज़मीनसे बाँधे हुए है; उनमें पागलपन है जो अपनेको ठहर-ठहरकर दिलके आईनेमें देख लेता है। एक विरह जिसमें मिलनकी बेहोशी है। मीर अनेक व्यक्तित्वोंका व्यक्ति है। उसमें एक साथ कई-कई मानसिक भूमिकाएँ दिखाई पड़ जाती हैं।

मीर-काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमिपर जो रेखाएँ गहरी हैं उनमें सबसे पहली रेखा है प्रेमकी। यह प्रेम, दिलमें उमड़ता प्रेम, अपने दिमाग़ और हृद-गिर्दके वातावरणपर छा जानेवाला प्रेम, प्रेम जिसके बिना जीवन जीवन नहीं, उनमें पिता और चचासे आया; यज़ीद वगैरा दरवेशों ने उसे जलाकर रोशन किया, पर तबतक वह दूरागत था, रहस्यमय था, व्यापक था, अनुभूत था। बादमें यौवनके वंशी रवने उसमें एक तस्वीर पैदा की; एक अबोला यौवन अपनी आँखोंसे बोला, और एक दिलमें पूजा-की घण्टियाँ बजीं। पर देवताको पुजारीके सामनेसे हटा लिया गया। मतलब दुनियाने उस विधुबदनीको इनसे अलग कर दिया जो इनके समस्त मानसिक वातावरणपर यों छाती जा रही थी जैसे चाँदका जादू देखते-देखते अँधेरी दुनिया पर छा जाता है।

इस विरहमें वह रोये, पागल हुए पर^१ वह रोना अमृत हो गया । क्योंकि विरहकी करुणाने इन्हें इस प्रकार आलिंगन किया कि जन्म भर न छोड़ा । इसी संवेदनाके कारण इनका काव्य उच्च भावभूमिपर प्रतिष्ठित हो सका । भवभूतिने जब 'करुण रस ही एक रस है', कहा था तो एक ऐसे सत्यकी अवतारणा की थी जो मानव-हृदयकी चेतनाओं और प्रेरणाओंके द्वारा अनन्तकालसे पुष्ट होता आया है ।

फिर बचपनमें बेघर-बार, बिना माँ-बाप, अनाथ, दिल उजड़ा, चतुर्दिकी बस्तियाँ उजड़ीं, जिस दिल्लीमें आये रहने वह सनातन विधवा—

सनातन
विधवा-सी
दिल्लीकी तड़प

जिसकी माँगमें सिन्दूर बार-बार पड़ता और बार-बार पुँछता था, जो बार-बार प्रताड़ित, प्रवंचित, पददलित की जाती थी पर जिसे मरने नहीं दिया जाता था,—एक बेबसी, एक सुनसानका

आलम; हर तरफ़ भय, त्रास, निराशा । कोई किसीका नहीं । मंजिल दूर; राह अँधेरी, दीपक कोई नहीं, उस दीपकके सिवा जो दिलमें जल रहा था । इस प्रकार एक निराशा और वेदना इनमें यों भर गयी जिसका जीवनभर अन्त नहीं हुआ । इन्होंने देखा कि कल जिनकी पूजा होती थी, जिनकी पगधूलि लोग आँखोंमें अंजनकी भाँति लगाते थे, वे बेघर-बार, दाने-दानेको मोहताज हैं, जिन राजकुमारों पर सिंहासन निछावर हों वे भूखसे सूखी रोटियोंके लिए तड़पते हैं । अपने और दूसरोंके जीवनमें कालचक्रके इस परिवर्तनने उन्हें अन्तःस्थ कर दिया । भौतिक ऐश्वर्यकी असारता उनके दिलमें पैठ गयी । यह उनकी मानसिक पृष्ठभूमिकी दूसरी गहरी रेखा है ।

मीर एक शरीफ़, साधुमना, उच्च भावभूमि पर रहने वाले प्रेममार्गी काव्यके लिए संतके पुत्र थे । अच्छे खानदानके थे, एक शिष्ट मनोभूमिका आनुवंशिक विरासत उन्हें मिली थी । उन्हें अनिवार्य है ऊँची दृष्टि मिली थी; उच्च सम्यताके संस्कार प्राप्त हुए थे । इसलिए जीवनमें शिष्टाचारसे,

ऊँचाइयोंसे वह कभी न गिरे । तुच्छताकी भावनाको वह इन्सानका सबसे बड़ा दुर्गुण समझते रहे । उनके विचारमें काव्यके लिए शिष्ट जीवनकी भूमिका आवश्यक है । पहले आदमी बनो, शिष्टताकी ऊँचाइयों पर चढ़ो, तब कविता करनेकी चेष्टा करो—कुछ इस प्रकारकी शिक्षा उनकी थी । उनके काव्यमें इस शिष्ट मानसिक भूमिकाके दर्शन होते हैं । यह उस तस्वीरकी तीसरी गहरी रेखा है ।

चौथी बात यह कि गहरी एवं अनुभूत प्रेम-वेदनाके कारण इनका काव्य उस आगके ऊपर एक पर्दा बनकर रह गया है जो इनमें जलती थी ।

प्यास है पर
गिरावट नहीं

इसलिए उसमें एक हलकी रहस्यात्मक चाँदनी सी है । एक ओर क्रयामतका-सा शोर, गहरा उत्ताप, बेचैनी है, दूसरी ओर उसपर नियन्त्रण का, बन्धनका, अनुशासनका स्वर है । प्यास है पर गिरावट नहीं है; नींद है पर मूर्च्छा नहीं है; असफलताका दंश है पर जीवनकी प्रेरणामें लिपटा हुआ ।

सब मिलाकर वह आत्मानुभूति और भावनाके कवि हैं । उनका काव्य अनुभूतियोंकी आर्द्रताका काव्य है । वह गहरे मनोमंथनका काव्य है ।

इन रेखाओंकी हम ज़रा विस्तारसे चर्चा करेंगे क्योंकि उनके बिना मीरकी उस मानसिक पृष्ठभूमिको ग्रहण करना कठिन है जिसपर उनका समस्त काव्य खड़ा है ।

जैसा मैंने कहा है, पहली और मूलभूत भावना-रेखा, जिसपर जीवन एवं काव्यका समस्त आधार है, प्रेमकी, इश्ककी है । इनके पिता जब-तब

इश्ककी
व्याप्ति

इनसे कहा करते थे—“बेटा ! इश्क इस्तियार करो कि इश्क ही इस कारखाना पर मुसल्लत^१ है; अगर इश्क न होता तो यह तमाम निज़ाम^२ दरहम-बरहम^३ हो जाता । बेइश्ककी जिन्दगानी बवाल है और इश्कमें

दिल खोना अस्लेकमाल है । इश्क ही बनाता है और इश्क ही बिगाड़ता है ।” कभी कहते—“आलम^१में जो कुछ है, इश्क का जहूर^२ है । आग सोजे^३ इश्क है; पानी रपतारे^४-इश्क है, खाक^५ करारे^६-इश्क है; हवा इज-तरारे^७-इश्क है; मौत इश्क की मस्ती है, हयात^८ इश्क की होशयारी है; रात इश्क का ख्वाब^९ है, दिन इश्क की बेदारी^{१०} है ।.....यहाँ तक कि आस-मानों की हरकत हरकते-इश्की^{११} है ।”

मीरने इसे गाँठ बाँध लिया था । यह शिक्षा उनके अन्तरमें प्रविष्ट हो गयी थी और समय पाकर पुष्ट होती गयी । प्रेम की व्यापकता के वर्णन से उनका काव्य भरा हुआ है और पिता की उस बात की छाप जगह-जगह दिखाई पड़ती है । देखिए:—

इश्क ही इश्क है जहाँ देखो,
सारे आलममें भर रहा है इश्क ।
इश्क माशूक^{१२} इश्क आशिक^{१३} है,
यानी अपना ही मुन्तला^{१४} है इश्क ।
कौन मक्रसद^{१५} को इश्क बिन पहुँचा,
आज़ू^{१६} इश्क, मुद्आ^{१७} है इश्क ।

“जहाँ देखो प्रेम ही प्रेम है । यह प्रेम सारे जगत्में भर रहा है । वही प्रेमी है और वही प्रियतम है अर्थात् वह स्वयं पर ही आसक्त है । बिना प्रेम के लक्ष्य तक कौन पहुँच पाया है । प्रेम ही अभिलाषा है और प्रेम ही उद्देश्य है ।”

१. जगत् । २. अभिव्यक्ति । ३. जलन । ४. गति । ५. मिट्टी ।
६. स्थिरता । ७. व्याकुलता, आतुरता । ८. जीवन । ९. स्वप्न । १०. जागरण । ११. प्रेमका चक्कर । १२. प्रियतम । १३. प्रेमी । १४. आसक्त । १५. प्रयोजन । १६. अभिलाषा । १७. अभिप्राय ।

आगे फिर कहते हैं:—

दर्द ही खुद है खुद दवा है इश्क़,
शेख़ क्या जाने तू कि क्या है इश्क़।
तू न होवे तो नज़्म कुल उठ जाय,
सच्चे हैं शायरां खुदा है इश्क़ ।

“प्रेम ही वेदना है और प्रेम ही उस वेदनाकी दवा भी है। ऐ उपदेशक ! तू क्या जाने कि प्रेम क्या है ? प्रेम न हो तो सारी व्यवस्था ही समाप्त हो जाय, कवियोंका कथन ठीक है कि प्रेम ही ईश्वर है ।”

अन्दर-बाहर ऊपर-नीचे प्रेम ही प्रेम दिखाई देता है:—

ज़ाहिर^१ बातिन^२ अव्वल-आख़िर^३, पाई^४ बाली^५ इश्क़ है सब,
नूरोजुल्मत^६, मानी व सूरत^७ सब कुछ आप हुआ है इश्क़ ।

आकाशके घूमनेके बारेमें भी पिताकी बात भूल नहीं पाये हैं:—

मक़सूद^८ गुम किया है तब ऐसा है इज़तिराब^९
चक्करमें वर्ना काहेको यूँ आसमाँ रहे ।

प्रियतमको छिपा दिया है, लक्ष्य ओझल कर दिया गया है तभी इतनी बेचैनी है नहीं तो आसमाँ यूँ चक्कर क्यों करता ?

१. प्रकट, बाह्य । २. आन्तरिक । ३. आदि-अन्त । ४. नीचे-ऊपर ।
५. आकाश-अन्वकार । ६. रूप और अर्थ । ७. लक्ष्य, इष्ट । ८. व्याकु-
लता ।

बचपनमें जो छाप पड़ी, वह बराबर बनी रही। यौवनमें जब आकाश का वह प्रेम ज़मीनके चाँदपर उतरा तब भी मानवीय प्रेममें भी वही आकाशका प्रेम ज़मीन ऊँचाई, वही व्यापकता बनी रही। हाँ, इस निजी प्रेमानुभूतिने उसे चिन्मय कर दिया।
 के चाँद पर

पहले जो ख्याल दिमागमें थे वे दिलमें उतर आये; वे अपने हो गये। दर्द आया, जलन आई, अभिलाषाओंने करवट ली, प्यास उमड़ी, बेचैनी बढ़ी। 'मसनवी-खाबोखयाल' काल्पनिक नहीं है; वह दिलकी पुकार है; यह उस वेदनाका चित्रण है जो पूजाकी देवीसे दूर कर दिये जानेपर इन्हें हुआ था। उससे भगते थे पर वह मूर्ति इनके दिलमें घर कर गयी थी; जागते-सोते, उठते-बैठते वही विधुवदन दिखाई पड़ता था। देखिए:—

चला अकबराबादसे जिस घड़ी,
 दरोबाम^१ पर चश्मेहसरत^२ पड़ी ॥
 कि तर्कवतन^३ पहले क्योंकर करूँ ।
 मगर हर क्रदम दिलको पत्थर करूँ ॥

X

X

जिगर जौरे गर्दूँ^४ से खूँ हो गया ।
 मुझे रुकते-रुकते जुनूँ^५ हो गया ॥

X

X

वही जल्वा हर आनके साथ था ।
 तसव्वुर^६ मेरी जानके साथ था ॥

१. द्वार और छत । २. लालसापूर्ण नयन । ३. घरका त्याग ।
 ४. आकाशके उत्पीड़न । ५. उन्माद । ६. प्रणिधान ।

उसे देखूँ जिघर करूँ मैं निगह ।
 वही एक सूरत हजारों जगह ॥
 गुले ताजा^१ शर्मिन्दा उस रू^२ से हो ।
 खिजल^३ मुश्केनाब^४ उसके गेसू^५ से हो ॥
 सरापा^६ में जिस जा नजर कीजिये ।
 वहीं उम्र अपनी बसर कीजिये ॥

यह जुनून भी पिता-प्रदत्त इश्ककी बुनियाद पर ही खड़ा है। पिता, चचा और दरवेशोंकी शिक्षाने ही इस प्रेमको धर्मोन्माद पर, साम्प्रदायिक धार्मिक क्षुद्रताओं से परे क्षुद्रताओंके ऊपर प्रतिष्ठित किया। उन्होंने, विशेषतः बायजीदने, देरोहरमसे ऊपर उठकर प्रेम-धर्म, हृदय-धर्म निभाने पर जोर दिया था; बायजीदने कहा था—“दिलहार कि दिलशिकनी कसे न कनी व संग-सितम बरशीशए न जनी । दिल रा कि अर्थ मी गोयंद अजी राह अस्त कि मंजिल खास आँ माह अस्त ।” मीर कहते हैं :—

देरो-हरमसे गुजरे अब दिल है घर हमारा ।
 है खत्म इस आबलेपर सैरो-सफ़र हमारा ॥
 सइए तोफ़ेहरम^७ न की हर्गिज़ ,
 आसताँ^८ पर तेरे मुक़ाम किया ।
 तेरे कूचेके रहनेवालोंने ,
 यहींसे काबाको सलाम किया ।

१. ताजा, नवीन, गुलाब । २. मुख । ३. लज्जित । ४. कस्तूरी-गंध । ५. बाल । ६. नखशिख । ७. काबाकी ओर जानेका प्रयास । ८. स्थान, आश्रम ।

इश्के खूबाँको मीर मैं अपना ,
क्रिबला व काबा व इमाम किया ।

इस प्रकार प्रेम ही उनकी पूजा, प्रेम ही उनका क्रिबला व काबा है ।
मध्ययुगीन प्रेममार्गी संतोंकी भाँति इनका उपासना-पथ भी प्रेमका पथ है ।
साफ़ कहा है—

मत रंज कर किसूका कि अपना तो एतक्राद^१,
दिल ढायकर गो काबा बनाया तो क्या हुआ ?

दिलको ठहाकर, मिटाकर काबा ही बना लिया तो क्या फ़ायदा ?

इस प्रेमने ही इनमें मस्तीका एक आलम पैदा किया है, एक बेखुदी
दी है । कभी ऐसी जगह पहुँच जाते हैं जहाँ अपनेको भूल जाते हैं; खुद
ही अपनी प्रतीक्षा करते हैं; एक अजीब बेचैनीसे भर जाते हैं; कभी
होशमें आते हैं तो कहते हैं, हम और ही आलममें थे । ऐसे समय किसीसे
मिलना भी अच्छा नहीं लगता क्योंकि पुजारी देवताके सांनिध्यमें होता
है; जगत् आँखोंसे हट जाता है । कुछ शेरोंमें मीरकी मस्तीकी यह
छवि है :—

मिलनेवालो ! फिर मिलिएगा हम हैं आलमे-दीगर^२ में ,
मीर फ़क्रोरको सब्र है यानी मस्तीका आलम है अब ।

×

×

बेखुदीमें न मीरके जाओ ,
तुमने देखा है और आलममें ।

×

×

बेखुदी ले गयी कहाँ हमको ,
देरसे इन्तज़ार है अपना ।

×

×

रहे हम आलमे मस्तीमें अक्सर ,
रहा कुछ और ही आलम^१ हमारा ।

जब ऐसी मस्तीका आलम होता है तब आनन्दका केन्द्र व्यक्ति स्वयं हो जाता है, फिर दूसरेकी नाज़बरदारीकी तमन्ना नहीं, शक्ति नहीं:—

गुलने बहुत कहा कि चमनसे न जाइए ,
गुलगाश्तको जो आइए, आँखों पै आइए ।
मैं बेदिमाग़ करके तगाफुल^३ चला गया ,
वह दिल कहाँ कि नाज़ किसूके उठाइए ।

मस्तीका आलम जब होता था तब अपनेमें ऐसे डूबते थे कि कौन आया कौन गया इसकी खबर भी न होती थी । उस्ताद ज़ौक एक अवस्था-

‘ज़ौक’ की
आप बीती

प्राप्त व्यक्ति से कहते थे कि “एक दिन मीर साहबके पास मैं गया । जाड़ेके अन्तिम दिन थे, वसन्तागमका ज़माना । देखा कि वह टहल

रहे हैं; उदास हैं और रह-रहकर यह मिसरा पढ़ते हैं:—

“अबके दिन भी बहारके यों ही गुज़र गये ।”

मैं सलाम करके बैठ गया, थोड़ी देर बाद उठा और सलाम करके चला आया । मीर साहबको खबर भी न हुई, वह जिस ध्यानमें पहले निमग्न थे, उसीमें निमग्न रहे । उनकी भाव-भंगीसे विदग्धता और बेदना फूटी पड़ती थी ।”*

१. हाल । २. उपेक्षा ।

* आबे हयात : मोहम्मद हुसेन ‘आज़ाद’ ।

कभी ऐसा होता था कि महीनों बीत गये, अपनेमें ऐसे डूबते कि इर्द-गिर्द क्या है, क्या हो रहा है, इसकी भी कुछ खबर न लगती थी। एक

कथा है कि मीर साहबको बहुत कष्टमें देख-यह संलग्नता !

कर लखनऊके एक नवाब इन्हें बाल-बच्चोंके साथ अपने घर ले गये और महलका एक भाग रहनेके लिए दे दिया। बैठकमें एक तरफ़की खिड़कियाँ बन्द थीं; उनके सामने ही एक सुरम्य उद्यान था। नवाबने वह हिस्सा इसलिए दिया था कि बाग़से इनका दिल बहले, मनोरंजन हो पर अर्सा बीत गया; खिड़कियाँ वैसे ही बन्द पड़ी रहीं। मीर साहबने कभी खोलकर बाटिकाकी ओर नहीं देखा। एक दिन उनके एक मित्र उनसे मिलने आये। उन्होंने कहा कि “इधर बाग़ है, खिड़कियाँ खोलकर क्यों नहीं बैठते ?” मीर साहब आश्चर्यान्वित होकर बोले—“इधर बाग़ भी है ?” उन्होंने कहा—“इसीलिए नवाब साहब यहाँ लाये हैं कि जो बहलता रहे और मन प्रसन्न हो।” मीर साहबके फटे-पुराने मस्विदे ग़ज़लोंके पड़े थे, उनकी ओर संकेत करके कहा—“मैं तो इस बाग़में ऐसा लगा हूँ कि दूसरे बाग़की मुझे खबर नहीं।”

क्या संलग्नता है ! बरसों बीत जायें, सामने बाटिका हो किन्तु खिड़की तक न खुले !

X

X

X

यौवनकालमें तो प्रेमकी अग्नि इनमें ऐसी प्रज्वलित हुई कि उसीमें जलते थे और मजे लेते थे। आँखोंमें आँसू, बाल बिखरे, आत्मविस्मृत, खोये-खोयेसे, धुलकर पीले पड़ रहे। ये चित्र भी इनके काव्यमें प्रायः मिल जाते हैंः—

क्या मीर है यही जो तेरे दरपे था खड़ा
नमनाक चश्मो^१ खुशक लब^२ व रंग जर्द^३ सा ?

१. द्वार। २. भीगी आँखें। ३. सूखे ओठ। ४. पीला रंग।

या:—

हमेशा चश्म है नमनाक हाथ दिलपर है
खुदा किसूको न हम-सा भी दर्दमन्द करे ।

और यह नाजुकमिजाजी भी साथ लगी है:—

नाजुकमिजाज आप क्रयामत हैं मीरजी ,
जूं शीशा मेरे मुँह न लगे मैं नशेमें हूँ ।

×

×

इनका काव्य इनकी गहरी वेदनाकी अभिव्यक्ति मात्र है । वह काव्य क्या है, एक परदा है, जिसके पीछे सिसकते दिलकी आवाज़ है, जिसके पीछे आरजूओं और तमन्नाओंकी दुनिया है । खुद कहते हैं:—

किया था शेरको परदा सुखनका
वही आखिरको ठहरा फ़न हमारा ।

×

×

इस परदेमें ग़मे दिल कहता है मीर अपना,
क्या शेरो-शायरी है यारो शुआरे आशिक़ ।

×

×

कब और ग़ज़ल कहता मैं इस ज़मीमें लेकिन,
परदेमें मुझे अपना अहवाल सुनाना था ।

‘परदेमें मुझे अपना अहवाल सुनाना था’—इसी बातको एक दूसरी जगह खुद ही हैरत करते हुए हज़रत फ़र्माते हैं:—

एक आफ़ते ज़माँ है यह ‘मीर’ इश्क़पेशा,
परदेमें सारे मतलब अपने अदा करे है ।

‘मीर’ जैसे लोगोंके सामने स्फूर्तिके कोई साधन न रह गये थे; सब तरफ़ निराशाकी अवस्था थी; कोई ऐसी चीज़ न थी कि जीवनकी थकी रूदनशील शक्तियाँ उसका सहारा लेतीं। बस यही प्रेमकी वेदना थी जो उन्हें किसी तरह जिलाये हुए थी। जीवन कभी बेहोश होता, कभी बेहोशीमें ही आँखें खोल देता, दो शब्द रोगीके मुँहसे निकलते—पर प्रेम अपनी थपकियोंसे उसे पोषण देता रहता। और यह प्रेम उच्च भूमिकाओं पर उठाने वाला प्रेम था। इसमें भोग उतना न था जितनी आराधना थी; आराधना जो मानवको उठाकर देवत्वके शीर्ष स्थानपर रख देती है। कहते हैं:—

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सबोंकी खुदा कर चले।

ऐ बुत, ऐ मूर्ति, तेरी इतनी उपासना की है कि सबकी नज़रमें तुझे खुदा बना दिया है।

यह कल्पना नहीं, जीवनका सत्य है। मानव-प्रेमसे भी साधक सर्वोच्च ईश्वरीय प्रेम तक पहुँच सकता है। यदि इसका तात्त्विक विवेचन करें तो

साधना एवं
सिद्धि

ज्ञात होगा कि दो व्यक्तियोंमें जब जीव-साम्यके कारण आकर्षण होता है तब प्रेमोदय होता है। प्रेमारम्भमें प्रेमी एवं प्रियतम दोनोंको इस प्रेरणा-

का विशेष ज्ञान नहीं होता; पर भीतर ही भीतर एक आग सुलग उठती है। फिर एक अवस्था आती है जिसे पूर्वानुराग कहते हैं। धीरे-धीरे चित्र में विदग्धता आने लगती है। किसीको देखनेकी, किसीकी बात सुननेकी इच्छा लगी रहती है। दिल बेचैन-सा रहता है। छाती जलती है पर पता नहीं चलता कि यह क्या है ? ‘मीर’ भी इस आगके शिकार हैं:—

छाती जला करे है सोझे दरूँ^१ बलासे
एक आग-सी लगी है, क्या जानिए कि क्या है ?

यह प्रेमका पूर्वाभास है । इसके लक्षणोंकी झलक 'भीर' के इस शेर में भी है :—

हम तौरे इश्क़^२ से तो वाक्किफ़^३ नहीं हैं, लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है ।

एक दूसरे कवि 'शेफ़ता' ने भी कहा है :—

शायद इसीका नाम मुहब्बत है शेफ़ता,
इक आग-सी है दिलमें हमारे लगी हुई ।

पूर्वावस्थामें यही होता है । उस समय कोई 'सीनेमें दिलको मला करता है ।' फिर प्रेम अधिकाधिक गम्भीर होता जाता है, यहाँ तक कि वह पूर्ण प्रणयमें परिवर्तित हो जाता है । इसके बाद प्रेमी प्रियतमके ध्यानमें इतनी तल्लीनता प्राप्त करता है कि आँख खोलनेपर इधर-उधर चारों ओर वह मिनटों तक उसकी छबि देखता है । यही अवस्था प्रेम-मार्गकी सच्ची सीढ़ी है ।

उपर्युक्त अवस्था जिस समय और भी विकसित होती है, उस समय मिनटोंकी जगह घंटों तक सब वस्तुएँ अपने प्यारेके रूपमें दीख पड़ने लगती हैं, किन्तु अभी तक उसकी इच्छा विशेष रूपसे प्रियतमको देखनेकी होती है । बहुत कुछ इसी भावनाकी झलक 'भीर' के इन शेरों में है :—

१. आन्तरिक जलन । २. प्रेमके ढंग, तरीक़े । ३. अभिज्ञ ।

यकजा अटकके रहता है दिल हमारा वना
सबमें वही हकीकत^१ दिखलाई दे रही है ।

X

X

रहते हो तुम आँखोंमें फिरते हो तुम्हीं दिलमें
मुद्दतसे अगर्चे याँ आते हो न जाते हो ।

यही संलग्नता मुक्ति अथवा विश्व-प्रेमका प्रारम्भिक रूप है । इसके बाद वह अवस्था होती है जिसे कवि 'प्रसाद' 'प्रियतममय यह विश्व निर-खना'—कहते हैं ।

वेदनाकी ज्वलन्त अवस्थामें हृदयकी, अपनी, बेचैनीका मीरने जो चित्र किया है, उसमें करुणाकी सीमा है । वह दुश्मनोंसे भी प्रार्थना करते हैं कि वे मेरे प्रियतमसे मिलनेके लिए दुआ करें :—

यह इजतिराब^२ देख कि अब दुश्मनोंसे भी
कहता हूँ उसके मिलनेकी कुछ तुम दुआ करो ।

वह बेचैनी है, वह दर्द है कि मरनेके बाद भी हसरतें सिर पट-कती हैं :—

हसरतें उसकी सिर पटकती हैं,
मर्गे फरहाद^३ क्या किया तूने ?

दिलका हाल पूछनेपर वह कुछ कह नहीं पाता । वेदना उस सीमापर है जब वाणीका लोप हो जाता है । पूछनेपर उत्तर तो मिलता नहीं, रक्तकी एक बूंद टपक पड़ती है । क्या शेर है :—

१. सत्य, ईश्वरत्व । २. बेचैनी, व्याकुलता । ३. फरहादकी मृत्यु ।
फरहाद फारसका प्रसिद्ध प्रेमी था जिसने प्रियतमा शीरीके लिए सर्वस्वार्पण किया था ।

आँखोंसे पूछा हाल दिलका
एक बूँद टपक पड़ी लहूकी ।

वेदनाको छिपानेका भी ख्याल है । प्रेमकी बदनामी न हो इसलिए
आँखोंमें भरे आँसुओंको रोक रखनेकी पूरी चेष्टा है । वेदना और दुःखमें
भी कितना नियन्त्रण है :—

पासे नामूसे इश्क^१ था वर्ना
कितने आँसू पलक तक आये थे ।

मतलब उनका प्रेम बाज़ारू प्रेम नहीं है; वह मानवकी अन्तःसंस्कृति
से पूर्ण है । इसमें गिरावटपर एक रोक, एक ठहराव, एक नियन्त्रण है ।

×

×

×

अक्सर कवियों, शायरोंमें चरित्रकी, आचरणकी बन्दिश नहीं होती;
वे निर्बन्ध होनेमें अपना वैशिष्ट्य मानते हैं । 'मीर'की मानसिक पार्श्व-
मानवकी भूमिमें कविके लिए पहले इन्सानकी भूमिकाका
श्रेष्ठता निर्वाह करना आवश्यक है । उनके निकट मान-
के कवि बताकी ही श्रेष्ठ अभिव्यक्ति काव्य रूपमें सामने
आती है, इसलिए 'मीर' इन्सानको बड़ा महत्त्व
देते हैं । इन्सान देवतासे भी बड़ा है । महाभारतकार कहते हैं—'मनुष्य
से बड़ा कुछ नहीं है ।' मीर भी मानवीय श्रेष्ठताके सम्बन्धमें कहते हैं :—

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक^२ बरसों
तब खाकके परदेसे इन्सान निकलते हैं ।

फिर कहते हैं :—

मरता हूँ मैं तो आदमे खाकीकी शान पर
अल्लाह रे दिमाग कि है आसमान पर ।

बड़ी चुनौतीके साथ, आदमीके रतबेको सबके ऊपर रखकर, कहते हैं:—

इलाही कैसे होते हैं जिन्हें है बंदगी खाहिश
हमें तो शर्म दामनगीर होती है खुदा होते ।

क्या खूब शेर है । वे न जाने कैसे होते हैं जिन्हें अभिलाषा है कि लोग हमारी बंदगी करें—उपासना करें, हमारे सामने झुकें । भई, यहाँ तो खुदा होते लज्जा, आँचल, दामन पकड़ लेती है ।

संसारकी शोभा आदमीसे ही है:—

आदमे खाकीसे आलमको जिला^१ है वर्ना
आईना था तो मगर क्वाबिले^२ दीदार न था ।

× × ×

बरसों लगी रही हैं जब मेहोमह^३से आँखें
तब कोई हमसा साहब साहब नजर^४ बने है ।

इधर इंसान और ज़िन्दगीका यह वैभव, यह ऐश्वर्य, यह महत्ता उनकी दृष्टिमें है, उधर संसारकी असारता भी उनके दिलमें खुभी हुई है । यहाँ विश्राम नहीं, केवल चलना है । हिन्दीके अमर कवि 'प्रसाद'ने अपने 'प्रेमपथिक'में कहा है—

इस पथका उद्देश्य नहीं है श्रान्त भवनमें टिक रहना
किन्तु पहुँचना उस सीमा पर जिसके आगे राह नहीं ।

पर मीरका कहना है कि यह दुनिया मंज़िल नहीं है, यहाँ टिकनेकी आशा या चेष्टा न कर, यह राह है, किसी और की । कुछ इसी ज़मीनपर, पर दूसरी कैफ़ियतमें, मैंने अपनी एक ग़ज़लमें कहा है—

वही पथ हूँ स्वयं चलने लगा जो मेरे चलने से
जो खुद चलने लगी मंजिल वही मैं एक मंजिल हूँ ।

मीर कहते हैं:—

य' मंजिल नहीं, बेखबर, राह है ।

वह मृत्युको थकावटकी, विश्रामकी एक अवधि मात्र मानते हैं, मरकर
फिर आगे चलना ही है, जैसे मुसाफिर जरा दम लेकर चलता है:—

मर्ग एक माँदगीका वक्रफ्रा है,
यानी आगे चलेंगे दम लेकर ।

एक जगह और कहते हैं कि उम्र बिताते-बिताते हम थक गये हैं
इसलिए मृत्युका अन्तर आ जाना अब जरूरी है ।

×

×

×

मीरके काव्यकी मानसिक पृष्ठभूमिमें प्रेम मुख्य प्रवृत्ति है । इस प्र ममें
भी गहरी वेदनाशीलता, गहरी दर्दमन्दीका आलम है । इसीसे उनमें एक
विशेषताएँ छटपटाहट, एक बेचैनी है, बेचैनी जो बँधे
समुद्रकी तरह तड़पती है पर बाँधको तोड़ नहीं
पाती । डा० फारूकीने बहुत ठीक लिखा है कि “वह तिश्नगी^१, वह
बेचैनी, वह बालिहाना^२ सुपुर्दगी^३, वह ज़ब्तोनरम^४, वह क्रयामत^५ का-सा
हंगामा^६ और वह आगकी-सी लपट जो इनके कलाम^७ में है उसके हक्कीकी
असबाब^८ इनकी ज़िन्दगी और नफ्सयानी^९ हक्कायक में ही मिल सकते हैं ।”

-
१. प्यास । २. मुग्धतापूर्ण । ३. समर्पण । ४. नियंत्रण और व्यवस्था ।
५. प्रलय । ६. शोर । ७. काव्य । ८. वास्तविक कारण । ९. मानसिक ।

उन्होंने जिन्दगीमें कितनी कठिनाइयाँ झेलीं, कितने संकट उठाये,
 कितनी निराशाओंका सामना किया, पर कभी पीठ न दिखाई। जब
 जीवनका महत् कोई मित्र नहीं, हितैषी नहीं तब भी इनकी
 यात्रा बन्द नहीं हुई। एक अजीब दृढ़ता और
 दृश्य अपना भरोसा उन्हें सदा रहा। उनमें जो

आत्म-विश्वास, हम देखते हैं वह इसीलिए है। आँधियाँ चल रही हैं,
 बिजलियाँ कड़कती हैं, बादल जल-थल एक करते हैं; अँधेरा दुनियाको
 निगल जानेको फैलता है कि फैलता है पर यह है कि अपना गर्वोन्नत मस्तक
 उठाये चले जा रहे हैं और चले जा रहे हैं। एक ओर संसारकी असारताका
 अनुभव, दूसरी ओर अपने पाँव पर खड़े होनेका संकल्प, एक ओर निराशा
 दूसरी ओर विश्वास, एक ओर व्यथातुरता दूसरी ओर जिन्दगीकी पूजा,
 एक ओर शोर दूसरी ओर एकान्त नीरवता, एक ओर लपट और दूसरी
 ओर बर्फानी आवरण,—और इन द्वन्द्वोंके बीच अपनी ही शक्तिकी छायामें
 उनकी जीवन-यात्रा ! क्या यह महत् नहीं है ? वह कहते हैं :—

अपना ही हाथ सर पे रहा अपने यों सदा
 मुशफ़िक्र^१ कोई नहीं है, कोई मेहबाँ^२ नहीं।

इन्होंने प्रेमको समझा है, प्रेम किया है, प्रेमकी बेचैनी और तड़पके
 ऐसे चित्र दिये हैं कि दिल भर आता है, कश्या उमड़ती है; एक बेखुदी
 जिसका दिल दर्दसे चीख-चीख उठता है। खोये-खोये हैं, न जाने कहाँ
 हैं; न जाने कहाँ दिल है, न जाने कहाँ आँखें हैं, न जाने कहाँ ध्यान है।
 कहते हैं :—

गह आपमें नहीं हो, गह मुन्तज़िर^३ कहीं हो,
 यह मीरजी तुम्हारा इन रोजों हाल क्या है ?

अपनी बेजुबाँ दर्दमन्दी, अपनी अबोली व्यथाको किस करुण रूपमें व्यक्त करते हैं :—

आबलेकी सी तरह टीस लगी, फूट बही ,
दर्दमन्दीमें गयी सारी जवानी इसकी ।

और इस अबोली व्यथाकी गहराई देखिए :—

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे ,
इस जिन्दगी करनेको कहाँसे जिगर आवे ?

×

×

हमारे आगे तेरा जब किसीने नाम लिया ।

तो दिल सितमजदाको मैंने थाम-थाम लिया ॥

और उधर शोखी और शरारतका यह हाल है कि तुम्हारा रोना सुननेको तैयार नहीं :—

एक शस्त्र्स मुभी-सा था कि था तुझसे पै आशिक्र ,

वह उसकी वफ़ा^१ पेशगी वह उसकी जवानी ।

यह कहके जो रोया तो लगा कहने, न कह 'मीर' ,

सुनता नहीं मैं जुल्मरसीदों^२की कहानी ॥

इस प्रकार दिलमें अभिलाषाओंका सागर है पर ओठ बन्द हैं । इनका प्रियतम एक नीरव-व्यथा बनकर इनके जीवनमें समा गया है । उसकी आरजू, उसकी उपस्थिति, उसका तसव्वुर ही इनके दिलका मरहम है । इस दर्दके स्वादके आगे सब कुछ निरर्थक है, तुच्छ है । तुम हो तो सब है, तुम्हारी कामना है तो सब सुख है :—

मौसिमे अब्र^३ हो सुबू^४ भी हो ।

गुल हो, गुलशन^५ हो और तू भी हो ।

१. निष्ठा । २. अत्याचार-पीड़ितों । ३. बादल । ४. मद्यमाण्ड । ५. उद्यान ।

दिल तमन्नाकदा' तो है पर 'मीर',
हो तो उसकी ही आर्जु भी हो ।

पर इन आर्जूओं पर भी बन्दिश है :—

आर्जूँ हज़ार रखते हैं,
तिसपे हम दिलको मार रखते हैं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इनके काव्यकी पार्श्वभूमिमें प्रेमकी अनेक छायाएँ चल-फिर रही हैं । प्रेममें व्यापकता है; वह हर रंग और रूप में प्रकट है । दिलोंमें बाढ़का आलम भी है और भाटेकी, उतारकी शान्ति भी है; जिन विपत्तियोंमें जिये और जिन कठिनाइयोंमें पले-बढ़े उनकी झलक है । गहरी वेदनाओंको कलेजेसे चिपटाये हुए हैं । यह वेदना उनके जीवनका आधार है, कोई बिक्री या सौदेकी चीज़ नहीं । जिसको प्यार किया, खूब किया । इश्क़में हज़ार-हज़ार अभिलाषाएँ उठती हैं पर वे अबोली, दर्दमें डूबी रह जाती हैं । सनातन विरहका वातावरण इनपर यों छा गया है कि मिलनमें भी विरहका रस भिद गया है । इसीलिए सब अभिलाषाओंके साथ भी प्रेम उपासना बन गया है और काव्य मानवता एवं युगकी पीड़ाकी, संस्कृतिकी अभिव्यक्ति होकर रह गया है । उनकी निजी व्यथा युगकी व्यथाके साथ मिलकर एक हो गयी है । इसीलिए उनके काव्यमें जहाँ उनके हृदयका एकान्त संवेदन है वहाँ युगका चीत्कार भी है । उसमें सहस्र-सहस्र हृदयोंकी धड़कनें सुनाई पड़ती हैं; उसमें सैकड़ों प्राणोंकी आशा, सैकड़ों नयनोंकी निराशा, सैकड़ों ओठोंकी प्यास और मिठास है; ज़िन्दगियाँ जादूसे उठती हैं,—रोती हैं और उठती हैं, तड़पती हैं और उठती हैं,—एक नीरव, अबोली साधना अपनी खामोशीमें भी बोल-बोल उठती है; वे बोल जो दिलोंमें अमृतकी गंगा बहा देते हैं ।



मीर काव्य : कला-पक्ष



उर्दू काव्यमें विभिन्न शायरोंमें विभिन्न गुण मिलते हैं। किसीमें भाषाका पाण्डित्य है, किसीमें कल्पनाकी तेज उड़ान है, किसीमें अर्थ-गाम्भीर्य है, किसीमें कहनेका ढंग है, किसीमें प्रसादगुण है, किसीमें गहरी अनुभूति है, किसीमें अलंकृत शैलीकी बहार है पर मीर हैं कि इनमें अनेक गुणों एवं विशेषताओंका भाण्डार है। निम्नलिखित मुख्य विशेषताएँ इनमें पाई जाती हैं:—

१. प्रसाद गुण; भाषाका जादू, सादगी । (ज़बानकी सेहरकारी)
२. कहनेका ढंग (तर्जें बर्याँ) ।
३. विलक्षणता (नुदरत) ।
४. व्यथातुरता ।
५. चित्रकारी वा चित्रात्मकता ।
६. व्यक्तिगत अनुभूतिका साधारणीकरण ।
७. शिष्टता ।
८. शब्द और धर्मका सन्तुलन (अलफ़ाज व मानीका तवाजुन)
९. थोड़ेमें बहुत कहना : गागरमें सागर ।
१०. रचनाकी क्रमबद्धता ।
११. मुहाविरोंका सुन्दर प्रयोग ।
१२. व्यंग्य
१३. उपमाएँ और रूपक ।
१४. संगीतात्मकता ।
१५. फ़ारसी उक्तियोंका अनुकरण ।

१६. देशज शब्दोंका प्रयोग : भारतीयता ।

१७. काव्य-दृष्टि

१८. रहस्यात्मकता : तसव्वुफका प्रभाव

१९. तत्त्वज्ञान

२०. विविध विशेषताएँ

प्रसाद गुण :

मीरका काव्य सर्वत्र प्रसादगुणसे पूर्ण है । यह प्रसादगुण न केवल भावों-को लेकर है बल्कि भाषामें भी है । भाषाकी सरलता तो कहीं-कहीं कमालकी है जैसे बातें करते हों । देखिए:—

कुछ करो फ़िक्र मुझ दिवानेकी,
धूम है फिर बहार आनेकी
कहते हैं डूबते उछलते हैं ।
डूबे ऐसे कोई निकलते हैं ।

×

×

आह जो हमदमी^१ सी करती है ।
अब तो वह भी कमी-सी करती है ।

×

×

शामसे कुछ बुझा-सा रहता है ,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिस^२का ।

×

×

फोड़ा-सा सारी रात जो पकता रहेगा दिल ,
तो सुबह तक तो हाथ लगाया न जायगा ।

×

×

१. साथ देना, सख्य । २. दीन ।

हम फ़क़ीरोंसे बेअदाई क्या ,
आन बैठे जो तुमने प्यार किया ।

× ×
अश्क^१ आँखोंमें कब नहीं आता ।
लहू आता है जब नहीं आता ।
होश जाता नहीं रहा लेकिन ,
जब वह आता है तब नहीं आता ।

× ×
दिल मुझे उस गलीमें ले जाकर ,
और भी स्वाक में मिला लाया ।
इब्तिदा^२ ही में मर गये सब यार ,
इश्क़की कौन इन्तिहा^३ लाया ।

× ×
बेखुदी ले गयी कहाँ हमको ,
देरसे इन्तज़ार है अपना ।
रोते-फिरते हैं सारी-सारी रात ,
अब यही रोज़गार है अपना ।
देके दिल हम जो होगये मजबूर ,
इसमें क्या इस्तियार है अपना ।
जिसको तुम आसमान कहते हो ,
सो दिलोंका गुबार है अपना ।

× ×

हमने अपनी-सी की बहुत लेकिन ,
मर्जे - इश्क़का इलाज नहीं ।

X

X

क्या है देखो हो जो उधर हरदम ,
और चितवनमें प्यार-सा है कुछ ।

इस प्रकारकी सीधी-सादी बातोंसे उनका काव्य भरा हुआ है ।

कहनेका ढंग (तर्जेंबयौं) :

पर केवल भाषाकी सादगीसे कोई विशेषता नहीं आती । ऐसी सादगी मीरके समकालिक अनेक शायरोंमें थोड़ी-बहुत पाई जाती है । असल चीज़ है कहनेका ढंग तथा उसकी नवीनता । मीरमें दोनों बातें हैं । जैसी इनकी भाषा सरल और सुलझी हुई है वैसा ही इनके कहनेका ढंग खूब है । जैसे देखने-देखनेमें एक बात पैदा हो जाती है, वैसे ही कहने-कहनेमें भी अजब असर हो जाता है । हाफ़िज़की भाँति इनकी ग़ज़लें जो दिलमें चुभती हैं उसका एक कारण यह भी है कि यह शायर बनकर नहीं, प्रेमी बनकर बोलते हैं । इससे उसमें अपने-आप एक असर पैदा हो जाता है और बिना प्रयत्नके ही काव्यका कला-पक्ष निखर उठता है । वैसे अलग-अलग देखने पर कोई विशेष बात मालूम नहीं होती फिर भी—

क्या जानूँ दिलको खींचे हैं क्यों शेर मीरके !

उर्दू काव्यका प्रेमी विरहमें पागल होता है तब कपड़े फाड़ता है; गला फाड़ता है । यह ऐसी बात है जिसे अनेक प्रकारसे अनेक कवियोंने कहा है । एक पिटा-पिटाया मज़मून है जिसे लोग बराबर कहते आये और आज भी कहते जा रहे हैं । ऐसी ज़मीनपर मीरको चलना है । वह कहते हैं :—

अब के जुनूँमें फासला शायद न कुछ रहे ,
दामनके चाक और गरेबाँके चाकमें ।

मतलब इतना ही है कि अबके पागलपनका जो दौरा होगा उसमें शायद दामन (आंचल-छोर) के चाक और गलेके चाकमें कोई फासला न रह जाय यानी पूरा पागलपनका दृश्य दिखाई देगा । कोई खास बात नहीं पर कहनेका ढंग ऐसा है कि उसने बातमें बात पैदा कर दी है । मौलाना हालीने अपने 'दीवान' के मुक़दमेमें^१ इस शेरका जिक्र करते हुए एक घटनाका वर्णन किया है जिससे मीरके काव्यकी विशेषताओं पर प्रकाश पड़ता है । वह लिखते हैं :—

“मौलाना 'आजुर्दा' के मकानपर, उनके चन्द अहबाब,^३ जिनमें 'भोमिन' और 'शेफ़ता' भी थे, एक रोज़ जमा थे । मीरका यह शेर पढ़ा गया । शेरकी बेइन्तिहाँ^४ तारीफ़^५ हुई और सबको यह ख्याल हुआ कि इस क़ाफ़ियेको हर शख्स अपने-अपने सलीक़े^६ और फ़िक्र^७ के मुआफ़िक़^८ बाँधकर दिखाये । सब क़लम, दावात और कागज़ लेकर अलग-अलग बैठ गये और फ़िक्र करने लगे । इसी वक़्त एक और दोस्त बारिद^९ हुए । मौलानासे पृच्छा कि हज़रत किस फ़िक्रमें बैठे हैं ? मौलानाने कहा—“कुल-हो-अल्ला-हो अहदका^{१०} जवाब लिख रहा हूँ ।”

इसके बाद मौलाना हाली खुद अपनी राय प्रकट करते हैं:—

“ज़ाहिर^{११} है कि जोशेजन्^{१२} में गरेबाँ या दामन या दोनोंको चाक करना एक निहायत मुबतज़िल^{१३} और पामाल^{१४} मज़मून^{१५} है जिसको क़दीम^{१६} ज़मानेसे लोग बराबर बाँधते चले आये हैं । ऐसे चियेड़े हुए मज़-मूनको मोरने बावजूद ग़ायत^{१७} दर्जेकी सादगीके एक ऐसे अच्छे, निराले

१. ग़ज़लोंका संकलन, २. भूमिका, प्रस्तावना । ३. मित्र (बहुवचन) ।
४. असीम । ५. प्रशंसा । ६. ढंग । ७. कल्पना । ८. अनुकूल ।
९. प्रविष्ट । १०. क़ुरानकी सूरत 'कह कि अल्लाह एक है' । ११. प्रकट है । १२. पागलपनकी तेज़ी । १३. अधम, निम्न । १४. पददलित ।
१५. विषय । १६. प्राचीन । १७. हृद ।

और दिलकश^१ असलूब^२ में बयान किया है कि इससे बेहतर असलूब तसव्वुरमें नहीं आ सकता। इस असलूबमें बड़ी खूबी यही है कि सीधा-सादा है, नेचुरल^३ है और बावजूद इसके बिल्कुल अनोखा है।”

हैरते - रूप - गुलसे मुर्गे-चमन
चुप है यों, बेज़बान है गोया।

फूलके, गुलाबके मुखपर व्यक्त हैरतसे, आश्चर्यसे चमनका पक्षी यों चुप है जैसे बेज़बान हो।

कहा मैंने कितना है गुलका सबात^४
कली ने यह सुनकर तबस्सुम^५ किया।
जिगरमें ही एक कतरा^६ खूँ है सरश्क^७,
पलक तक गया तो तलातम^८ किया।

×

×

दावा किया था गुलने तेरे रूखसे बागमें,
सेली^९ लगी सबाकी सो मुँह लाल हो गया।

गुल (गुलाब) लाल होता है उससे प्रियतमाके कपोल या चेहरेकी उपमा दी जाती है उसी गुलके लाल रंगपर ‘मीर’ मजमून बाँधते हैं। क्यों है यह लाल रंग ? कहते हैं कि उद्यानमें गुलाबने तेरे मुँहसे बराबरी-का दावा किया था। इसपर प्रभातीने ऐसा तमाचा मारा कि उसका मुँह लाल हो गया।

१. चित्ताकर्षक। २. अभिव्यक्ति, प्रकट करनेका ढंग। ३. स्वाभाविक। ४. स्थिरता। ५. मुसकराहट। ६. बिन्दु। ७. अश्रुबिन्दु। ८. बाढ़। ९. तमाचा।

विलक्षणता :

काव्यके कला-सौन्दर्यमें विलक्षणताका स्थान बहुत ऊँचा है। जिन बातों को हम रोज़ देखते-सुनते हैं उन्हींको कवि एक विलक्षण रूपमें हमारे सामने उपस्थित करता है। मीरके काव्यमें ऐसे शेरोंका बाहुल्य है जो यूँ साधारण हैं पर अपनी विलक्षणताके कारण श्रेष्ठ काव्य-भूमि पर उठ गये हैं।

कहते हो, इत्तिहाद^१ है हमको,
हाँ, कहो एतमाद^२ है हमको।

×

×

बेकली, बेखुदी कुछ आज नहीं,
एक मुद्दतसे वह मिज़ाज नहीं।

विरहमें सब रोते हैं; आँसू गिराते हैं पर यह नियंत्रण, यह ठहराव देखिए :—

पासे नामूसे इश्क़^३ था बना
कितने आँसू पलक तक आये थे।

×

×

दिल किस क्रदर शिकस्ता हुआ था कि रात मीर,
जो बात लबपै आई वह फरियाद हो गयी।

×

×

एक समय हम आग थे, तप रहे थे। अब स्राक हैं; मिट्टीमें मिल गये हैं। वह आरंभ था, यह अन्त है। (याद रहे कि हर आग अन्तमें राख—

१. मैत्री, लगाव। २. भरोसा, विश्वास। ३. प्रेमकी बदनामीका ख्याल।

खाक—हो जाती है) । इस प्रकार प्रेममें अपने मिटनेके गौरवको, अत्यन्त दर्द भरे ढंगपर, प्रदर्शित किया है :—

आग थे इब्तिदाए इश्कमें हम,
अब जो हैं खाक इन्तिहा है यह ।

पतंगने, प्रेमीने, न जाने क्या निवेदन किया कि शमा, सुबह तक सिर धुनती रही । निवेदनका विलक्षण प्रभाव है :—

सुबह तक शमा सिरको धुनती रही,
क्या पतंगेने इल्लिमास किया ।

प्रेमकी चोटको छिपानेकी विवशताका वर्णन करते हैं :—

हाय उस ज़र्रिमए शमशीरे मुहब्बतका जिगर,
दर्दको अपने जो नाचार छिपा रखता हो ।

उस प्रेमकी तलवारके घायल हृदयकी क्या कहें जो विवश होकर अपनी वेदनाको छिपा ले ।

व्यथातुरता :

मैं पहिले भी लिख चुका हूँ कि व्यथातुरतासे तो इनका सम्पूर्ण काव्य ही ओत-प्रोत है । कुछ ऐसे दर्दके साथ यह अपनी बात कहते हैं कि कलेजा मुँहको आता है । इनके दयारसे ऐसी व्यथातुर आवाज़ आती है मानो हजारों हसरतें गले मिलकर रो रही हों; एक दिलोंको छूने वाली आवाज़, दिमागको बेचैन कर देने वाली आवाज़, वह आवाज़ जो उठती है तो सब पर छा जाती है, जैसे आँसुओंकी घटा हो जो मनके आकाश पर सदाके लिए छा गयी हो । बेचैनीका यह हाल है कि दुश्मनोसे कहते

फिरते हैं कि अब तुम लोग उससे मिलनके लिए आशीर्वाद दो, प्रार्थना करो ।

यह इज़तिराब^१ देख कि अब दुश्मनोंसे भी,
कहता हूँ, उससे मिलनेकी अब तुम दुआ करो ।

फरहाद, शीरीके प्रेममें अपना काम करता ही रहा कि मौतने उसे दुनियाके परदेसे उठा दिया । अब उसकी अधूरी लालसाएँ, उसके बाद, अपने सिर धुन रही हैं ।

हसरतें उसकी सिर पटकती हैं,
मर्गे फरहाद^२ क्या किया तूने ?

मुँहसे तो वह बोलते नहीं, पर आँखोंके इशारेसे दिलका हाल पूछ लिया करते हैं । व्यथा अन्तरको यों कुरेद रही है कि इस बार जो आँखोंसे दिलका हाल पूछा तो रक्तकी एक बूँद टपक पड़ी !

कहीं भी तुम्हारा नाम आ जाता है, या मुझे ही याद आ जाती है, तब आँखें भर आती हैं । इतनी व्यथा अब कब तक सहूँगा; जीनेके लिए कहाँसे पत्थरका कलेजा लाऊँ ? जब कोई तुम्हारा नाम लेता है तो दिलको थाम-थाम लेता हूँ ।

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म^३ भर आवे
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँसे जिगर आवे ?
हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया ।
तो दिल सितमज़दहको हमने थाम-थाम लिया ॥

कभी-कभी हम निराशाभरी दृष्टि तुमपर डाल लेते थे; उतना ही हमारा सुख था पर अब देखता हूँ कि तुम मुझसे मुँह भी छिपाकर चले जा रहे हो, यह क्या बात है ?

कोई नाउमीदाना करते निगाह,
सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले ।

बहार आई है । कलियाँ मुसकराई हैं; फूल खिले हैं; डालियाँ सिजदेमें झुक गयी हैं; सुरभित वायु दिलोंको गुदगुदाती है पर उस गरीब पंखीका क्या, जो क़फ़समें, पिंजरेमें पड़ा, तड़प रहा है । कभी उम्मीद थी कि छूट-कर अपने घोंसले तक पहुँचेंगे किन्तु अब तो पंख भी गिर गये, रिहाईकी कोई उम्मीद नहीं रह गयी :—

बालो पर भी गये बहारके साथ,
अब तवक्का^१ नहीं रिहाई की ।

×

×

×

प्रेमकी बेचैनीमें आँसू निकल ही आते हैं । ऐ उपदेशक ! तू रोनेको मना करता है पर हमारी विवशताको नहीं देखता ?

आजकल बेक्ररार हैं हम भी,
बैठ जा चलनेहार हैं हम भी ।
मना गिरिया^२ न कर तू ऐ नासेह^३ ।
इसमें बेइस्तियार^४ हैं हम भी ।

कहते हैं, मनकी अभिलाषा है कि चाहूँ तो सिर्फ़ तुमको चाहूँ, देखूँ तो सिर्फ़ तुम्हें देखूँ । तुम्हीं मेरे दिलकी आकांक्षा हो, तुम्हीं मेरी आँखोंकी अभिलाषा हो :—

चाहें तो तुमको चाहें देखें तो तुमको देखें,
स्वाहिश दिलोंकी तुम हो, आँखोंकी आरजू तुम ।

चित्रकारी :

स्वभावतः प्रेममें लज्जा होती है । इसका एक चित्र है :—

मीरसे पूछा जो मैं आशिक्र हो तुम
होके कुछ चुपकेसे शरमाये बहुत ।

प्रेमके दीवानेपनका एक चित्र है :—

कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह,
कल मीर खड़ा था यों सच है कि दिवाना था ।

जब सौन्दर्य खीझता है, क्रुद्ध होता है तो उसका आकर्षण बढ़ जाता है । वह गुस्सेसे ओठोंमें कुछ कह रहे हैं :—

जुल्म है क्रहर है क्रयामत है,
गुस्सेमें उसके जेरे लबकी बात ।

बज़म—महफ़िलमें आमने-सामने पड़ गये हैं । न देखा जाता है, न आँखें ही नीची किये रहा जाता है । इसी अवस्थाका चित्र है :—

बज़ममें मुँह उधर करें क्योंकर,
और नीची नज़र करें क्योंकर ?
यों भी मुश्किल है वों भी मुश्किल है
सर झुकाये गुज़र करें क्योंकर ?

शोखी और शरारतका एक चित्र है :—

मैं कहा देखो इधर टुक तुम तो मैं भी जान दूँ
हँसके बोले यह तेरी बातें हैं फिर देखेंगे हम ।

क्या सही तस्वीर है:—

उससे घबराके जो कुछ कहनेपै आ जाता हूँ ।

दिलकी फिर दिलमें लिये चुपका चला जाता हूँ ।

अनुभूतियोंका साधारणीकरण :

मीरने बहुत सहा है, बहुत कठिनाइयाँ झेली हैं पर अपनी अनुभूतियों को दूसरोंकी अनुभूतियोंसे मिला दिया है । वे उनकी अनुभूतियाँ तो हैं ही पर परिधिसे निकल कर वे सबकी अनुभूतियाँ हो गयी हैं । उनकी वेदना युग-वेदनामें समा गयी है या यह कहें तो ज्यादा ठीक होगा कि युग-वेदना उनकी वेदनामें समा गयी है । उन्होंने बड़ों-बड़ोंको मिटते देखा है; आँखोंके सामने सिंहासन उलटते देखे हैं, इसलिए वह खुद अपनेको समझते हैं:—

ज़ेरे फ़लक^१ भला तू रोये है आपको मीर ,
 किस-किस तरहका आलम याँ खाक हो गया है ।
 सर मारना पत्थरसे या ठुकड़े जिगर करना ,
 इस इश्क़की वादीमें हर नुअ^२ बसर करना ।
 हम तौर इश्क़से तो वाक्रिफ़ नहीं हैं लेकिन ,
 सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है ।
 तकलीफ़ दर्दे-दिलकी अबस हमनशीने ली ,
 दर्दे सख़ुनने मेरे सभोंको रुला दिया ।
 यारब ! कोई तो वास्ता भरगश्तगीका है ,
 एक इश्क़ भर रहा है ज़मी-आसमानमें ।

शहाँ कि कहले जवाँहर^१ थी खाके पाँ जिनकी ,
उन्हींकी आँखोंमें फिरते सलाइयाँ देखीं ।

×

×

शिकवा^३ करूँ हूँ बरूँ का इतने ग़ज़ब न हो बुताँ ,
मुझको खुदा नखास्ता तुमसे तो कुछ गिला^५ नहीं ।
चश्म सफ़ेद व अश्क सुख^६ आह दिले हर्जी^७ है याँ ,
शीशा^८ नहीं है, मय^९ नहीं, अब्र^{१०} नहीं, हवा नहीं ।

×

×

शिष्टता और मानवता :

मीरपर शिष्टताके संस्कार ऐसे पड़े हैं कि शायद ही कभी उनके काव्यमें ओछेपनकी झलक आई हो । वह इंसानको, मनुष्यको बहुत ऊँचा स्थान देते हैं, इसलिए कभी नीचेकी सतह पर होनेमें उन्हें खुशी नहीं । वह अपने प्रियतमके दोषोंको बहुत सँभाल कर कहते हैं । शब्दोंके चयनमें भी बड़ा ख्याल रखते हैं । मानवकी उच्चताके सम्बन्धमें वह कहते हैं:—

मरता हूँ मैं तो आदमे खाकी^{११} की शान पर ,
अल्लाह रे दिमाग़ कि है आसमान पर ।

×

×

वह लोग तुमने एक ही शोखीमें खो दिये ,
पैदा किये थे चरखने^{१२} जो खाक छान कर ।

१. रत्नांजन २. चरण-धूलि । ३. उपालम्भ । ४. भाग्य । ५. शिका-
यत । ६. लाल आँसू, रक्ताश्रु ७. दुखी दिल । ८. आईना, मचकी सुराही,
दिल । ९. मद्य । १०. बादल । ११. मिट्टीका पुतला आदमी ।
१२. आसमाँ ।

आदमे खाकीसे आलमको जिला^१ है वर्ना ,
आईना था तो मगर काबिले दीदार^२ न था ।

शब्द और अर्थका सन्तुलन :

उर्दू शायरीमें यह गुण बहुत कम पाया जाता है । इसमें शब्दोंका चुनाव गर्भित अर्थके वातावरणके अनुकूल होता है । काव्य-कलाका यह बड़ा दुष्कर पक्ष है । इसमें समानार्थकवाची दूसरे शब्द रख देनेसे वह सौन्दर्य, वह मजा नहीं रह जाता । पैनी दृष्टि और शब्दोंके ध्वन्यात्मक ज्ञानसे कविमें यह गुण आता है । नवाब मिर्जा जाफर अली खाँ 'असर' अपनी पुस्तक 'मजामीर' में इस विषयमें मीरकी विशेषताओंकी चर्चा करते हुए लिखते हैं:—“मगरबी शायरी^३में यह सनअत् सिर्फ हवास जाहरी^४ के मुशाहदात^५के फ़र्ज^६को पूरा करती है; मस्लून् दरियाकी रवानी, ...यह बात नहीं कि सौत^७ या नशस्ते अलफ़ाज^८ किसी जज़्बे^९ या क़लबी वारदात^{१०}की पेशखानी^{११} करे । यह मीरके कमालेफ़न^{१२}का मोजिजा^{१३} है कि उसने उर्दू शायरीमें, जिसपर सख्त क़यूद^{१४} आयद^{१५} हैं ...वह खूबियाँ पैदा कर दी हैं जो मगरबी शायरीमें, इतनी आजादी पर भी मादूम^{१६} हैं ।”

उदाहरण लीजिए:—

कुछ करो फ़िक्र मुझ दिवानेकी ।

धूम है फिर बहार आनेकी ॥

१. दीप्ति, शोभा । २. देखने योग्य । ३. पाश्चात्य काव्य । ४. शिल्प । ५. बाह्य भाव । ६. निरीक्षण । ७. कर्तव्य । ८. जैसे, उदाहरणतः । ९. ध्वनि । १०. शब्द बिठाना, शब्द-योजना । ११. मनोभाव । १२. हार्दिक घटना । १३. पूर्वाभास । १४. श्रेष्ठ शिल्प । १५. चमत्कार । १६. नियम, बन्धन । १७. लागू । १८. अप्राप्य, अस्तित्वहीन ।

असर साहब लिखते हैं:—“पहले मिसरेसे कितनी धबराहट जाहिर होती है ! अलफ़ाज^१ और उनकी तरतीब^२ ऐसी है कि आदमी जल्द पढ़ने पर मजबूर है जिससे पता चलता है कि इस शख्सको अपनेमें वह तग़य्युरात^३ महसूस होना शुरू हो गये जो एक मर्तबा पहिले दीवानगीका पेशखेमा^४ बन चुके हैं...दूसरे मिसरेमें लफ़्ज़ धूम ऐसी जगह बाक़ा^५ है कि मालूम होता है, ढोल-ताशे, बाजे बज रहे हैं, बहारका लक्कर जूक दर जूक^६ उमड़ा चला आ रहा है और इस ग़रीबका ख़िरमने-सन्नो-होश ताराज^७ किये देता है ।”

कुछ और उदाहरण लें:—

यारो मुझे मुआफ़ करो, मैं नशेमें हूँ,
अब दो तो ज़ाम^८ ख़ाली ही दो, मैं नशेमें हूँ ।

शेर पढ़नेसे ऐसा मालूम होता है कि ठीक नशेकी हालत है । नशेका वातावरण ही बन गया है ।

आलम आलम इश्क़ो जूनू^९ है दुनिया दुनिया तहमत है ।
दरिया दरिया रोता हूँ मैं सेहरा सेहरा^{१०} वहशत^{११} है ॥

और भी:—

आँखोंमें जी मेरा है, उधर देखता नहीं,
मरता हूँ मैं तो हाय रे सफ़ा^{१२} निगाहका ।

१. लफ़्ज़ (शब्द) का बहुवचन । २. क्रम । ३. परिवर्तन ।
४. अनुभव । ५. पूर्व लक्षण । ६. स्थित । ७. भीड़ पर भीड़ । ८. घीरज और चेतनाके खलिहान पर । ९. बिनष्ट । १०. प्याला । ११. जंगल, रेगिस्तान । १२. पागलपन । १३. गुज़ारना, व्यय होना ।

गागरमें सागर :

यह मीरकी अपनी विशेषता है। हिन्दीमें जैसे बिहारी अपने छोटे दोहोंमें एक दुनिया चित्रित कर जाते हैं, दोहे—‘जो देखनको छोटे लगे घाव करें गम्भीर’; उसी प्रकार मीरके छोटे-छोटे शेरोंमें एक दुनिया छिपी हुई है। शब्द थोड़े और भाव अधिक। जैसे उसके दिलमें एक बेक्रार समुद्र लहरें मार रहा है वैसे ही उसके शेरोंमें भी भावोंका एक घनीभूत संसार है। इनकी इस विशेषताकी चर्चा करते हुए अल्लामा तबातबाई लिखते हैं :—

“चन्द लफ्ज़ोंमें मानिए कसीर^१का अदा करना ईजाज^२ नहीं, ऐजाज^३ समझिए—दानेकी गिरहमें खिरमन^४, गुंचे^५की मुट्ठीमें गुलशनका^६ समा जाना तो देखिए।”

सचमुच ही मीरने एक दानामें अन्न-भाण्डार और एक मुकुलमें पुष्पोद्यान भर दिया है। कुछ उदाहरण लीजिए :—

लुत्फ़^७पर उसके हमनशी^८ मत जा,
कभू हमपर भी मेहर्बानी थी।

या

मर्गे मजनूँसे अक़ल गुम है मीर
क्या दिवानेने मौत पाई है !

× ×
मेरे तग़ायुरे हाल^९ पर मत जा
इत्तिफ़ाक़ात हैं ज़मानेके।
× ×

१. बहुत। २. संक्षिप्तीकरण। ३. चमत्कार। ४. खलिहान।
५. मुकुल। ६. पुष्पोद्यान। ७. कृपा। ८. साथी। ९. अवस्थान्तर।

कहा मैंने कितना है गुलका सबात^१,
कलीने यह सुनकर तबस्सुम^२ किया।

×

×

मत तुरबते^३ मीरको मिटाओ,
रहने दो गरीबका निशाँ तो।

रचनाकी क्रमबद्धता :

फिर मीर रचनाके विभिन्न अंगोंमें जो क्रमबद्धता और सामञ्जस्य रखते हैं वह भी उनकी बड़ी विशेषता है। इसके सिवा जिस रचनामें कर्ता, कर्म, सम्बन्ध, क्रिया इत्यादि क्रमसे आवें, जिस क्रमसे प्रायः हम उन्हें बोलते हैं, वह रचना विशेषतः गजलमें श्रेष्ठ है। क्योंकि गजल, वस्तुतः दो प्रेमियों, प्रेमी और प्रियतम, का वार्तालाप है। जो उसमें वार्तालाप की यह स्वाभाविकता जितना ही रख सकता है वह उतना ही बड़ा गजलगो है। देखिए :—

मीर इन नीमबाज़ आँखोंमें,
सारी मस्ती शराबकी-सी है।

×

×

मीर साहब रुला गये सबको
कल वह तशरीफ़ याँ भी लाये थे।

×

×

सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो,
अभी टुक रोते-रोते सो गया है।

बिल्कुल यह मालूम होता है जैसे बातचीत हो रही है। रोज़के वही थोड़ेसे गब्द हैं जिन्हें हम बोलते हैं पर उनमें क्या असर पैदा हो जाता है। बातोंका यह वातावरण, सदा, अपनी ग़ज़लोंमें रखनेकी चेष्टा वह करते हैं, बल्कि उन्होंने प्रायः अपनी ग़ज़लोंको “बातें” ही कहा है:—

बातें हमारी याद रहें फिर बातें ऐसी न सुनिएगा।

पढ़ते किसूको सुनिएगा तो देर तलक सिर धुनिएगा।

पढ़ते फिरेंगे गलियोंमें इन रेख़्तोंको लोग,

मुद्दत रहेंगी याद यह बातें हमारियाँ।

वार्तालापका वास्तविक वातावरण उत्पन्न करनेके लिए यह बातचीतमें प्रयुक्त सम्बोधनोंका भी उपयोग खूब करते हैं, जैसे मियाँ, भाई, साहब, मीरजी, ज़ालिम, प्यारे इत्यादि।

मुहाविरोंका प्रयोग :

मुहाविरोंके प्रयोगमें ‘मीर’ की सफलताको कोई न पासका। बस— थोड़ा बहुत शालिब सफल हुए हैं। ‘दाग़’ने अन्तिम युगमें मुहाविरोंको काव्यमें बिठाया पर उनमें कृत्रिमताका वातावरण है। मीरकी खूबी यह है कि वह मुहाविरके लिए मुहाविरका प्रयोग नहीं करते बल्कि आपसकी बातचीतको प्रभावोत्पादक बनानेके लिए उनका प्रयोग करते हैं—यहाँ तक कि यह मालूम ही नहीं पड़ता कि वह मुहाविरका प्रयोग कर रहे हैं। मौलाना मोहम्मद हुसेन ‘आज़ाद’ ने ठीक ही लिखा है:—

“वह दिलके ख्यालातको, जो कि सबकी तबीयतोंके मुताबिक़ हैं, मुहाविरका रंग देकर बातों-बातोंमें अदा कर जाते हैं।”

देखिए:—

अब तो जाते हैं बुतक्रदेसे मीर,
फिर मिलेंगे अगर खुदा लाया।

×

×

दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके,
पछताओगे, सुनो हो, यह बस्ती उजाड़ कर ।

×

×

बेहोशी सी आती है तुझे उसकी गलीमें
गर हो सके ऐ मीर ! तो इस राह न जा तू ।

×

×

क्या हाल हो गया है तेरे गममें मीरका,
देखा गया न हमसे तो टुक इस जवाँकी ओर ।

×

×

वाइजे नाकिसकी बातोंपर कोई जाता है मीर,
आओ मैखाने चलो तुम किसके कहने पर गये ।

व्यंग्य :

व्यंग्य काव्य-कलाका श्रेष्ठ अंग है । मीरका व्यंग्य भी एक विशेष प्रकारका है । उसमें बड़ी स्वाभाविकता है और उनके कहनेमें जो गहरा दर्द होता है उसीमें से प्रच्छन्न व्यंग्यकी किरणें अपने-आप फूट पड़ती हैं । डा० फारुकीने लिखा है:—

“उर्दू ग़ज़लमें तंज़ की मिसालें^२ ‘ग़ालिब’ और ‘मोमिन’के यहाँ भी मिलती हैं । ग़ालिबके तंज़में शोखी है, दिल बरस्तगी^३ नहीं । मोमिनके यहाँ वह ज़ल्मे तेर्गे^४ है.....मीरके तंज़में धीमापन है, हलकी-हलकी टीस है । इसकी मिसाल उस नशतरकी-सी है जिसकी धार निहायत बारीक और तेज़ हो ।”

उसकी ईफ़ाए-अहद तक न जिये,
उम्रने हमसे बेवफ़ाई की ।

यह नहीं कहते कि उसने अपने वादेको पूरा नहीं किया । या बेवफ़ाई की । कहते हैं:—“उम्रने हमारे साथ बेवफ़ाई की कि उसके वादेकी पूर्ति तक हम जी ही न पाये ।” कैसा छिपा गहरा, व्यंग्य है ।

दिल कि दीदारका क्रातिलके बहुत भूका था,
इस सितमकुशतासे एक ज़ख्म भी खाया न गया ।

मेरा दिल क्रातिलके दर्शनोंका बहुत भूखा था पर अत्याचार-पीड़ित इस बेचारेसे एक ज़ख्म भी खाया न गया ।

यहाँ दिलकी दुर्बलता, उसकी भूख और खानेको लेकर कैसा व्यंग्य है । ‘जख्म खाना’ मुहाबिरेको भी खूब निभाया है ।

शिकवए आबला^२ अभीसे मीर,
है पियारे हनोज़^३ दिल्ली दूर ।

अरे मीर, तुझे अभीसे छाले पड़नेकी शिकायत है । प्यारे ! अभी तो दिल्ली दूर है ।

इसमें भी व्यंग्यके साथ ‘दिल्ली दूर’ है मुहाबिरेको किस खूबीके साथ निबाहा है ।

एक शेर देखिए—

होगा किसी दीवारके सायेके तले मीर,
क्या काम मोहब्बतसे है उस आरामतलबको ।

डॉ० मौलवी अब्दुल हक इस शेरपर मुग्ध हैं । लिखते हैं :—“इस शेरका हुस्न^४ शरह^५ और बयानसे बाहर है । ‘आरामतलब’ का लफ़्ज़

१. प्रण-पालन । २. छाले पड़नेकी शिकायत । ३. अब भी ।
४. सौन्दर्य । ५. व्याख्या ।

इसकी जान है । एक शस्त्र जो मोहब्बतके कारन ऐशो-आरामपर लात मारके और घरबार छोड़कर, बेयार व बेखानुमां, आवारा व सरगरदा, महबूब की दीवारके नीचे पड़ा है उसे ताना दिया जाता है कि आरामतलब है और ऐसे आरामतलबको मोहब्बतसे क्या काम ? जब यह आरामतलबी है तो क्यास करना चाहिए कि मोहब्बतकी मुसीबत क्या होगी ?”

उपमाएँ और रूपक :

मीर अलंकारवादी नहीं हैं। वह अलंकारोंका प्रयोग कम ही करते हैं। वह उन लोगोंमें से हैं जो सौन्दर्यको कृत्रिम उपकरणोंसे सजाये बिना, उसके स्वाभाविक सम्मोहनके भक्त हैं। जहाँ वे अलंकारों—मुख्यतः उपमा रूपक उत्प्रेक्षा आदि—का प्रयोग करते हैं वहाँ यों करते हैं कि निगाह स्वाभाविक सौन्दर्यकी तरफ़, खुदादाद हुस्नकी ओर, जाती है, इन गहनोंकी तरफ़ नहीं। ये अलंकार उनके यहाँ, सौन्दर्यका अंग बनकर रह जाते हैं। फिर ये अलंकार अपनेमें भी बहुत सीधे-सादे हैं जैसे फूलपर ओसकी बूंद होती है। इन अलंकारोंके कारण शेरोंमें कोई उलझाव पैदा नहीं होता बल्कि वे और चमक उठते हैं।

उसके गये पे दिलकी खराबी न पूछिए,

जैसे किसीका कोई नगर हो लुटा हुआ।

सोधी-सादी उपमा है पर कितनी ठीक बैठती है।

शामहीसे कुछ बुझा-सा रहता है

दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिसका।

दुखिया दिलको शरीबका टिमटिमाता दीपक कहकर मीरने कहनेके ढंगकी सादगीमें इस रूपकको ऐसा जड़ दिया है जैसे अंगूठीमें नगीना हो।

इनके छोटे सीधे-सादे शेर तो गजबके हैं:—

खिलना कम-कम कलीने सीखा है,
उसकी आँखोंकी नीमखाबीसे ।

×

×

नाज़की उसके लबकी क्या कहिए,
पंखड़ी एक गुलाब की-सी है ।

बिना अलंकारके भी शब्दोंकी योजनासे चित्रकारी वा अलंकरणका उदाहरण देखिए:—

ज़िन्दांमें भी शोरिश^१ न गयी अपने जुनूँकी,
अब संग^२ मुदावा^३ है इस अशुप्रतासरी^४ का ।

‘असर’ लखनवी इस शेर पर मुग्ध होकर लिखते हैं:—“इस शेरमें लफ़्ज़ संग ऐसी जगह वाक़अ^५ है कि मालूम होता है एक पाबज़ंजीर^६ दीवानेने, जो हाथमें पत्थर लिये हुए है, पहिला मिसरा पढ़ा और दाँत भीचके आँखें बन्द करके पत्थरसे सिर फोड़ लिया और लहूमें नहा गया, हालाँकि शेरमें इन अमूर^७ का ज़िक्र नहीं ।”

संगीतात्मकता :

काव्य और संगीतका सम्बन्ध गहरा है । जिस काव्यमें जितनी ही संगीतमयता होती है उसका प्रभाव उतना ही ज्यादा होता है । चूँकि ग़ज़ल भी एक प्रकारका गीति-काव्य (लीरिक) है इसलिए उसमें संगीतात्मकता बहुत आवश्यक है । मीरमें काफ़ी संगीतात्मकता है । इसके अनेक स्रोत हैं जैसे कभी उपयुक्त ध्वन्यात्मक शब्दोंको गूँथकर, कभी

१. हंगामा । २. पत्थर (जिससे दीवाना अपनेको या दूसरोंको मारता है) ३. चिकित्सा, इलाज़ । ४. पागल दिमागी । ५. स्थित । ६. शृंखलाबद्ध (पाँवमें) । ७. कार्यों, बातों, विषयों ।

प्रवाह एवं तीव्रगति-प्रधान छन्दोंका प्रयोग करके, कभी तुकान्तकी पुनरुक्ति द्वारा ।

नमूने देखिए:—

कुछ मौज हवा पेचाँ ऐ मीर नज़र आई ।

शायद कि बहार आई, जंजीर नज़र आई ।

छन्द-विधान द्वारा संगीतात्मकताके उदाहरण लीजिए:—

सब्र कहाँ जो तुमको कहिए लगे गलेसे सो जाओ ।

बोलो न बोलो बैठो न बैठो खड़े-खड़े टुक हो जाओ ।

×

×

जब मिलनेका सवाल करूँ हूँ जुल्फोरुख़ दिखलाते हो ।

बरसों मुझको यूँ ही गुज़रे सुबह व शाम बताते हो ।

×

×

तू भी रवाते कुहन्से सूफ़ी सैरको चल टुक सब्ज़ीकी,

अब्रे सियह^१ क़िबला^२से आकर झूम पड़ा मैदानों पर

×

×

करो तबक्कुल^३ कि आशक़ीमें न यों करोगे तो क्या करोगे ?

अलम^४ जो यह है तो दर्दमन्दो कहाँ तलक तुम दवा करोगे ?

यह छोटी बहरकी ग़ज़ल देखिए, मालूम होता है, दिल टुकड़े-टुकड़े हो रहा है:—

फ़क़ीराना आये सदा कर चले ।

मियाँ, खुश रहो हम दुआ कर चले ।

१. काला बादल । २. काबा । ३. भगवान्‌के भरोसे अपनेको छोड़ देना । ४. दुःख ।

कोई नाउमीदाना करते निगाह,
 सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले,
 परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
 नजरमें सबोंकी खुदा कर चले ।

X

X

इस अहद में इलाही मुहब्बतको क्या हुआ,
 छोड़ा वफ़ाको उनने मुहब्बतको क्या हुआ ?
 उम्मीदवार वादए दीदार मर चले,
 आते ही आते यारो क्रयामतको क्या हुआ ?

X

X

तुकोंकी पुनरुक्ति द्वारा संगीतात्मकताका एक उदाहरण नीचे
 देता हूँ:—

मौसिम है निकले शाखोंसे पत्ते हरे-हरे ।
 पौधे चमनमें फूलोंसे देखे भरे-भरे ।
 आगे किसूके क्या करें दस्ते तमअ' दराज़^३,
 वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे ।
 गुलशनमें आग लगा रही थी रँगें गुलसे मीर,
 बुलबुल पुकारी देखके साहब परे-परे ।

फ़ारसी उक्तियोंका उपयोग :

इन्होंने फ़ारसी उक्तियोंका जगह-जगह प्रयोग करके उर्दू भाषाके प्रयोग-क्षेत्रको विस्तृत किया है । इनके पहले इनके गुरु 'आरज़ू' ने फ़ारसी

तरकीबों और शब्दोंका काफ़ी प्रयोग किया था। मीरने बचपनमें उनके संसर्गका खूब लाभ उठाया था, इसलिए इनकी भाषा और प्रारम्भिक रचना-प्रणालीपर उनका बहुत असर दिखाई पड़ता है। वैसे फ़ारसी उक्तियोंका थोड़ा-बहुत प्रयोग पुराने उर्दू कवियोंमें से अधिकांशने किया है। मोमिन और ग़ालिबने इस ओर काफ़ी ध्यान दिया है पर मीरकी विशेषता यही है कि उन्होंने केवल उन्हीं उक्तियोंको लिया है जो उर्दूके रचना-विधानमें फ़िट हो जाती हैं। फ़ारसी शब्दों एवं तरकीबोंके प्रयोगमें यह निश्चित रूपसे अपने गुरु, जिनसे बादमें दिल खट्टा हो गया, खाँ आरज़ू के ऋणी हैं क्योंकि इन्होंने ऐसे अनेक शब्दोंका प्रयोग किया है जिनका चलन उठ गया है पर खाँ आरज़ूके कोश 'चिरारो हिदायत'में वे ज्योंके त्यों मिलते हैं, (जब अन्य कोशोंमें अप्राप्य हैं)।

बहर-हाल फ़ारसी तरकीबोंका अच्छा प्रयोग मीरमें मिलता है—

सरनशीने रहे मैख़ाना हूँ, मैं क्या जानूँ,
रस्मे मस्जिदके तईं शोख़ कि आया न गया।

×

×

हंगामा गर्मकुन जो दिले नासबूर।
पैदा हरएक नालासे शोरे नशूर था।

फ़ारसी मुहाविरों पर उर्दू बन्द लगाकर इन्होंने नया आविष्कार किया है। फ़ारसी मुहाविरोंके अनुवाद भी इनकी रचनामें पाये जाते हैं। कुछ उदाहरण लीजिए।

‘ख़ुशमनमें आयद’ यह फ़ारसीका एक मुहाविरा है। इसका अर्थ होता है, ‘मुझे भला नहीं लगता।’ मीर साहब इसी मुहाविरको उर्दूके सांचेमें यों ढालते हैं:—

नाकामी^१ सदहसरत^२ खुश लंगती नहीं वर्ना,
अब जीसे गुजर जाना कुछ काम नहीं रखता ।

इसी प्रकार 'नमूद करदन' फ़ारसीका एक फ़िक्क़रा है । इसका अर्थ है 'प्रकट करना' । मीर लिखते हैं:—

नमूद^३ करके वहीं बहरेगम^४में बैठ गया,
कहो तो मीर भी एक बुलबुला था पानीका ।

अनेक स्थानों पर इनमें फ़ारसी कवियोंके काव्यकी छाया भी दिखाई पड़ती है । कहीं-कहीं तो दोनों एकदम टकरा गये हैं । उदाहरण लीजिए:—

किसी कविका फ़ारसी शेर है:—

बगिर्दे तुरबतम अमरब हुजूम बुलबुल बूद ।
मगर चिराग़ो मज़ारम ज़रोग़ाने गुल बूद ।

मीर साहबने भी वही बात कही है मगर खूब कही है:—

जाय रोग़ान दिया करे है इश्क,
खूने बुलबुल चिराग़में गुलके ।

बेदिलका एक फ़ारसी शेर है:—

ज़िन्दगी बरग़र्दनम उप्रताद बेदिल चारानेस्त,
शाद-बायद जीस्तन नाशाद बायद जीस्तन ।

मीर साहब कहते हैं:—

गोशागीरी अपने बसमें है न है आवारगी,
क्या करें यों मीर साहब, बन्दगी बेचारगी ।

१. असफलता । २. बहुत (सौ) अफसोस है । ३. प्रकट ।
४. दुःख-सागर ।

‘सादी’ का शेर है:—

दोस्तां मनअ कुनिन्दम कि चरा दिल बुतो दादम,
बायद अव्वल बतू गुप्तन कि चुनीं खूब च राई ।

मीर कहते हैं:—

चाहनेका हम पै यह खूबाँ जो धरते हैं गुनाह,
इनसे भी पूछो कोई तुम इतने क्यों प्यारे हुए ।

इन्होंने इस क्षेत्रमें भी अपने ऊपर कुछ नियम और बन्धन बना लिये हैं, ऐसा नहीं कि गालिबकी भाँति जो मनमें आया लिख मारा ।

भारतीय वातावरण और देशज शब्दोंका प्रयोग :

खुद फ़ारसीके कवि और लेखक होकर भी ‘मीर’ने खुल कर देशज शब्दोंका प्रयोग किया है जिससे भारतीयताका स्पर्श और वातावरण इनके काव्यमें मिलता है । साँझ, समय, विश्राम, योगी, बिस्तार, निदान, अन्धा-धुंध, राम-कहानी, गूदड़, चोट्टे, स्वभाव, ठिठुरा गयी, अच्छर (अक्षर) इत्यादि अनेकानेक शब्द ऐसे मजेसे इनकी जुबानमें खप गये हैं कि क्या कहें । दुःख यही है कि बादमें यह प्रवृत्ति उर्दू काव्यमें कम होती गयी; फ़ारसी और अरबीका प्रभाव बढ़ता गया जिससे उर्दूमें एक विदेशी वातावरण पैदा हुआ और वह अन्य भारतीय भाषाओंसे दूर होती गयी । पिछले २५-३० वर्षोंमें गीत लिखने वाले कवियों तथा फ़िराक़ जैसे उर्दू शायरों ने इसे फिर भारतीय वातावरणमें लानेका प्रयत्न किया है । मीरके प्रयोग देखिए:—

दिन आजका भी साँझ हुआ इन्तज़ारमें ।

×

×

इस समयमें देखने हमको बहुत आया करो ।

×

×

क्या बात थी कि जिसका यह विस्तार हो गया ।

×

×

सुबहे पीरी शाम होने आई मीर,
तू न चेता यां बहुत दिन कम रहा ।

अँधाधुन्ध रोते हैं आँखोंसे खूँ ।

×

×

अच्छर हैं तो इश्क़के दो ही लेकिन है विस्तार बहुत ।

यह सिर्फ़ कुछ शब्दोंके प्रयोगकी ही बात नहीं है । इनकी दृष्टिमें भी गहराई एवं विशालता थी । हिन्दू-मुसलमानके भेदसे वह परे थे । उनमें सूफ़ियों और संतोंका रंग था । वह दैरो-हरमकी पाबन्दियोंसे परे प्रेममें डूबे हुए थे और अकबराबाद और दिल्लीकी ज़मीनके प्रति उनकी गहरी निष्ठा थी । इन चीज़ोंने उनके काव्यको भारतीय रूप दे दिया है ।

काव्य-दृष्टि :

मैं बार-बार लिख चुका हूँ कि व्यथानुभूति इनके समस्त काव्यकी जान है । वह शायरीको कोई पेशा नहीं मानते थे वरं एक 'संस्कृत-कला' मानते थे और उनका कहना था कि जब तक इंसानमें दिलका दर्द पैदा नहीं होता तब तक उसका इधर निगाह करना भी जुर्म है । उर्दू काव्यको यह दर्दसे भरी दृष्टि देकर 'मीर'ने उसे निहाल कर दिया है । पर इतना ही बस नहीं है, उन्होंने भाषाकी स्वाभाविक गति और उसकी प्राकृतिक प्रेरणाओंको भी ग्रहण किया है । इसीलिए वे ऐसे ही शब्द चुनते हैं जिनपर तैरते हुए उनके भाव दिलोंमें प्रवेश कर जायें । फारूकी के शब्दोंमें "यह अशआर नहीं, शर्बतके घूँट हैं; ग़ज़लें नहीं, मीठी-मीठी बातें हैं । वह लज़्ज़को बेजान और बेरूह चीज़ नहीं समझते थे ।" उनका ऐसा प्रयोग करते हैं जैसे शब्द वहींके लिए बनाया गया हो ।

तसव्वुफ़का रंग :

इन्हें हम सूफ़ी तो नहीं कह सकते पर इनपर इनके पिता, चचा एवं दूसरे दरवेशोंके सत्संगसे तसव्वुफ़का गहरा प्रभाव पड़ा है। दर अस्ल यह प्रेमके कवि हैं। जो संस्कार इन्हें पिता, चचा इत्यादिसे मिले उसके कारण यह विलासिताके रूपमें बिकनेवाले बाज़ारू प्रेमसे दूर रहे पर यह भी सच है कि इनका प्रेम ईश्वरीय प्रेम उतना नहीं जितना मानवीय है। बल्कि इनका मानवीय प्रेम ही ईश्वरीय प्रेमकी कोटि तक पहुँच गया है। जैसे :—

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुशे,
नज़रमें सबोंकी खुदा कर चले।

तुम्हारी इतनी उपासना की है कि सबकी दृष्टिमें तुम्हें ही ईश्वर बना दिया है।

प्रेमका रंग इनपर इतना गहरा है कि हर जगह उसे ही देखते हैं :—

इश्क़ हो इश्क़ है जहाँ देखो,
सारे आलममें भर रहा है इश्क़।
इश्क़ माशूक़ इश्क़ आशिक़ है,
यानी अपना ही मुब्तला है इश्क़।

×

×

कहीं बन्दा कहीं खुदा है इश्क़।

×

×

आरज़ू इश्क़ मुद्आ है इश्क़।

×

×

मुहब्बत ही इस कारख़ानेमें है।
मुहब्बत ही सब कुछ ज़मानेमें है।

तसव्वुफ़का मूलाधार सर्वग्राही प्रेम ही है—वह प्रेम जिसमें द्वन्द्व (दुईका भाव) उठ जाता है; शत्रु-मित्रका भेद-भाव दूर हो जाता है। उफ़्फ़ीका यह कथन कि उसको निगाहमें 'परवाना चिराग़ हरमोदेर नदानद' (शलभ और दीपक, मन्दिर, मस्जिदमें भेद नहीं) मीरमें इसका हलका रंग है :—

मज़हबसे मेरे क्या तुझे, मेरा दयार और ।
मैं और, यार और, मेरा कारबार और ।

×

×

किसको कहते हैं नहीं मैं जानता इस्लामो कुफ़,
देर हो या काबा मतलब मुझको तेरे दरसे है ।

इसके अतिरिक्त इनके काव्यमें तसव्वुफ़की गहराईकी भी अनेक रंग मिलते हैं। यह 'लाहूत' (आराध्यमें विलीन होनेकी अवस्था) का रंग देखिए :—

बेखुदी ले गयी कहाँ हमको
देरसे इन्तज़ार है अपना ।

×

×

ख़बर कुछ तो आई है उस बेख़बर तक ।

हृदयकी पूजा चल रही है। इसमें ज्ञात होता है कि सब ख़जाना इसी दिलमें छिपा है। इस दिलकी आग अग़र प्रज्वलित कर दी जाय तो इस विद्युत्का एक कण सौ कोहे तूरेके बराबर हो सकता है। कहते हैं :—

गाफ़िल थे हम अहवाले दिले खस्तासे अपने,
वह गंज^१ इसी कुंजे ख़राबामें निहाँ^२ था ।

आतिश^१ बुलन्द^२ दिलकी न थी वर्ना ऐ कलीम^३ !
यक शोला^४ बर्क^५ खिरमने सद^६ कोहे तुर^७ था ।

×

×

तरीक़े इश्क़में है रहनुमा^८ दिल ।
पयम्बर^९ दिल है क्रिबला^{१०} दिल खुदा दिल ।

इस रहस्यात्मकताको देखिए :—

अपने खयाल हीमें गुज़रती है अपनी उम्र
पर कुछ न पूछो समझे नहीं जाते हमसे हम ।

उनके और हमारे बीच यह जीवन ही एक परदा है । 'हम' न हों तो
फिर इस लज्जावरणकी क्या जरूरत ?

हस्ती^{११} अपनी है बीचमें पर्दा,
हम न हों तो फिर हिजाब^{१२} कहाँ ?

×

×

तत्त्व-ज्ञान और जीवन-दृष्टि :

मीरने तेज़ीसे दुनियामें होने वाले परिवर्तनोंको देखा । इससे जीवनकी
अस्थिरता एवं संसारकी असारता उनके दिल पर जम गयी । वह समझते

१. आग । २. ऊँची । ३. ईश्वरसे बातें करनेवाला (हज़रत मूसा) ।
४. लपट । ५. विद्युत् । ६. सौ । ७. शाम देशका एक पर्वत जहाँ हज़ा-
रत मूसाको ईश्वरीय ज्योति दिखाई पड़ी थी । ८. मार्गदर्शक । ९. संदेश-
वाहक । १०. काबा । ११. अस्तित्व । १२. परदा, आड़, लज्जा ।

हैं कि दुनियामें चल-चलाव लगा है; यहाँ थोड़ा विश्राम है,—चंद दिन रहना है। यह जीवन मंजिल नहीं, राह है।

यह मंजिल नहीं, बेखबर ! राह है।

फूलकी कली जैसे क्षण भरके लिए मुसकराती है, एक बिजली चमक कर रह जाती है, वैसे ही यह जीवन क्षणस्थायी है—जल बुद्बुदके समान। यह विलासिताकी दुनिया मृगतृष्णा है।

सैरकी हमने हर कहीं प्यारे।

फिर जो देखा तो कुछ नहीं प्यारे।

अभिलाषाओंकी भूमि कभी हरी नहीं होती; इसलिए उनके बीज बोना बन्द कर :

सब्ज़^१ होती ही नहीं यह सरज़मी^२,
तुस्मे खाहिश^३ दिलमें तू बोता है क्या ?

मृत्युके बारेमें कहते हैं :—

मर्ग एक माँदगीका वक्रफा है,
यानी आगे चलेंगे दम लेकर।

विविध विशेषताएँ :—

मीरके जीवन एवं काव्यमें अनेक प्रकारकी विशेषताएँ हैं।

१. यह धर्मसे फ़कीर या दरवेश नहीं थे पर दिलकी रूझानसे फ़कीर ही थे। २. फ़कीर होते हुए भी मस्त रहते थे और किसीके आगे हाथ फैलाना पाप समझते थे। कहते हैं :—

१. हरी। २. भूमिक्षण्ड। ३. अभिलाषाके बीज।

आगे किसीके क्या करें दस्ते तमअ दराज़ ,
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे ।

अत्यन्त स्वाभिमानी थे, किसीके आगे सिर न झुकाते थे । खुद फ़ाका-मस्त थे पर साहस यह कि बड़ीसे बड़ी चीज़को सहज भावसे ठुकरा सकते थे । आबेहयात (अमृत) के लिए तिरस्कारपूर्वक कहते हैं :—

आबेहयात^१ वही न जिसपर खिज़्रो^२ सिकन्दर मरते थे ।
खाकसे हमने भरा वह चश्मा^३, यह भी हमारी हिम्मत थी ।

३. वह नियतिवादी थे । यह मानते थे कि नियति अपने पूर्वनिर्दिष्ट पथ पर हमें चलाती है, इसलिए दुःख-सुखको अनासक्त होकर ग्रहण करना चाहिए । ४. फिर उनका कथन यह भी है कि हम दुःखी हों या सुखी, हमें किसीका दिल न दुखाना चाहिए और ऐसा काम कर जाना चाहिए कि लोग याद करें । किसीके दिलमें जगह करनेको यह मानवका महान् गौरव मानते थे । कहते हैं :—

काबा पहुँचा तो क्या हुआ ऐ शेख !
सई^४ कर दुक पहुँच किसी दिलको ।

५. वह विशालहृदय, विशाल सहानुभूतियोंके प्राणी थे । साम्प्रदायिक बन्धनोंको तुच्छताकी दृष्टिसे देखते थे । ६. किसीके बुराई करने पर भी भलाई करनेकी ही आकांक्षा रखनी चाहिए :—

कोई गाली भी दे तो कह भला भाई भला होगा ।

१. अमृत । २. खिज़्र = एक पैगम्बर जिनके बारेमें प्रसिद्ध है कि इन्होंने अमृत पिया है और अमर हैं । भूले-भटकोंको राह दिखाया करते हैं । ३. स्नोत । ४. श्रम ।

७. मनुष्यको सर्वोपरि मानते थे । ८. खुदा और बन्देमें थोड़ा ही अन्तर मानते थे :—

सरापा^१ आरजू होनेने बन्दा कर दिया हमको ,
वगर्ना हम खुदा थे गर दिले बेमुद्दा होते ।

ऊपरसे नीचे तक अभिलाषाकी मूर्ति होनेके कारण ही हम बन्दा हो गये । अगर हमारा हृदय अनासक्त, निरभिलाष होता तो हमीं खुदा होते ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उनका जीवन और उनका काव्य एक ही स्रोतसे निकलकर बहा है ।



मीर-काव्यके सिद्धान्त एवं विषय



मीरके काव्य-सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त थे। वह मानते थे कि एक उच्चकोटिके कविका अपने लिए कुछ ऐसे नियम और सिद्धान्त बाँध लेना आवश्यक है जिनके द्वारा उसका काव्य दूसरे कवियोंके काव्यसे भिन्न पड़े। इस सम्बन्धमें वह निम्नलिखित विचारोंके समर्थक थे।

१. काव्य-रचना शिष्ट एवं संस्कारी व्यक्तियोंका कार्य है। मीर मानते थे कि काव्य-रचनाके लिए मनुष्यके अन्दर उच्च संस्कार होने चाहिए। उनकी दृष्टिसे यह काम शरीफोंका है; ओछी तबीयत वालोंको इस रास्ते चलना ही न चाहिए। अपनी एक मस्नवीमें कहते हैं :—

सोहबतें जब थीं तो यह फ़न्ने शरीफ़ ।
कस्ब^१ करते जिनकी तबई^२ थीं लतीफ़ ।
थे ममीज़^३ वो दरमियाँ इंसाफ़ था ।
ख़ारो खस^४से क्या यह उर्सा^५ साफ़ था ।
दस्तल्ल इस फ़नमें न था इजलाफ़^६ को ।
कुछ बताते भी थे सो अशराफ़^७ को ।
थे जो उस अध्यायमें उस्तादेफ़न^८ ।
नाक्रिसों^९से वे न करते थे सख़ुन^{१०} ।

१. पेशा । २. विवेचक, विवेकवान् । ३. कुश-कर्कट । ४. मैदान, क्षेत्र । ५. निम्न कोटि । ६. शिष्ट । ७. काव्यगुरु । ८. तुच्छ । ९. बात ।

हम तलक भी थी वही रस्मे कदीम^१ ।
 यानी जिनके होते थे जेहने सलीम^२ ।
 प्यार करते थे उन्हें उस्तादे फ़न ।
 उनके होते रहबरे राहे सखुन^३ ।
 जुल्फ़ वाँ ज़िनहार पाते थे न बार ।
 शायरी काहे का था उनका शुआर^४ ।
 नुक्ता परदाज़ी^५ से इजलाफ़ोंको क्या ?
 शेरसे बज़ाजों नद्दाफ़ों^६ को क्या ?

साफ़ कहते हैं कि जब सभा-संगत होती थी तब यह शिष्ट लोगोंकी कला थी । इस पेशेमें वही आते थे जिनकी तबीयत हाज़िर होती थी । वे लोग बिबेकी थे; उनके बीच न्याय था । उस समय यह मैदान, यह क्षेत्र कुश-काँटे से साफ़ था । निम्नकोटिके लोगोंका इसमें प्रवेश ही न हो पाता था । गुरु-जन बताते भी थे तो शिष्ट-सम्य लोगोंको ही बताते थे । उस ज़मानेमें इस कलाके आचार्य तुच्छ लोगोंसे बात न करते थे । हमारे ज़माने तक भी वह प्राचीन परम्परा चली आ रही थी । अर्थात् जिनकी प्रज्ञा परिष्कृत होती थी उन्हें ही काव्य-कलाके आचार्य प्यार करते थे और उनके काव्य-मार्गके पथ-दर्शक बनते थे । तुच्छ लोगोंकी इस ओर गुज़र न थी । काव्य-एवं उच्चकल्पनासे बज़ाजों एवं धुनियोंको क्या मतलब ?”

स्पष्ट ही वह अपने समयकी रुद्ध होकर भी लोगोंके हृदयमें घुसी सामन्ती विचारधाराके प्रतिनिधि थे । आजके युगमें ऐसे विचार आश्चर्य-जनक और प्रतिगामी प्रतीत होते हैं पर यह भी सच है कि काव्य-रचना को कारखानोंकी तरह जो भी उसमें आवे उसका कार्यक्षेत्र नहीं बनाया जा

१. प्राचीन परम्परा । २. परिष्कृत प्रज्ञा । ३. काव्य-मार्गके पथदर्शक । ४. कार्य । ५. अर्थगोभीर्य । ६. धुनियों ।

सकता । इसके लिए कल्पनाकी उड़ान, गहरी सूक्ष्म, सतहके अन्दर देखने वाली आँखों और दर्दभरे दिलकी जरूरत पड़ती है ।

२. बौद्धिक योग्यताकी आवश्यकता:—दूसरी चीज़, जो उनके विचारसे काव्य-रचनाके लिए आवश्यक है बौद्धिक योग्यता है । बौद्धिक योग्यतासे मीरका अभिप्राय ज्ञान, सूक्ष्मबुद्ध और कला-सम्बन्धी जानकारीसे है । जब तक एक ओर विशद जानकारी और दूसरी ओर उसको कल्पनाके पंखोंपर उड़ानेकी तैयारी न होगी तब तक श्रेष्ठ काव्यका जन्म ही नहीं हो सकता ।

३. भाषा—मीर मानते हैं कि शेरमें भाषा और रोज़मर्रा बिल्कुल स्पष्ट एवं सरल होना चाहिए । प्रवाह, रवानी, धारामें किसी भी मूल्यपर कमी न आने देनी चाहिए । मँजी साफ़ ज़बान हो । अपनी ज़बानको वह प्रमाण मानते थे और इसके सम्बन्धमें जगह-जगह गर्व-पूर्वक जिक्र किया है:—

गुप्तगू^१ रेखतेमें हमसे न कर ।

यह हमारी ज़बान है प्यारे ।

उपदेश देते हैं, सलाह देते हैं:—

हुस्न^२ तो है ही करो लुफ़्फ़े ज़बाँ भी पैदा,
मीरको देखो कि सब लोग भला कहते हैं ।

×

×

देखो तो किस रवानी^३से कहते हैं शेर मीर ,
दुर^४ से हजार चन्द है उनके सख़ुनमें आब^५ ।

अर्थात् प्यारे, यह हमारी ज़बान है । इसमें हमसे क्या बात करता

१. बात-चीत । २. सौन्दर्य । ३. प्रवाह, गति । ४. मोती ।
५. पानी, चमक ।

है ? तुझमें सौन्दर्य तो है पर भाषाका आनन्द, भाषाकी सुषमा भी तो पैदा कर; उसीके कारण तो सब लोग 'मीर' को भला कहते हैं । ज़रा देखो, किस गति और प्रवाहके साथ मीर शेर कहते हैं । उनके काव्यमें मोतीसे भी ज़्यादा 'पानी' है ।

४. बेलक्षण्य—काव्यमें कहनेका कोई विशेष ढंग—अन्दाज़े बर्या—और कोई विलक्षणता होनी चाहिए ।

ज़ुल्फ़-सा पेचदार है हर शेर,

है सखुन मीरका अजब ढबका ।

×

×

शेर मेरे हैं सब ख़्वास पसन्द^१,

पर मुझे गुफ़्तगू अवाम^२ से है ।

५. फ़ारसी तरक्कीबोंकी सीमा—उनके विचारसे शेरमें वही तरक्कीबें लाना जायज़^३ है जो ज़बान पर बार^४ न हो । यानी विजातीय फ़ारसी उक्तियोंको, जो हमारी भाषामें खप न सकें और उसपर बोझ बन कर रह जायें, प्रयुक्त न करना चाहिए । उनका यह भी कहना है कि इसका मर्म विवेकी कवि ही समझ सकते हैं ।

६. ऐहामके प्रति अरुचि—उस समयकी शायरीमें ऐहाम^५ का बड़ा जोर था पर मीर उसे अधिक महत्त्व न देते थे । अपने काव्यके विषयमें कहते हुए प्रकारान्तरसे व्यंग्य करते हैं:—

१. विशेष लोगोंको प्रिय । २. जन-साधारणके प्रति वार्ता । ३. उचित, विहित । ४. बोझ । ५. ऐहाम—काव्य-शिल्पका वह रूप है जिसमें कवि श्लिष्ट शब्दोंका प्रयोग करता है—एक निकट अर्थबोधक, एक दूरागत अर्थबोधक । लगता है निकटकी बात कह रहा है पर दरअसल दूरकी बात होती है ।

क्या जाने दिलको सींचे हैं क्यों शेर मीरके,
कुछ तर्ज़ा ऐसी भी नहीं ऐहाम भी नहीं ।

७. घृणाकी भावनाका त्याग—काव्यमें घृणाकी भावना कहीं न आनी चाहिए ।

८. मुहाबिरोंका उचित प्रयोग—मुहाबिरोंका उचित प्रयोग तो करना ही चाहिए, साथ ही उनमें परिवर्तन भी नहीं करना चाहिए—यह कविकी असमर्थताका सूचक है । इसका उदाहरण देते हुए मीर सज्जाद के निम्नलिखित शेर पर उन्होंने आपत्ति की है:—

मेरा जला हुआ दिल मिजगाँके कब है लायक ,
इस आबलेको क्यों तुम काँटोंमें ऐंचते हो ?

मुहाबिरा है तुम काँटोंमें क्यों घसीटते हो, मीर साहबने उसे बदल दिया है । वह कहते हैं कि मेरा जला हुआ दिल दृगंचल, पलकों, बरीनियों के लायक कहाँ है । इस फफोलेको तुम काँटोंमें क्यों घसीटते हो पर मुहाबिरा छंदके चौकठमें फिट नहीं होता था इसलिए उन्होंने उसे बदल दिया । यही उनका, काव्यका दोष है ।

९. काव्यकी बाह्य सज्जा—मीरने काव्यकी बाह्य सज्जा पर एक सीमा तक ही जोर दिया है । बहुत ज्यादा अलंकरणसे जैसे नारी बनी हुई—सी लगती है वैसे ही काव्य भी उससे बोझिल हो जाता है; चल नहीं पाता, उसकी गति रुकती है और स्वाभाविक सौन्दर्यमें शिथिलता आती है ।

१०. भावार्द्रता—शेर जज़बाते दिल—हृदयके भावों—का आईना होना चाहिए । जो कुछ कहा जाय वह श्रोताके दिलमें पैठ जाना चाहिए जैसे आत्मा और शरीर एकमें गुंथे हुए हैं वैसे ही शेरमें भावार्द्रता होनी

१. दृगंचल, बरीनी ।

चाहिए। वही आत्मा है। अन्दरका रस, अन्दरकी बात, प्राणोंका स्वर काव्यमें होना चाहिए। काव्य अन्तःवेदनाका पर्दा मात्र है:—

किया था रेखता पर्दा सखुनका,
सो ठहरा है यही अब फ़न हमारा।

×

×

इस परदेमें ग़मे दिल कहता है मीर अपना,
क्या शैरो शायरी है यारो शुआरे आशिक़ ?

×

×

मुझको शायर न कहो मीर कि साहब मैंने,
ददो़ग़म कितने किये जमा तो दीवान किया ?

×

×

बे सोज़े दिल किन्होंने कहा रेखता तो क्या ?

११. गुलो बुलबुलकी सीमा तोड़ो—उनका विचार है कि शायरीको सिर्फ़ गुल व बुलबुलके अफ़सानों^१ तक महदूद^२ न होना चाहिए बल्कि वह उससे बहुत बसीअ^३ चीज़ है। इसी बिना पर उन्होंने 'नकातुश्शुअरा' में यह कहकर आपत्ति की है—“हरचंद उर्सए सखुन ओ हमाँ दर लफ़ज़हाए गुल व बुलबुल तमाम अस्त। बिसियार अमा बरंगीनी मी गुफ़्त ।”^४

काव्य-विषय

मीरका काव्य प्रमुखतः हार्दिक वेदना, विरह और रोदनका काव्य है पर इसके साथ ही उसमें ज़िन्दगीकी उच्चताका राग भी है। वेदना उन्हें

१. क्रिस्सों, कथाओं। २. सीमित। ३. विस्तृत। ४. 'आसी' कुल्लियातके भूमिका भागमें।

नष्ट नहीं करती, जीवन-मार्ग पर चलनेकी शक्ति देती है। उनके चित्रोंका क्षेत्र बहुत व्यापक है। प्रमुखतः उनके काव्यमें निम्नलिखित विषयोंका वर्णन है:—

१. सौन्दर्य एवं प्रेमकी विविध अवस्थाएँ तथा मानवी एवं ईश्वरीय प्रेमकी घटनाएँ।
२. कामनाएँ और उनका तत्त्वचिन्तन।
३. वचन-वैलक्षण्य।
४. कष्टों-दुःखोंकी तीव्र अनुभूतियाँ और उनकी अभिव्यक्ति।
५. प्रेमल ब्यंग।
६. उच्च कल्पनाशील उड़ान।
७. हास्य।
८. संसारकी अस्थिरता।

काव्यकी विशेषताओंका वर्णन पहिले ही किया जा चुका है। पर निम्नलिखित बातें उसमें विशेष रूपसे पाई जाती हैं:—

१. भाषाकी सरलता एवं स्वच्छता।
२. रोज़मर्रा और मुहाविरोंकी सफ़ाई।
३. शब्दोंमें संगीतात्मकता और गति।
४. व्यापक ज्ञान।
५. फ़ारसी उक्तियोंका सुन्दर प्रयोग।
६. सूक्ष्म रूपक उपमाएँ एवं उत्प्रेक्षाएँ।
७. स्पष्टता।
८. छन्दोंकी विविधता।



मीर-काव्य : कुछ विशेषताएँ



उर्दू काव्यमें एकसे एक शायर हुए हैं पर 'मीर' का स्थान आज तक किसीको प्राप्त नहीं हुआ । उर्दू साहित्यका कोई इतिहास, कोई संग्रह, कोई आलोचना ऐसी नहीं है जो 'मीर' की कविताके प्रति गहरी प्रशंसासे रिक्त हो । काव्यानुरागियोंने उन्हें "खुदाये सखुन" (काव्यके ईश्वर) कहा और छोटे-बड़े सबने उनके चरणोंमें श्रद्धाञ्जलि दी । उस्ताद 'जौक' ने लिखा :—

न हुआ, पर न हुआ 'मीर'का अन्दाज़ नसीब ,
'जौक' यारोंने बहुत जोर ग़ज़लमें मारा ।

और उर्दूके महाकवि 'ग़ालिब'ने कहा:—

अपना भी यह अक़्रीदा^१ है बक़ौले नासिख़,
आप बेबहरा^२ है जो मोतकिदे^३ मीर नहीं ।

अर्थात् नासिख़की तरह मेरा भी विश्वास है कि जो मीरकी प्रतिभाका क़ायल नहीं वह अज्ञान है, अशिक्षित है, मूर्ख है ।

आधुनिक उर्दू कवियोंने भी, इसी प्रकार, 'मीर' की प्रशंसा की है । देखिए:—

१. विश्वास । २. अज्ञान । ३. श्रद्धालु ।

शेर मेरे भी हैं 'पुर-दर्द' वलेकिन 'हसरत',
'मीर' का शेवए-गुप्तार कहाँसे लाऊँ ?

—हसरत मोहानी

मैं हूँ क्या चीज़ जो इस तर्ज़ पे जाऊँ 'अकबर',
नासिखो ज़ौक भी जब चलन सके 'मीर' के साथ ।

—अकबर

बड़ी मुश्किलसे तकलीदे जनाबे मीर होती है ।

—बृह नारबी

इनकी कविताकी इतनी धूम थी कि लोग उसे उपहारकी भाँति एक शहरसे दूसरे शहर, अपने यार-दोस्तों और सम्बन्धियोंको भेजते थे। मुहम्मद हुसेन 'आब्बाद' ने 'आबेहयात'में लिखा है:—“क़द्रदानीने इनके कलामको जवाहिर और मोतियोंकी निगाहों देखा और नामको फूलोंकी महक बनाकर उड़ाया। हिन्दुस्तानमें यह बात इन्हींको नसीब हुई है कि मुसाफ़िर ग़ज़लोंको तोहफ़ेके तौरपर शहर-से-शहरमें ले जाते थे।” न केवल उत्तर भारत बल्कि दक्षिण तक इनकी कविता पहुँच गयी थी।

स्वभावतः उन्हें अपनी जबान और अपनी कवितापर अभिमान था। ये उनके जीवनका अंग बन गयी थीं। अपनी जवानीमें वह अफ़वाहकी तरह

प्रसिद्धि प्रसिद्ध हो गये थे। जिधरसे निकलते लोग
उनका अनुसरण करते थे। वह खुद लिखते हैं:—

यह 'मीर' सितमकुशता' किसू वक़्त जवाँ था,
अन्दाज़े सख़ूनका सबबे-शोरो-फ़ुगाँ था ।

जादूकी पुड़ी परचये अबयात^१ था उसका ,
 मुँह तकते ग़ज़ल पढ़ते अजब सेहरे बयाँ^२ था ।
 जिस राहसे वह दिलजदह दिल्लीमें निकलता ,
 साथ उसके क्रयामतका सा हंगामा रवाँ^३ था ।

बड़े जोशसे पढ़ते थे; दिलमें दर्द था, उसके कारण तबीयतमें एक
 अजब रवानी थी:—

मीर दरिया है, सुने शेर ज़बानी उसकी ,
 अल्ला अल्ला रे तबीयतकी रवानी उसकी ।
 एक है अहदमें अपने वह परागन्दा मिज़ाज^४ ,
 अपनी आँखोंमें न आया कोई सानी^५ उसकी ।
 मसिये दिलके कई कहेके दिये लोगोंको ,
 शहर दिल्लीमें है सब पास निशानी उसकी ।

फिर दिल्ली ही क्यों दक्षिणमें भी इनके काव्यकी घूम थी:—

सरसब्ज मुल्के हिन्दमें ऐसा हुआ कि 'मीर' ,
 यह रेखता लिखा हुआ तेरा दकन गया ।

X

X

कुछ हिन्द ही में मीर नहीं लोग जेबचाक ,
 है मेरे रेखतोंका दिवाना दकन तमाम ।

इनकी ग़ज़लें महफ़िलोंमें सुनकर लोग झूमते थे और फ़कीरोंकी
 क़ुटियोंमें बे प्रतिध्वनित होती थीं:—

-
१. शेरोंका पर्चा । २. जिसके बयानमें जादू हो । ३. जारी ।
 ४. अस्तव्यस्तमना । ५. जोड़ ।

मतरिब^१से गजल मीरकी कल मैंने पढ़ाई ,
अल्ला रे असर सबके तई रफ्तगी^२ आई ।
जिस शेरपर समाअ था कल खानकाह^३ में ,
वह आज मैं सुना तो है मेरा कहा हुआ ।

इन बातोंके कारण इनका स्वाभिमान बढ़ता गया । संस्कृत कवियोंकी भाँति इनकी गर्वोक्तियाँ भी प्रसिद्ध हैं:—

रेखता रुतबेका पहुँचाया हुआ उसका है ,
मोतकिद कौन नहीं 'मीर'की उस्तादीका ।

×

×

जो देखो मेरे शेरे तरकी तरफ ,
तो मायल^४ न हो फिर गुहर^५की तरफ ।

×

×

पढ़ते फिरंगे गलियोंमें इन रेखतोंको लोग ,
मुहत्त रहेंगी याद ये बातें हमारियाँ ।
रेखता खूब ही कहता है जो इन्साफ़ करो ,
चाहिए अहले सखुन 'मीर'को उस्ताद करें ।
न रक्खो कान नज़्मे शायराने हाल^६ पर इतने
चलो ठुक्र मीरको सुनने कि मोतीसे पिरोता है ।

×

×

१. गायक । २. बेहोशी । ३. फ़कीरों, दरवेशोंका आश्रम । ४. आक-
षित । ५. मोती । ६. आजके कवियोंकी कविता न सुनो ।

दिल किस तरह न खींचें अशआर^१ रेखतेके,
बेहतर किया है मैंने इस ऐबको हुनरसे ।

रेखताके निर्माणमें इनका बड़ा हाथ है:—

रेखता काहे को था इस रुतबए आलों^२में मीर,
जो जमीं निकली उसे ता आस्मां मैं ले गया ।

काव्य-रचनाको वह मानवका श्रेष्ठ गुण मानते थे । कहते हैं:—

ऐ मीर शेर कहना क्या है कमाले इंसों,
यह भी खयाल-सा कुछ खातिरमें आ गया है ।

अपनी ज़बान पर इनको नाज़ था; उसे यह प्रमाण मानते थे:—

अव्वल तो मैं सनद हूँ फिर यह मेरी जुबाँ है ।

X

X

यह हमारी ज़ुबान है प्यारे ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपने ही समयमें यह इतने प्रसिद्ध हो गये थे कि समाजके हर वर्गके लोग इनकी कविता सुननेको उत्सुक रहते थे ।

क्या कारण है, इस लोकप्रियताका ? इनके समयमें भी बड़े-बड़े उर्दू शायर थे, खूब कहते थे; रूपक और अतिशयोक्तिसे भरी सूक्तियाँ

भाषाकी

जादूगरी

कहनेवालोंकी कमी न थी । पर मीरकी ज़बान किसीको नसीब न हुई । कोई ऐसी अद्भुत बात भी नहीं कहते थे फिर भी लोग सुनते थे और

सिर घुनते थे । लोग भी कहते थे और खुद मीर भी कहते हैं कि पता नहीं मीरके शेर क्यों दिलको खींचते हैं:—

क्या जानूँ दिलको खींचे हैं क्यों शेर मीरके ,
कुछ ऐसी तर्ज़ भी नहीं ऐहाम भी नहीं ।

सबसे पहिली बात जो इनके काव्यमें है, इनकी भाषाकी सादगी है । यों कहते हैं, मानों बात कर रहे हैं । और यही चीज़ है जो ग़ज़लको ग़ज़ल रखती है । फिर भाषा भावोंके सर्वथा अनुरूप है । जबान और उससे अदा होनेवाली दर्दभरी भावना यों मिल गयी हैं जैसे रंग और पानी एकमें मिला दिये गये हों कि फिर उनको अलग करना मुश्किल हो । इस तरह यह सीधे-सादे शब्दोंमें गहरी, दिलको हिला देनेवाली, ग़ज़लकी बातें कर जाते हैं:—

यह जो चश्मे पुरआब हैं दोनों ।
एक ख़ाना ख़राब हैं दोनों ।

×

×

मैं जो बोला तो बोले यह आवाज़
उसी ख़ानाख़राब की-सी है ।

दोनों शेर दिलसे टकराते हैं । सुननेवालेके मुँहसे एक आह निकल जाती है । मन करुणासे आर्द्र हो जाता है । पर-विश्लेषण करनेपर इनमें कोई बिचित्रता नहीं मालूम पड़ती । न इनमें विषयकी नवीनता है, न कोई अद्भुत कल्पना है, न कोई विशिष्ट जीवन-दर्शन है; फिर भी सब मिलाकर इनका एक अद्भुत प्रभाव पड़ता है । दिल तिलमिला उठते हैं ।

इनकी जबान इनकी अपनी है । इन्होंने उसमें भारतीय वातावरणको ऐसा मिला दिया है कि शब्दोंका प्रभाव दुगुना हो गया है । इसीलिए वह सलाह भी देते हैं:—

हुस्न तो है ही करो लुत्फ़े ज़बाँ भी पैदा ,
मीरको . देखो कि सब लोग भला कहते हैं ।

भाषाकी सादगी तो गज़बकी है, इसलिए उसमें एक कुमारीत्वका सौन्दर्य और पवित्र आकर्षण है:—

शामसे कुछ बुझा-सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग मुक़लिस^१का ।

×

×

करो फिर मुझ दिवाने की ।
धूम है फिर बहार^२ आनेकी ।

×

×

कहते हो इत्तिहाद^३ है हमको ?
हाँ, कहो एतमाद^४ है हमको ।
आह किस तरह रोइए कम कम,
शौक हदसे ज़ियाद है हमको ।

×

×

अबके जुनूँ^५ में फ़ासला शायद न कुछ रहे,
दामनके चाक और गरेबों^६ के चाकमें ।

×

×

दिल किस क्रदर शिकस्ता^७ हुआ था कि रात मीर,
आई जो बात लर्ब पे सो फ़रियाद हो गयी ।

×

×

कहते तो हो यूँ कहते यूँ कहते जो वह आता,
यह कहनेकी बातें हैं ? कुछ भी न कहा जाता ।

१. गरीब, अकिञ्चन । २. वसन्त । ३. मेलजोल, मैत्री । ४. विश्वास ।
५. उन्माद । ६. गले । ७. टूटा हुआ, भग्न, खंडित । ८. ओठ ।

इस प्रकार इनकी सादी^१ अलंकार-बिहीन भाषामें वही आकर्षण है जो किशोरिकामें होती है—उस किशोरीमें जिसमें बचपनकी सादगी है और उस सादगीमें रह-रहकर झाँकती एक शोखी, जो चुप है पर न जाने कितनी अभिव्यक्तियाँ उसकी चुप्पीपर निछावर हैं ।

×

×

×

इनके काव्यकी दूसरी विशेषता इनकी दर्दमन्दी है । मतलब यह कि जो कुछ इन्होंने लिखा है वह कल्पनाकी वस्तु नहीं है, इनका बार-बार का भुगता हुआ है । प्रेम लिखा है तो प्रेम किया भी है और प्रेम किया है तो इस सीमा तक किया है कि उसपर अपनेको लुटा दिया है, एक समर्पणकी गहराई जो उर्दू शायरोंमें मुश्किलसे मिलती है । वह कविता लिखते बादमें हैं, अनुभव पहिले करते हैं । उनका सम्पूर्ण जीवन, जीवनव्यापी वेदना ही उनके काव्यकी भूमिका है । इसीलिए उन्न लोगोंको जो बिना दर्दका स्वाद चखे काव्य-रचनाकी ओर प्रवृत्त होते हैं, वह महत्त्व नहीं देते । 'बेसोजो दिल किन्होंने कहा रखता तो क्या ?' बिना दिल जलाये रखता लिखना बेकार है । उन्होंने कहा भी है—

जब ज़मज़मा^२ करती है सदा^३ चुभती है दिलमें,
बुलबुलसे कोई सीख ले अन्दाज़ सख़नका ।

जब बुलबुल बिध जाती है, वह तड़पकर गा उठती है तभी उसकी आवाज़ दिलमें चुभती है । यह कविताका ढंग उसीसे सीखना चाहिए । कविता लिखनेके पूर्व 'मीर'ने दुःखोंसे भरा लम्बा रास्ता तय किया है; उन्न ही बिता दी है । कहते हैं :—

किस-किस तरहसे मीरने काँटा है उम्रको,
 अब आखिर-आखिर आनके यह रेखता कहा ।
 दफ़्तर लिखे हैं मीरने दिलके अल्म^१के यह,
 यां अपने तौरो तज़^२में वह फर्द^३ हो गया ।

X

X

मुझको शायर न कहो मीर कि साहब मैंने,
 दर्दों-ग़म कितने किये जमा सो दीवान किया ।

मतलब यह कि सच्चे काव्यके लिए आत्मानुभूति जरूरी शर्त है । मीरका सारा काव्य ही एक दर्दकी तस्वीर बन गया है क्योंकि यह वेदना-रस उनके जीवनकी पोर-पोरमें भिदा हुआ है । यही रस जब काव्यमें उतरता है तो मानो दिलकी चीख ही उसमें उतर आती है :—

हर वरक़ हर सफ़हामें इक शेर शोर अंगेज़ है ।

यह दर्द उनके काव्यमें सर्वत्र है पर उनकी ग़ज़लोंमें तो जैसे वही वह है । इसलिए इस मैदानमें आज तक कोई इनकी बराबरी न कर सका । उर्दूमें तो इतना दर्द और इतना सोज़ और कहीं देखनेको नहीं मिलता । इस वेदनाने उर्दू ग़ज़लको अनुभूतिकी वह गहराई दी जो उसे दोबारा नसीब नहीं हुई । काव्य क्या है हृदय-व्यथाकी एक ऐसी अग्निशाला है जिसकी आग कभी बुझने वाली नहीं । यही दर्द है जो सुननेवालोंको रुला देता है :—‘दर्दे सख़ुनने मेरे सभीको रुला दिया ।’ इनका प्रत्येक शेर एक आँसू है; हर मिसरा एक रक्त-बिन्दु है; हर शब्द एक आह है ।

अपने जीवनमें मीर अपनी ही वेदनाके साधक नहीं हैं; उन्होंने भयंकर स्वप्नकी भाँति बदलते हुए ज़मानेकी बरबादी देखी है। राजाको रंक और रंकको राजा होते देखा है; शराफ़त-को पनाह माँगते और क़मीनापन और गुण्डा-गीरीको सिंहासन पर बैठते देखा है; उन्होंने भूखसे तड़पते बच्चे देखे हैं; प्याससे दम तोड़ती कलियोंको देखा है। डरे, सहमे बच्चे, जिनकी कच्चे दूध-सी आँखोंमें मौत और भयकी छाया है, उन्होंने देखे हैं; इंसानको दोस्त बनकर छुरा भोंकते उन्होंने देखा है; तड़पती, रोती, प्यासी, त्रस्त, चीखती दिल्लीको उन्होंने देखा है; इस तरह सम्पूर्ण युगको व्यथाके भयानक होलिका-दाहमें जलते देखकर उसकी व्यथानुभूतिको भी इन्होंने अपने दामनमें बाँध लिया है। इस प्रकार युग-वेदना और आत्म-वेदना दोनों मिलकर एक हो गयी हैं। जग-बीती और आप-बीतीके तूफ़ानमें इनका दिल उमड़कर शेरमें उँडेल दिया गया है। देखिए :—

दिल न बाहम मिले तो हिजरां^१ है ,
हम वे रहते हैं गो कि पास ही पास ।
मीर वहशी^२ का दिल है बेताक़त ,
चलता-फिरता है पर उदास-उदास ।
नाउमेदी भी हद्द रखती है ,
जीता कब तक रहेगा कोई निरास ।

×

×

रहे जेरे दीवार हम मीर बरसों
न पूछा कभी खाक उफ़तादगों^१ को

X

X

और भी देखिए :—

दिल न पहुँचा गोशए^३ दामों^३ तलक ,
क्रतरए-खूँ था मजः^५ पर जम रहा ।

X

X

हिजराने-यार एक मुसीबत है हमनशी^६ ,
मरनेके हालसे कोई कब तक जिया करे ।

X

X

कोई नहीं जहाँमें जो अन्दोहगी^६ नहीं ,
इस ग़मकदे^६ में आह दिले खुश कहीं नहीं ।

X

X

आग थे इब्तिदार^७ इरक्रमें हम,
अब जो खाक हैं इन्तिहा^८ है यह ।

X

X

इस गुलशने-दुनियामें शिगुफ़ता^{१०} न हुआ मैं,
हूँ गुंचए अफ़सुर्दा^{११} कि मरदूदे सबा^{१२} हूँ ।

१. दीवारके नीचे, दीवारकी छायामें । २. विपदामें पड़े हुए ।
३. दामनके, आँचलके किनारे । ४. दुगंचल, पलक । ५. साथी । ६. दुःखी ।
७. दुःखागार । ८. आरम्भ । ९. अन्त । १०. प्रफुल्लित । ११. मुरझाई
कली । १२. प्रभातीका मारा हुआ ।

अपने एक फ़ारसी शेरमें भी कहते हैं:—

हैफ़ दर शोर: ज़ारे आलम मीर
सब्ज नागुश्ता सोस्त दानए मा ।

प्रेम और दुनियाके दुःखोंने इनके जीवनमें आनन्द और उत्फुल्लता के झोंके कभी आने न दिये । पर इस मिटे हुए दिलमें भी भावनाका सागर लहराता है । मिटकर भी वह मिटते नहीं हैं; बल्कि इस विनाशमें एक नवजीवनका प्रकाश है । उन्होंने पाकर खोया है पर खोकर पाया भी है । एक नशा है जो उनकी जिन्दगी पर छा गया है:—

उम्र भर हम रहे शराबी-से ,
दिले पुरखूँकी एक गुलाबीसे ।

मर-मर कर भी वह जिये हैं:—

क्या करूँ शरह^१ खिस्ताजानी^२ की
मैंने मर मरके जिन्दगानी की ।

ऐसा नहीं कि वह हँसना चाहते नहीं; वह भी हँसने, दुनियाके मजोंमें शामिल होनेकी इच्छा रखते हैं पर दिलकी बेबसीको क्या करें; आँखोंको क्या करें जिनपर वश नहीं रह गया है:—

हँसता ही मैं फिरूँ जो मेरा कुछ हो इस्तियार^३
पर क्या करूँ मैं दीदए-बेइस्तियार^४ को

इस तरह दुःखोंमें डूबी इनकी जिन्दगीने इनके काव्यको करुणासे ओत-प्रोत कर दिया है । पर इनके काव्यका सबसे बड़ा सौन्दर्य प्रेमकी

१. टीका, भावों । २. हृदय-भग्नता । ३. वश । ४. बेबस आँखें ।

वह चित्रकारी है जो उसमें सर्वत्र मिलती है। प्रेमकी कुञ्जगलियोंकी एक-एक इंच भूमि इनकी जानी-पहचानी है। प्रेमकी कोई अवस्था ऐसी नहीं, जिसके सुन्दर चित्र इनके यहाँ न मिलते हों। प्रेमकी अगणित भंगिमाएँ यहाँ मचलती हैं; नाटकके न जाने कितने दृश्य यहाँ उभरते हैं; लालसाएँ उठती हैं, दिलकी तिलमिलाहटें नाचती हैं, समर्पणका शीश झुकता है। प्रेमकी सूक्ष्म भावनाओंकी ऐसी मुसब्बिरी, ऐसी चित्रकारी उर्दू काव्यमें दुर्लभ है। उसमें अनुभूतिकी कूचियोंसे भरा रंग है, केवल कल्पनाकी परछाइयाँ नहीं।

प्रेमके आरम्भमें प्रेमीकी अजीब अवस्था होती है। देखना चाहता है पर सामने आते ही आँखें झुक जाती हैं; लज्जासे बोल नहीं फूटते। नाम सुननेपर एक बेचैनी-सी होती है। बोलता किसीसे है, देखता किसीकी ओर है। दिलमें आता है मिलनेपर यह कहूँगा वह कहूँगा पर कहा कुछ नहीं जाता। इन भावोंके चित्र मीरमें भरे पड़े हैं। देखिए :—

लेते ही नाम उसका सोतेसे चौंक उठे,
है तैर मीर साहब कुछ तुमने ख्वाब देखा।

(पूर्वाश्रुतिराग)

और यह हालत देखिए:—

कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह,
कल मीर खड़ा था याँ सच है कि दिवाना था।

(विध्वंस)

प्रेमीकी लज्जाका वर्णन करते हैं:—

मीरसे पूछा जो मैं आशिक हो तुम,
होके कुछ चुपके-से शरमाये बहुत।

(लज्जानुराग)

समझे थे हम तौ मीरको आशिक़ उसी घड़ी ,
जब सुनके तेरा नाम वह बेताब-सा हुआ ।

प्रेम चुपके-चुपके बढ़ता है; उसकी जड़ें हृदयकी गहराईमें प्रविष्ट होती हैं । आग अन्दर-अन्दर जलती है; विरह कलेजा मथता है; बीमारकी-
दिलका सी हालत हो जाती है । बदन पीला, शरीर
यह दर्द ढीला, चेहरेपर दीवानगीका आलम, बेचैनियोंमें
गिरफ़्तार, अन्दर दिलको जैसे कोई मल रहा
है । प्रेमके ऐसे अनेक चित्र मीर देते हैं:—

हम तौरे इश्क़से तो वाकिफ़ नहीं हैं लेकिन ,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है ।

×

×

छाती जला करे है सोज़े-दरूँ बलासे ,
एक आग-सी रहे है क्या जानिए कि क्या है ?

कहते हैं, मालूम नहीं प्रेम क्या होता है, कैसा होता है पर इतना जानता हूँ कि सीनेके अन्दर जैसे कोई दिलको मला करता है । फिर आगे कहते हैं कि भीतरकी जलनसे छाती जलती रहती है । एक आग-सी लगी मालूम होती है पर यह नहीं जानता कि वह क्या है ? अज्ञात पूर्वानुरागका कैसा सुन्दर एवं मनोवैज्ञानिक निरूपण है ।

धीरे-धीरे प्रेमका रंग गहरा होता है । अब अन्दाज़ होने लगा है कि कहीं यह प्रेम तो नहीं है:—

गर इश्क़ नहीं है तो यह क्या है भला मुझको ,
जी खुद बख़ुद ऐ हमदम काहेको खपा जाता ?

×

×

किस तरहसे मानिए यारो कि यह आशिक नहीं ,
रंग उड़ा जाता है ठुक् चेहरा तो देखो मीरका ।

ताड़नेवाले ताड़ने लगे हैं । कहनेवाले कहने लगे हैं कि भई, क्या बात है ? यह तुम्हारी हालत क्या है ? तुम्हें हुआ क्या है ? यह मुरझाया-मुरझाया चेहरा, यह झुकी तस्वीर, यह बदरंगी, यह दुर्बल शरीर ! क्या हो गया है:—

क्रामत खमीदा^१ रंग शिकस्ता^२ बदन नज़ार^३ ,
तेरा तो मीर ग़ममें अजब हाल हो गया ।

× ×
कुछ ज़र्द-ज़र्द^४ चेहरा कुछ लागरी^५ बदनमें ,
क्या इश्क़में हुआ है ऐ मीर ! हाल तेरा ?

लोग कहते हैं, आजकल सबसे जुदा रहते हो, एकान्तमें फिरते हो, जान पड़ता है, तुम्हारा दिल कहीं अटक गया है । और मीर हैं कि क्या यह क्या बात है जवाब दें । लोग आपसमें भी बातें करते हैं कि किसीकी जुदाईका ग़म इतना है कि मुंह पीला पड़ गया है । यह क्या जवाब दें । आँखोंमें आँसू भर लाते हैं । लोग कहते हैं, बार-बार आँखोंमें आँसू न भरो वरना तुम्हारा प्रेमका भेद खुल जायगा । इन्हीं भावोंको देखिए :—

फिरते हो मीर साहब सबसे जुदे-जुदे तुम ,
शायद कहीं तुम्हारा दिल इन दिनों लगा है ।

×

×

१. झुका आकार, झुकी देह । २. बिखरा रंग । ३. क्षीण । ४. पीला । ५. दुर्बलता, क्षीणता ।

किससे जुदा हुए हैं कि ऐसे हैं दर्दमन्द ,
मुँह मीरजीका आज निहायत ही जर्द है ।

×

×

मीरजी ! राजेइश्क^१ होगा फ़ाश^२
चश्म हर लहज़ा^३ मत पुरआब^४ करो ।

×

×

आशिक है या मरीज है पूछो तो मीरसे ,
पाता हूँ जर्द रोज़-बरोज इस जवाँको मैं ।

सवालपर सवाल होते हैं, चर्चे होते हैं, और मीर है कि मुँह बन्द है ।
जवाब देते हैं ! क्या जवाब दें पर कबतक चुप रहें, कबतक मुँह
बन्द रख सकते हैं; आखिर दो शब्द कहते हैं:—

अब तो दिलको न ताब है न करार ,
यादे अय्याम^५ जब तहम्मुल^६ था ।

×

×

कुछ नहीं सूझता हमें उस बिन ,
शौक़ने हमको बेहवास किया ।

शुरू-शुरूमें एक प्रकारका धीरज था, सन्तोष था, अब तो दिलमें
ज़रा भी चैन नहीं है । हाय ! हमें उसके बिना कुछ नहीं सूझ पड़ता;
उत्कण्ठा इतनी बढ़ गयी है कि मेरा होश-हवास गुम है । जानता हूँ कि
रोनेसे डूब जाऊँगा, घुल रहा हूँ पर मेरे दोस्त ! क्या कहूँ, इतना कम-

१. प्रेम-रहस्य । २. प्रकट । ३. प्रतिक्षण । ४. तर, अध्रुपूर्ण ।
५. यादके दिनों । ६. सहिष्णुता, धीरज ।

जोर हो गया हूँ कि धीरज नहीं रह गया हूँ; याद आते ही आँसू निकल पड़ते हैं। बोलो क्या करूँ :—

बेताकती सकूँ नहीं रखती है हमनशीं,
रोनेने हर घड़ीके मुझे तो डुबो दिया।

और कभी-कभी प्रियतमके सामने भी कुछ टूटे-फूटे बोल लेते हैं :—

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे,
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँ से जिगर आवे।
हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया,
तो दिल सितमजदहको मैंने थाम-थाम लिया।

तुम्हारा नाम लेते ही आँखें भर आती हैं; तब ज़िन्दगी बितानेको मैं कहाँसे कलेजा लाऊँ ? इतना ही क्या कम है कि जब कोई हमारे आगे तुम्हारा नाम लेता है तो मैं अपने इस दुखिया दिलको थाम-थाम लेता हूँ। (यहाँ थाम-थाम शब्दने भाषामें एक दर्द और संजी-दगी पैदा कर दी है, जो पकड़ लेना कहनेसे नहीं आ सकती थी।)।

पर उधर उनकी शरारत देखिए। यहाँ बिरहमें यह हाल है, चेहरा पीला पड़ गया है और वह हँसके कहते हैं कि अब तो तुम्हारा रंग कुछ निखर चला है :—

यह छेड़ देख, हँसके रुखेजर्द पै मेरे,
कहते हैं, मीर ! रंग तो अब कुछ निखर चला।

और वह त्योरियाँ चढ़ाते जाते हैं। इस पर मीरने क्या खूब कहा है :—

हम खस्तादिल हैं तुझसे भी नाज़ुक मिजाजतर,
त्योरी चढ़ाई तूने कि यौं जी निकल गया।

लोग समझाते हैं, व्यर्थ घुल रहे हो, फ़िजूल जान दे रहे हो । मीर भी दिलको समझाते हैं पर इस्कका मनोवैज्ञानिक पक्ष यह है कि वह दबानेसे और बढ़ता है, समझानेसे और उभरता है । तुम समझाते हो, उसकी बेचैनी बढ़ती है; तुम कहते हो और कलेजा मुँहको आता है । सहानुभूति प्रदर्शनमें दर्द दर्द पर चोट करता है; और रोना आता है, जितना समझाते हैं, उतना ही मन टूट-कर घुल-घुल जाता है । दिल पत्थर करना चाहते हैं पर पानी हुआ जाता है; बाँध मजबूत करना चाहते हैं पर टूटा जाता है :—

कहनेसे मीर और भी होता है मुज़तरब^१
समझाऊँ कबतक इस दिले ख़ाना ख़राबको ।

और मीर भी कहते हैं कि प्रेमकी इस पीड़ामें, इस बेचैनीमें मैं क्या कहूँ, बात करता हूँ कि कलेजा मुँह तक आता है ।

और हज़रत बार-बार सोचते हैं कि अब उसके यहाँ न जाऊँगा पर बेचैनी उभड़ती है और बार-बार उसके दरवाज़े पर जाते हैं । बार-बार उधर ही पाँव उठते हैं :—

बार-बार उसके दर पे जाता हूँ,
हालत अब इज़तिराबकी-सी है ।
चला न उठके वहीं चुपके-चुपके तू फिर मीर,
अभी तो उसकी गलीसे पुकार लाया हूँ ।

×

×

प्रायः प्रेमी सोचता है कि मिलने पर यह कहेगा वह कहेगा । उनके सामने दिल निकालकर रख दूँगा । उनकी मिलनमें वाणी- शिकायत कहेगा कि मेरे साथ क्यों इतनी का मौन निष्ठुरता करते हो, यह तुम्हारी क्या आदत है :—मतलब हजार बातें कहेगा पर सामने जाते ही सब बातें भूल जाती है, कुछ बोला नहीं जाता । इसी भावको 'मीर' कहते हैं :—

जीमें था उससे मिलिए तो क्या-क्या न कहिए मीर,
पर जब मिले तो रह गये नाचार देखकर ।

X

X

कभी-कभी ऐसा होता है कि लाख दिलको मारते हैं, भावोंको बाँधते हैं, ओठ दबाते हैं पर प्यार प्रकट हो ही जाता है । न चाहते हुए भी एकाध शब्द प्यारके निकल ही जाते हैं । इसीको कहा है :—

हर चंद मैंने शौकको पेनहाँ^१ किया बले^२,
एक आध हर्फ़ प्यारका मुँहसे निकल गया ।

पर लाख रुदन हो, व्यथा हो, जब तक कहनेके ढंगमें एक शोखी, एक अदा, एक विशेष भंगिमा न हो तब तक कविकी कला निखरती नहीं ।

बयानकी शोखी बातें दुनियामें वही होती हैं, कोई शायर नई बात नहीं कहता, पर नये ढंगसे कहता है; और रूपके चित्र निराली तर्जें बयाँ होती हैं । मीरकी तारीफ़ यह है कि उनमें गहराई भी है और पकड़ भी है, अन्तःसौन्दर्य भी है और कहनेका निरालापन भी है । अन्तः और बाह्य सौन्दर्य-राशिका सामञ्जस्य है । ठंडी आह निकलना एक मुहाविरा है, पर ठण्ठी आहके मञ्जमूनमें मीरने बातपर बात पैदा की है :—

आशिक हैं हम 'तो मीरके भी ज़बते इश्क़के,
दिल जल गया था और नफ़स^१ लब पे सर्द था ।

मीरजीके प्रेमपर नियंत्रणके हम प्रशंसक हैं । दिल तो जल गया था पर ओठपर ठण्डी साँस निकल रही थी ।

ओठोंके सौन्दर्यपर चूमनेकी इच्छा होती है पर बिना इच्छा प्रकट किये इच्छा प्रकट कर दो है; बिना कहे सवाल करके उसे कह दिया है, किस शोखीके साथ—

लाले खमोश^२ अपने देखो हो आरसीमें
फिर पूछते हो हँसकर मुझ बेनवा^३की खाहिश ?

अपने खामोश लालोंको (लालिमाके कारण लालसे ओठकी उपमा दी जाती है) आईनेमें देख रहे हो, फिर भी मुझ गरीबसे मेरी इच्छा पूछते हो ?

आड़ लेकर, सवाल करके अपनी मुराद कहनेका यह अनोखा ढंग है ।

×

×

×

मीरका सौन्दर्य-वर्णन

आँखें देखती हैं और दिल चुरा लिया जाता है; या दिल उधर दौड़ता है और आँखोंको रोना और दुःख उठाना पड़ता है । दोनोंमें क्या सही है !

ये आँखें या
वह दिल ?

दिल आँखको दोष देता है; आँखें दिलको दोषी बताती हैं और इन दोनोंके झगड़ेमें प्रेमी मारा जाता है और इस भावको मीरने क्या

खूब अदा किया है:—

कहता है दिल कि आँखने मुझको किया खराब,
 कहती है आँख यह कि मुझे दिलने खो दिया ।
 लगता नहीं पता कि सही कौन-सी है बात,
 दोनोंने मिलके 'मीर' हमें तो डुबो दिया ।

'मीर' ने हर रंगमें दुनिया देखी है; प्रियतमकी हर अदासे वह परिचित है । अन्तर्मनके चित्र तो उनमें खूब हैं ही पर बाह्य सौन्दर्यकी सुबह करते हैं एक-एक अदा भी उन्हें मालूम है । उनकी महती रात करते हैं कल्पकतामें, उनके तख्त्युलमें इतना बिस्तार है कि कोई चीज उनकी पैनी आँखोंसे बच नहीं पाई । किस शोखीके साथ माशूकके मुख और बालोंका वर्णन किया है । मिलनकी रात्रि है । प्रेमी कहता है हमारे भाग जगे हैं । एक पहर रात है तब वह आये हैं । पर मुँहको खोल देते हैं, तो सुबह हो जाती है । फिर मुँहको बालोंमें छिपा कर पूछते हैं, भला अब कितनी रात है ? क्या शरारतभरा सौन्दर्य-वर्णन है !

थी सुबह जो मुँहको खोल देता ,
 हरचन्द कि तब थी एक पहर रात ।
 फिर जुल्फोंमें मुँह छिपाके बोला ,
 अब होवेगी मीर किस क्रदर रात ?

शरीर-यष्टिका सौन्दर्य :

मीरने सौन्दर्यके हर क्षेत्रको लिया है । शरीर-यष्टिकी लचकको देखके कहते हैं:—

इन गुलरुखोंकी क्रामत लहके है यूँ हवामें ,
 जिस रंगसे लचकती फूलोंकी डालियाँ हैं ।

शौक्रे क्लामतमें तेरे ऐ नौनिहाल ,
गुलकी शार्खें लेती हैं अँगड़ाइयाँ !

आँख और ओठ :

अधखुली, अधमुँदी आँखोंका सौन्दर्य और मस्ती कल्पनाकी नहीं, देखनेकी वस्तु है। धीरे-धीरे बन्द आँखोंका खुलना ! जैसे कलीने यह धीरे-धीरे खिलना उसीसे सीखा है। फिर उनमें शराबकी मस्ती भरी है:—

मीर इन नीमबाज़^१ आँखोंमें ,
सारी मस्ती शराब की-सी है।
खिलना कम-कम कलीने सीखा है,
उसकी आँखोंकी नीमखाबी से।

और ओठोंको क्या कहें ? कोई इन्हें याकूत कहता है कोई लाल और कोई गुलाबकी पंखड़ी कहता है :—

है तसन्नो^२ कि लाल हैं वे लब ,
यानी एक बात-सी बनाई है ।

दूसरा मिसरा क्या खूब है। बात बनाना मुहाविरेको क्या निभाया है और मजा यह कि बात बनाना भी ओठोंका ही काम है !

नाज़की^३ उसके लबकी क्या कहिए ,
पंखड़ी एक गुलाब की-सी है ।

×

×

याकूत कोई उनको कहे है कोई गुलबर्ग^४
दुक होंठ हिला तू भी कि एक बात ठहर जाय ।

१. अधखुली । २. बनावट (बनावटी बात है) । ३. पतलापन, क्षीणता । ४. गुलाबकी पंखड़ी ।

यहाँ भी 'एक बात ठहर जानेका' खूब निर्वाह किया है ।

मुखकी बनावट :

क्या खूबी उसके मुँहकी ऐ गुंचः^१ नक्रल करिए ,

तू तो न बोल ज़ालिम बू आती है देहाँ^२ से ।

“ऐ कली, तू उसके मुख-सौन्दर्यकी नक्रल क्यों करती है । तू चुप रह, न बोल, तेरे मुँहसे बू आती है ।”

कलीकी सुगन्धको किस मुहाबिरेमें ढालकर उसे नीचा दिखाया है !

कपोल :

कपोल सूर्यकी तरह चमक रहे हैं, तब इन्हें धूँधटमें, पर्देमें, नक्राबमें छिपानेसे क्या लाभ है; वे छिपते तो हैं नहीं । जब हम उन्हें देखते हैं तो मन करता है कि आँखोंको उनमें गड़ा दें:—

है तकल्लुफ़ नक्राब, वे रुख़सार^३,

क्या छिपें आफ़ताब^४ हैं दोनों ।

×

×

रुख़सार उसके हाथ रे, जब देखते हैं हम ,

आता है जीमें आँखोंको इनमें गिड़ोइए ।

बाल :

लग निकली है किसूकी मगर बिखरी जुल्फ़से ,

आनेमें बादे सुबह^५को याँ एक दिमाग़ है ।

(सुरभित) प्रभातीमें एक अहंकार है, जान पड़ता है वह किसीकी बिखरी जुल्फ़ोंसे लगकर आई है ।

१. कली, मुकुल । २. मुँह, देहन । ३. कपोल, गाल । ४. सूर्य ।
५. प्रभातकी वायु ।

तेरे बालोंके वस्त्र^१में मेरे,
शेर सब पेचदार होते हैं।

तेरे बाल इतने पेचदार हैं कि उनकी प्रशंसामें मैं जो शेर कहता हूँ
वह (शेर ही) पेचदार हो जाता है।

आवेगी एक बला तेरे सर सुन कि ऐ सब^२,
जुल्फ़े-सियह^३का उसके अगर तार जायगा।

ऐ प्रभाती वायु ! ज़रा सावधान होकर बहा कर बर्ना यदि किसी
दिन उसके काले बालोंसे पाला पड़ जायगा तो तेरे सिर एक बला
आ जायगी।

मीर हर-एक मौजू^४में है जुल्फ़ ही का-सा दिमाग़ ,
जबसे वह दरियापे आके बाल अपने धो गया।

मीर साहब कहते हैं कि जबसे मेरा प्रियतम नदीके किनारे आकर
अपने बाल धो गया तबसे प्रत्येक तरंगमें जुल्फ़का-सा ही दिमाग़ देखनेमें
आता है—तबसे प्रत्येक तरंगमें जुल्फ़की ही भाँति उतार-चढ़ाव देख रहा
हूँ। कंघी की हड्डि जुल्फ़ोंमें तरंगकी भाँति ही उतार-चढ़ाव होता है, इसी
बातको लेकर यह शेर कहा है।

कानके मोती :

लेते करबट हिल गये जो कानके मोती तेरे,
शर्मसे सरवर^५ गरेबाँ सुबहके तारे हुए।

करबट लेनेसे, अँगड़ाई लेनेसे जो तेरे कानके मोती हिले तो शर्मसे
सुबहके तारोंने गरेबाँमें मुँह छिपा लिया।

१. गुण, प्रशंसा। २. प्रभाती। ३. काली अलकें। ४. तरंग, लहर।
५. अधिकारी।

सुबहके तारोंका टिमटिमाना और मोतीका हिलना दोनोंमें कैसा साम्य है ।

चाल :

हर नन्नशे पा^१ है शोख तेरा रश्के यासमन^२,
कम गोशए चमन^३से तेरा रहगुजर नहीं ।

ऐ शोख ! तेरा प्रत्येक चरण-चिह्न नवमल्लिकाको लज्जित करने वाला है । तेरा चलना पुष्पोद्यान-खण्डसे कुछ कम नहीं है । जहाँ-जहाँ तू चलता है चमन खिलते जाते हैं ।

यों हम मीरमें सौन्दर्यके एकसे एक चित्र पाते हैं । उन्होंने एक श्रेष्ठ कुलकी कुमारीके प्रति आत्ससमर्पण किया था । उनके प्रेममें कहीं अश्लीलता, निकृष्टता नहीं है, हाँ जलन है, गर्मी है । फ़ारसीने ठीक ही लिखा

बिखरे हुए
मोती

है कि “उन्होंने अपनी तस्वीरोंमें जिन क़दरों^४ को उभारा है वह वही हैं जो शरीफ़, मोतवस्सित^५ घरानोंमें पाई जाती हैं । उनमें तमन्नाका इज्ज-

हार^६, सरशार तजुबों^७ का निखार, चाहने और चाहे जानेकी आरजू है । एक दिलरुबा^८ असलियत^९ है, एक कार आगही है जो तजुरबातकी वादी^{१०} में सीनेके बल चलनेसे आती है । इनकी मोहब्बत असली और हकीकती है... इसमें जो सच्चाई; पाकीज़गी^{११} और ज़ब्त^{१२} है वह आम-शायरोंकी दस्तरस^{१३} से बाहर है ।*

संसारमें एकसे एक सुन्दर मूर्तियाँ हैं पर हृदय न जाने क्यों एक विशेषकी ओर ही आकर्षित होता है । मीर भी कहते हैं :—

१. चरण-चिह्न । २. चमेलीकी ईर्ष्याके योग्य । ३. पुष्पोद्यानका एक कोना, खण्ड । ४. मूल्यों । ५. मध्यम । ६. अभिव्यक्ति । ७. अनुभव । ८. चित्ताकर्षक । ९. वास्तविकता, सत्य । १०. घाटी । ११. पवित्रता । १२. नियन्त्रण । १३. पहुँच । * मीर तक्की मीर पृष्ठ ३३८—३३९ ।

फूले गुल शम्सो-क्रमर^१ सारे ही थे,
पर हमें इनमें तुम्हीं भाये बहुत ।

वहाँ गुलाबके फूल, सूरज और चाँद सभी थे पर उनमें तुम्हीं मुझे
बहुत भाये ।

आरजूओंकी एक दुनिया उनके सीनेमें बसी हुई है । देखिए :—

मौसिमे अब्र^२ हो, सुबू^३ भी हो,
गुल हो, गुलशन^४ हो और तू भी हो ।

यहाँ 'तू भी हो' ने एक विशिष्टता उत्पन्न कर दी है ।

गर्चे कब देखते हो, पर देखो,
आरजू है कि तुम इधर देखो ।

कितनी विवशता भरी विनती है । तुम मेरी तरफ़ देखते ही कब हो,
पर चाहता हूँ कि देखो । मेरी वाञ्छा है कि तुम इधर देखते !

वह और शायरोंकी तरह प्रियतमसे कोई अनुचित कामना कभी नहीं
प्रकट करते; प्रेमकी ऊँचाईका सदा ध्यान रखते हैं । यदि प्रियतमकी
निष्ठुरताकी चर्चा भी करते हैं तो उसका भार अपने ऊपर उठा लेते हैं ।
यह है उनका समर्पण :—

उसके ईफ़्राए-अहद^५ तक न जिये,
उम्रने हमसे बेवफ़ाई की ।

मर गये पर उसने वादा पूरा न किया । मीर साहब इसी बातको
अपनी तर्ज पर कहते हैं कि उम्र ही बेवफ़ा निकली कि उसके प्रण-पालन
तक हम न जी सके ।

१. सूर्य-चाँद । २. बादलका मौसिम, वर्षाके दिन । ३. मधु-घट ।
४. पुष्पोद्यान । ५. प्रण-पूर्ति ।

हाले-बद गुफ्तनी नहीं अपना,
तुमने पूछा तो मेहबानी की ।

अपना बुरा हाल हम कहना नहीं चाहते; तुमने पूछा यह तुम्हारी कृपा है ।

प्रतीक्षामें आँखें लगी हैं, इस भावको मीरने गहरी अनुभूतियोंके रंगमें चित्रित किया है :—

बाली^१ पै मेरी आकर टुक देख शौक़े दीदार ,
सारे बदनका जी अब आँखोंमें आ रहा है ।

जरा छतपर आकर मेरी दर्शनोत्कण्ठा तो देखो; सम्पूर्ण शरीरसे प्राण निकलकर आँखोंमें आ बसा है । कैसी सर्वग्राही दर्शनोत्कण्ठा है ।

हर समय मिलनकी इत्कारीसे त्रस्त होकर कहते हैं :—

दिन नहीं, रात नहीं, सुबह नहीं, शाम नहीं ,
वक्त^२ मिलनेका मगर दाखिले-अय्याम^३ नहीं ।

दिनको—नहीं, रातको—नहीं, सुबहको—नहीं, शामको—नहीं,
शायद मिलनेका समय दिवसकी अवधिमें है ही नहीं ।

इधर यह बात है, उधर आँखें छिपाकर वह कभी-कभी देख भी लेते

आँखें क्यों हैं और जब आँखें मिल जाती हैं तो उन्हें झुका
चुराते हैं ? लेते हैं, जैसे चोरी पकड़ ली गयी हो । क्या
उनमें मेरे प्रति कोई लगावट, कोई दर्द, कोई

झुकाव नहीं है ? यदि नहीं है तो ऐसा होता क्यों है :—

वह दद दिल नहीं तो क्यों देखते ही मुझको ,
पलकें झुकालियां हैं, आँखें चुरालियां हैं ।

प्रेम कोई अपराध तो नहीं है पर दुनियामें अक्सर अपराध मान लिया जाता है । मीर कहते हैं कि तुम मालिक हो, मुझे मारना चाहो तो मार डालो पर दासने सिवा प्रेम करनेके और कोई पाप तो नहीं किया है:—

साहब हो मार डालो मुझे तुम वगर्ना कुछ ,
जुज आशकी गुनाह नहीं है गुलामका ।

मीर अपने शिष्टाचारको कभी नहीं छोड़ते । प्रियतमसे जो कुछ कहना है बड़ी विनयसे कहते हैं । उनकी इच्छाओंकी अभिव्यक्तिमें, आरजूके इजहारमें भी बड़ी गरीबी है, बड़ी सरलता है,—मानो उसमें भी वेदना कभी उनसे अलिप्त नहीं रहती:—

गर्चे कब देखते हो पर देखो ,
आरजू है कि तुम इधर देखो ।

‘सायल’ का एक शेर भी कुछ इसी तर्जपर है:—

दिल तो यह चाहता है खस्ता जिगरको देखो ,
आगे तुम्हारी मरजी चाहे जिघरको देखो ।

पर मीरका पहला मिसरा इतने दर्द, इतनी निराशा और हसरतमें डूबा हुआ है कि उसने उसे अनुभूतिकी वेदनाका स्वर प्रदान किया है ।

कब देखते हो वह अब तकके निराशा भरे अनुभवकी कथा
मेरी ओर ? कहता है और उसके प्रकाशमें ही अपनी अभि-
लाषा प्रकट करता है; इस अभिलाषामें भी
जैसे वह आश्वस्त नहीं कि वह देखेंगे क्योंकि ‘कब देखते हो ?’

विरहकी वेदना बहुत बढ़ गयी है; अब जीवनकी कोई आशा नहीं ।

चलचलाव लगा है । वह आये हैं । देखते हैं और शायद यह सोचकर कि
 ज़रा बैठो, हम भी ऐसा तो अक्सर होता रहता है, चलनेको तैयार
 चलते हैं ! होते हैं;—शायद उन्हें मालूम नहीं पड़ता कि
 आखिरी वक़्त है और हम भी यात्रापर निकलने
 ही वाले हैं ।

ज़रा रुक जाओ । यह मेरी अन्तिम बेला है । ज़रा मेरे पास बैठो;
 जल्दबाज़ी न करो, सब्र करो, ज़रा धीरज धरो, हम भी तुम्हारे साथ ही
 चलते हैं (मतलब यह है कि उधर तुम चलते हो, इधर मैं भी दम तोड़-
 कर चलता हूँ ।)

दमे-आखिर है, बैठ जा, मत जा,
 सब्र कर टुक, कि हम भी चलते हैं ।

कैसी बेबसी, निराशा और दिल-शिकनीका आलम है । मज़ा यह कि
 इसमें भी अपनी बही अकड़ और शान है :—

चले हम अगर तुमको इकराह^१ है,
 फ़कीरोंकी अल्लाह अल्लाह है ।

एक जगह कहते हैं कि तुमने अपने दिलसे तो हमें भुला दिया, निकाल
 दिया पर अपनेको मेरे दिलसे निकाल दो, मेरे दिलसे भुला दो तब
 समझूँ:—

तुमने जो अपने दिलसे भुलाया हमें तो क्या
 अपने तई तो दिलसे हमारे भुलाइए ।

सूरदासका निम्न पद याद आ जाता है—

‘हिरदै तें जब जाहुगो, मर्द बदैगो तोहिं ।’

मीरकी दुनिया दर्दकी दुनिया है और इस दुनियाका वह अद्वितीय कवि है। 'फिराक़' गोरखपुरीकी बात ठीक है कि मीर बड़ा ग़ज़लगो है और

यह दर्द
ज़िन्दगीको
उभारता है

ग़ालिब बड़ा फनकार (कलाकार) है। पर मीर को पढ़कर कलेजा हिल जाता है, जब ग़ालिबको पढ़कर उसकी उड़ानकी प्रशंसा करनी पड़ती है।

सबसे बड़ी बात मीरके साथ यह है कि मीरका दर्द हमें मारता नहीं, वह ज़िन्दगीको उभारता है। वह विष नहीं है, मारक नहीं है; वह बेहोशीमें भी एक अजब होश पैदा करता है। वह दुःखमें भी इन्सानकी महत्ता और श्रेष्ठताको कभी नहीं भूलता। मानवता पर उसको सहज गर्व है:—

मत सहल हमें जानो फिरता है फ़लक बरसों,
तब खाक़के परदेसे इन्सान निकलते हैं !

ज़िन्दगी काँटोंसे भरी है; मुसीबतोंसे घिरी है; अनिश्चितताओंसे उलझी है, और दिलकी नगरी है कि बार-बार लुटी है, हम देखते रहे हैं और वह लुट गयी है।

दिलकी वीरानीका क्या मज़कूर है,
यह नगर सौ मर्तबा लूटा गया।

मीरको बुलबुलेकी तरह मिटना ही है। प्रभाती वायु भी इस्क़के पागलोंका निशान पूछनेपर एक मुट्ठी धूल उड़ा देती है (कि यह है निशान उनका)—

नमूद^१ करके वहीं बहरे-ग़ाम^२में बैठ गया,
कहे तो मीर भी एक बुलबुला था पानीका।

×

×

आवारगाने इश्कका पूछा 'जो मैं निशाँ ,
मुश्ते-गुबार^१ लेके सब^२ने उड़ा दिया ।

संसारके कठोर पथपर चलते हुए वह बराबर अनुभव करते रहे हैं कि—
जमीं सख्त है आसमाँ दूर है ।

पर चलना, सिर ऊँचा करके चलना उन्होंने कभी न छोड़ा । अपने मूल्योंमें उनका विश्वास कभी न ढिगा, इसीलिए और लोग जिस बोझको उठा न पाये, या जो लोगोंको बहुत भारी प्रतीत हुआ, उसे वह उठा सके ।

सबपै जिस बार^३ने गिरानी की ,
उसको यह नातवाँ^४ उठा लाया ।

निराशाओंने इनमें अपनी राहपर चलनेकी आशा दी है; अपनी दुखी हुई जिन्दगीने इन्हें युग-वेदनाको अपनानेकी चेतना दी है इसीलिए इनकी वेदनामें इतनी तरलता और इतनी गहराई है । यह बोलते क्या हैं मानो तड़पकर इनका दिल ही निकल रहा है । शायद इसीको ख्याल-कर कहा भी है:—

अल्ला रे अन्दलीब^५की आवाज़े-दिलखराश^६ ,
जी ही निकल गया जो कहा उनने हाय गुल !

कितना दर्द है, क्या तस्वीर है, क्या भाषा है, क्या कला है, क्या गहराई है । बिल्कुल जैसा वह कहते हैं:—‘दुनिया सिमट आई है मेरे दीदएतरमें ।’ वेदना हर शब्दके झरोकेसे झाँकती है और यह प्रभाव बिना गहरी निजी अनुभूतियोंके सम्भव नहीं:—

दर्दे-दिल मा ग़मे-दुनिया, ग़मे-माशूक शब्द ,
बादह गर ख़ाम बुवद पुस्ता कुनद शीशए मा ।

१. एक मुट्ठी धूल । २. प्रभाती । ३. बोझ, भार । ४. दुर्बल, अशक्त । ५. बुलबुल । ६. हृदय-भग्नकारी, दिल चीरनेवाली ।

मीर : जीवन और काव्य ज्ञातव्य बातें

१. मीर-काव्यकी संचित-समीक्षा

मीरके काव्यकी जड़ें जीवनकी वास्तविकताकी मिट्टीमें दूर तक फैली हुई हैं। वह तूफ़ानोंमें पले, आँधियोंसे गुजरे थे। दुनियाका ऊँच-नीच उन्होंने देखा था। उनकी आँखोंके आगे सिंहासन टूटते थे, राजा भिखारी और भिखारी राजा बन जाते थे। स्वार्थके लिए मनुष्य पशु हो जाता था। खुद उन्होंने जमानेकी चोटें सही थीं, जगह-जगह फिरे थे। गरीबीके मजे चखे थे। हर तरहकी कठिनाइयाँ सहन की थीं। फिर उनके पास एक ऐसा दिल था जिसमें प्रेमकी वेदना और तड़प थी, जिसमें कल्पना और अनुभूति थी, जिसमें सपने थे, जिसमें जीवनके प्रति गहरी निष्ठा थी। इसके साथ उनमें सूफ़ियों और दरवेशोंके पैतृक संस्कार थे—वे संस्कार जिसने इनको दर्दमन्दी दी पर किसी वैभवके आगे न झुकनेकी वृत्ति भी दी। मीरके जीवनकी यह एक बड़ी विशेषता है कि कठिनाइयोंके बीच, गरीबीके बीच, चलते हुए भी उन्होंने कभी सिर नहीं झुकाया; मानवताके मूल्योंको कभी नहीं छोड़ा। सौन्दर्योपासनाने, प्रेमाने उन्हें जीवनकी सुकुमार वृत्तियों का सूक्ष्म ज्ञान दिया।

इसलिए इनका काव्य जीवनके उत्स रूपमें प्रकट हुआ है। उसमें सौन्दर्य एवं प्रेमसे लिपटे जीवनकी मुसकराहट है और जिन्दगीकी असफल संवेदनाओंका रोदन है। उनका प्रेम हवाई, काल्पनिक, आसमानी नहीं है; वह मानवीय है—वह इसी दुनियाका है; उसमें जीवनके रक्तकी तड़प और प्रवाह है पर उसमें कर्दम नहीं है, नग्नता नहीं है। उस एक दिलकी

घड़कनमें हज़ार-हज़ार दिल घड़कते हैं; उस प्यक्तिमें समष्टिका स्वर है; वह बोलते कुछसे हैं पर सुनाते लक्ष-लक्ष सामान्य जनको हैं ।

इसीलिए उनके काव्यमें इतनी सादगी, इतनी वेदना, इतनी तड़प और फिर भी जीवनके प्रति इतनी निष्ठा है कि युगपर युग बीतते गये हैं पर आज भी वह उर्दू काव्यमें 'खुदाये सखुन' की उपाधिसे पुकारे जाते हैं । उन्होंने खुद लिखा है कि मेरे काव्योद्यानमें गुलाब-पुष्प नहीं, कलेजेके टुकड़े फैले हुए हैं :—

गुलचीं समझके चुनियो कि गुलशनमें मीरके,
लख्ते जिगर पड़े हैं नहीं बर्गहाए गुल ।

या

हमको शायर न कहो मीर कि साहब हमने,
दर्दो-ग़म कितने किये जमा तो दीवान किया ।

इस प्रकार इनकी सम्पूर्ण रचनापर इनके व्यक्तित्वकी गहरी छाप है । वह इनके जीवनका ही प्रतिबिम्ब है । कवियोंकी रंगीन उक्तियाँ, विचारोंकी सूक्ष्म, अतिशयोक्तिके मजे बहुतांको मालूम हैं, जगत्के साहित्यमें उनका बाहुल्य है । क्षणिक आकर्षणका उद्दाम प्रवाह भी हम आये दिन अपनी आँखोंसे देखा करते हैं किन्तु अपनी असफलताओंमें स्नेहकी जीवन-व्यापी दृढ़ता बहुत कम कवियोंमें दिखाई देती है; मीर ऐसे ही कवि हैं । चंचलता, सांसारिक विलासकी चमक-दमक, को कहीं कोई रेखा उनमें नहीं है । जो मुसीबत और ग़म, जो दर्दमन्दी, जो सोज़ गुदाज़ साथ लाये थे उसीका दुखड़ा सुनाते हुए चले गये, जो आज तक आँखवाले दिलोंमें असर और विदग्ध हृदयोंमें दर्द पैदा करते हैं । ऐसे विषय अन्य शायरोंके लिए काल्पनिक थे, जब इनपर वे गुज़र चुके थे । इनका आशिकाना-क़लाम (प्रेम-काव्य) वेदना, निराशा एवं असफलताकी आँखोंसे टपके हुए आँसुओंका एक हसरतसे भरा हुआ मरहम है जो वियोगकी डिबियाँमें बन्द पड़ा

हुआ है। निष्ठुर प्रियतम द्वारा दिलपर दिये गये नश्वरके लिए यह मरहम बहुत कारगर है।

मीर साहबकी भाषा परिमार्जित और रचना साफ़ है। वर्णन इतना स्वाभाविक है जैसे बातें करते हैं और इसी बातने उनकी ग़ज़लोंको आदर्श नमूना बना दिया है क्योंकि ग़ज़ल है ही दो प्रेमियोंकी बातचीत। दिलके भावोंको, मुहाविरका रंग देकर, बातों-बातोंमें अदा कर देते हैं। भाषामें ग़ज़बका जोर है। इनकी कविताका सबसे बड़ा गुण सादगी और स्वाभाविकता है। पढ़ते-पढ़ते ऐसा मालूम होता है मानो आँखोंके आगे कोई प्रभावशाली नाटक खेला जा रहा है। जहाँ वियोगका वर्णन करने लगेंगे, रुलाकर छोड़ेंगे। वही सीधी-सादी बात है किन्तु ढंग ऐसा है कि दिलमें सीधे जाकर चुभती है।

इनकी रचनाके बारेमें बहुत कुछ कहा जा सकता है, पर एक बात स्पष्ट है कि उसमें अन्तर्वृत्तियोंकी प्रधानता है; उन्होंने शब्दों, सजावट, अलंकरणकी अपेक्षा अनुभूति एवं भाव-पक्षको अधिक महत्त्व दिया है। भाषा स्वयं भावोंका अनुसरण करती है। इनका कलाम साफ़ कह रहा है कि जिस दिलसे निकलकर आया है, वह दुःख-दर्दका पुतला हो नहीं निराशा, हसरत और वेदनाका जनाज़ा था। सदैव एक रंगमें रंगे रहते थे। जो दिलपर बीतती थी उसे ही बिना बनावट, सीधे-सादे शब्दोंमें कह देते, जिसका सुननेवालोंपर जादूका-सा असर होता था।

इनका काव्य-विस्तार भी बहुत है। ६-६ दीवान तो ग़ज़लोंके ही हैं। इनकी ग़ज़लें भी अनेक बहरों (छन्दों) में हैं। सभीमें मधुरता और वेदना है परन्तु छोटी बहरोंकी ग़ज़लोंमें और भी कुछ है। उनमें गहरी चुभन है, उनकी चितवन दिलोंमें सीधे पैठती है। फर्माइशी ग़ज़लें उतनी अच्छी नहीं हैं; उनमें वह प्रभाव नहीं दिखाई देता। यह स्वाभाविक है और इसका कारण स्पष्ट है। जो रचना कविके हृदयसे न निकले, वह दूसरोंके दिलोंमें क्या गुदगुदी पैदा करेगी ?

फारसी मुहाविरोंपर उर्दू बन्द लगाकर इन्होंने नया आविष्कार किया है। फारसी मुहाविरोंके अनुवाद भी इनकी रचनामें देखे जाते हैं। कुछ उदाहरण देना अप्रासंगिक न होगा।

‘खुशमनमे आयद’ फारसीका एक मुहाविरा है। इनका अर्थ होता है, ‘मुझे भला नहीं लगता।’ मीर साहब इसी मुहाविराको उर्दूके साँचेमें यों ढालते हैं :—

नाकामिये^१ सद-हसरत^२ खुश लगती नहीं वरना

अब जीसे गुजर जाना कुछ काम नहीं रखता।

‘नमूद करदन’ फारसीका एक फ़िक्ररा है। इसका अर्थ है ‘प्रकट करना।’ मीर लिखते हैं :—

नमूद^३ करके वहीं बहरेगाम^४में बैठ गया,

कहे तो मीर भी एक बुलबुला था पानीका।

इसी तरहके और भी अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। इनकी ऐसी रचना अच्छी है। इनमेंसे कुछ प्रसिद्ध और प्रचलित भी हैं किन्तु साधारणतया लोगोंने इन्हें भलीभाँति नहीं अपनाया।

कहीं-कहीं कुछ ऐसे फारसी मुहाविरोंका आधार लेकर इन्होंने शेर कहे हैं जिन्हें पीछे लोगोंने छोड़ दिया। ‘नज आमदन’ अर्थात् शर्मिन्दा होना एक मुहाविरा था। इसकी छाया-मात्र लेकर खूब कहा है :—

खुलनेमें तेरे मुँहके, कली फाड़े गरेबाँ^५,

आगे तेरे रुखसार^६के गुलबर्ग^७ तर आवे।

कहीं-कहीं आपको जोश भी आ गया है। ऐसी जगह आपने खूब

१. असफलता। २. बहुत अफ़सोस है। ३. प्रकट। ४. दुःख-सागर।

५. गला, कुर्तेका वह भाग जो गर्दनके पास होता है। ६. कपोल।

७. गुलाबकी पंखड़ी।

दूनकी हाँकी है, परन्तु उनका ऐसी रचना भी मजेसे खाली नहीं। एक शेर देखिए:—

हरचन्द नातवाँ^१ हैं पर आ गया जो दिलमें,
देगे मिला ज़मीसे तेरा फ़लक^२ कुलावा ।

अनेक स्थानोंपर इन्होंने शब्दोंके विकृत रूपको भी स्थान दिया है।
उदाहरण लीजिए:—

मैं बेक्ररार खाकमें कबतक मिला करूँ,
कुछ मिलने या न मिलनेका तो भी क्ररार कर ।

इसमें क्ररार शब्द इकरार (प्रतिज्ञा, वचन, शर्त) का बिगड़ा हुआ रूप है। इन्होंने अनेक प्रचलित हिन्दी शब्दोंका प्रयोग किया है: नासिख और आतिशकी तरह उन्हें चुन-चुनकर बहिष्कृत नहीं किया। निम्नलिखित हिन्दी शब्द इनकी कवितामें मिलते हैं:—

ठौर, दोष, समय, पर्वत, विश्राम, अच्छर, विस्तार, मूँद, ध्यान, नगर, साँझ, ढब, उदास, मुखड़ा, जोग, तजना, संसार, सुमरन, भस्म, अचरज, हंकार, राम-कहानी, मेंह, निदान, अंधाधुंध, गूदड़ इत्यादि ।

उस समय उर्दू जनताके अधिक नज़दीक थी। इसमें हमारी ज़मीन बोलती थी। वलीने तो इसका बड़ा ख्याल रखा था। उस समय उर्दू सचमुच हरियानाकी बेटी मालूम होती थी पर बादके कवियोंने उसे अरबी-फ़ारसी वस्त्रालंकारोंसे ऐसा सजाया कि वह शहरी और नक़ली हो गयी और उसकी कल्पनाएँ इस सरज़मीनमें नहीं ईरान और अरबमें पनपने लगीं ।

मीरने स्वतंत्रतापूर्वक सैकड़ों हिन्दी शब्दोंका प्रयोग किया। उन्होंने भाषापर कोई बन्धन स्वीकार न किये, और अपनी भाषा बनाई। कहा ही

करते थे कि उर्दू जामा मस्जिदकी सीढ़ियोंपर नाक रगड़नेसे, न कि फ़ारसी अरबी पढ़नेसे, आती है। व्याकरण भी इनका अपना ही है। सैर, जराहत, जान, गुलगस्त स्त्रीलिंग हैं पर इन्होंने पुल्लिङ्गवत् प्रयोग किये हैं; इसी प्रकार हश्त्र, खाब, गुलज़ार, नशतर पुल्लिङ्ग हैं जो इनके यहाँ स्त्रीलिंग हो गये हैं। हिन्दी एवं फ़ारसी शब्दोंको मिलाकर नये विशेषण बना लिये हैं। जैसे शीरीवचन। 'मेरा' की जगह 'मुझ' का प्रयोग किया है। जैसे मुझ इश्क़ अर्थात् मेरा इश्क़। जहाँ आज एकवचनका प्रयोग होता है वहाँ प्रायः बहुवचनका प्रयोग किया है। जैसे रातें हमारियाँ (हमारीकी जगह), बातें तुम्हारियाँ (तुम्हारीकी जगह) विशेषणोंको तो अब भी दिल्ली और लखनऊमें कभी-कभी बहुवचनान्त बोलते हैं, जैसे मीठियाँ रेउड़ियाँ पर मीरने क्रियाओंका भी बहुवचनान्त प्रयोग किया है। जैसे—

कहीं दिलकी लागैं लगीं छुटतियाँ हैं।

और भी बातें न मानियाँ, आँखें तरसतियाँ हैं,

बातें बहुत बनाइयाँ थीं, काहे को लड़तियाँ—

झगड़तियाँ हो।

इत्यादि अनेक उदाहरण मिलते हैं।

अनेक स्थानोंपर सकर्मक क्रियाओंमें जहाँ 'ने' का प्रयोग होता है, 'नै' ग़ायब है। जैसे मैं काम किया, हम उसे देखा। यह दक्षिणका प्रभाव है। 'देखता रहता हूँ' की जगह 'देख रहता हूँ', टूट गया की जगह 'टूटा गया' इत्यादि रूप इनकी कवितामें पाये जाते हैं। उस वक़्त दिल्लीमें किसीका किसू, कभीका कभू रूप प्रचलित था; मीरने इन्हीं रूपोंमें उनका प्रयोग किया है।

व्याकरण-दोष मीरके समकालिक अन्य कवियोंमें भी पाये जाते हैं। सौदाको देखिए—

कहा तबीब^१ने अहवाल^२ देखकर मेरा,
कि सख्त जान है सौदा का आह क्या कीजै ।
हर संगमें शरार^३ है तेरे जहूरका,
मूसा नहीं जो सैर करूँ कोहे तूरका ।

ऐसा जान पड़ता है कि उस समय ये प्रयोग प्रचलित रहे होंगे और व्याकरण-सम्मत समझे जाते रहे होंगे ।

मीरने उर्दूको उर्दू रखनेकी कोशिश की; हिन्दकी बेटी समझ उसकी परवरिश की; इस ज़मीनके वातावरणसे भाव और शब्द लिये । यदि उर्दूवाले आज भी उनकी देनको समझ सकते तो इस देशकी राष्ट्रभाषासे उसका सम्बन्ध न टूटता और उसमें जो विदेशीपन, जो विजातीय तत्त्व आ गये हैं उन्हें सुधारा जा सकता । खुसरो, बली, मीरने जो रास्ता दिखाया था, उसे हम भूल गये हैं; नतीजा यह है कि उर्दूके क्रियापद तो सब हिन्दीके हैं पर शब्द नब्बे प्रतिशत अरबी-फ़ारसीके । जैसे पाँव इस ज़मीन के हों और एक विदेशी सिरकी क़लम लगा दी गयी हो ।

२. अन्य कवियोंसे तुलना

कवियोंकी तुलना करना कोई अच्छी परम्परा नहीं । मानव-हृदयकी अनुभूतियाँ प्रायः मिल जाती हैं; कभी-कभी किसी कविके पूर्व-कथित भाव में परवर्त्ती कविको संशोधनकी अपेक्षा मालूम होती है । कभी दूसरी भाषा के भाव जो स्मृतिमें हैं आ जाते हैं । मीरने ही हाफ़िज़, सादी इत्यादि फ़ारसी कवियोंसे अनेक भाव लिये हैं । इसलिए मैं इस पहलूको नहीं लेता पर कवियोंकी प्रकृति तथा उनकी अभिव्यक्तिमें जो अन्तर होता है, उस दृष्टिसे तुलनाकी दो-चार बातें लिखूँगा । मीर अपने ढंगके एक ही कवि है; कोई उनका अनुकरण कर नहीं पाया है ।

१. चिकित्सक । २. अवस्था, हालत । ३. चिनगारी, अग्नि ।

मीर और सौदा :—मीरके समकालिक कवियोंमें सौदा सबसे प्रसिद्ध थे । यह जोड़ी उर्दू साहित्यमें लासानी है । दोनों अपनी जमीन पर निराले हैं । दोनोंके साँचे अलग हैं । एक रोता है; दूसरा हँसता है । एकके हृदयसे यदि कसक भरी आह निकलती है तो दूसरेके मुँहसे आनन्दके फ़व्वारे छूटते हैं । मीरके यहाँ सादगी है, कष्टना है; सौदाके यहाँ वैभव है, आन-बान है । इसीलिए मीर राजालके बादशाह हैं; सौदा क़सीदे*के । जान पड़ता है, सौदाके सामने भी ये झगड़े थे । वह स्वयं कहते हैं :—

लोग कहते हैं कि सौदाका क़सीदा है ख़ूब,
उनकी ख़िदमतमें लिये मैं यह राज़ाल जाऊँगा ।

अर्थात् लोग कहते हैं कि सौदाका क़सीदा ही अच्छा होता है; उनके सामने मैं आज यह राज़ाल पेश करूँगा (कि देखो यह किससे कम है ?) ।

हकीमक़ुदरत उल्लाखाँ क़ासिम अपने तज़किरेमें लिखते हैं :—

“जोम बाजे आँकि सरआमद शुआराय फ़साहत आमा मिर्जा मोहम्मद रफ़ीअ सौदा दर राज़ालगोई बूए न रसीद; अमाहक़ आनस्त कि “हर गुले रा रगो बूए दीगरस्त ।” मिर्जा दरियाएस्त बेकराँ व मीर नहरेस्त अज़ीमुश्शान । दर मालूमाते क़वायद ‘मीर’ रा बर मिर्जा बरतर अस्त, व दर क़ूबत शायरी मिर्जा रा बर ‘मीर’ सरवरी ।”

सच बात तो यह है कि राज़ाल, क़सीदे और मस्नवीके क्षेत्र अलग-अलग हैं । जिस प्रकार क़सीदेके लिए विषयोत्कृष्टता, शब्द-योजना और सज्जाकी आवश्यकता होती है उसी प्रकार राज़ालके लिए प्रेमी-युगलके विचारोंका स्वाभाविक प्रवाह, मिलन-सुखकी एवं वियोग-दुःखके अनुभव एवं संवेदनशीलताकी आवश्यकता होती है । मीर साहबकी प्रवृत्ति वेदनामयी,

*क़सीदा = फ़ारसी तथा उर्दू में कविताके उस अंगको कहते हैं जिसमें कवि किसी महान् पुरुष अथवा उत्तम वस्तुका प्रशंसात्मक वर्णन करता है ।

तीव्र संवेदनशील थी और हृदय हसरतोसे भरा हुआ था, उसमें गर्मी थी। इसलिए वह गजल क्षेत्रके अधिपति बन गये। उनकी भाषा सरल और स्पष्ट है। वर्णन ऐसा है मानो प्रियतम (माशूक) और प्रेमी (आशिक) दोनों आमने-सामने बैठे बातें कर रहे हैं।

‘सौदा’ की प्रकृति इसके विपरीत थी। वे सांसारिक प्राणी थे। उनका झुकाव आन-बान भोग-विलासकी ओर ज्यादा था। उनमें गंभीरता न थी, चंचलता थी। उनकी रचनाकी पंक्ति-पंक्तिसे यह प्रकट होता है मानो उनका हृदय उमंगोंमें उठा जा रहा है। उनके हृदयमें जोश है, तबीयत चुलबुली है, कहनेका ढंग जानते हैं। जो चीज उठाते हैं, उसे शब्दोंसे, अलंकारोंसे खूब सजाकर लोगोंके सम्मुख रख छोड़ते हैं। रूप एवं सज्जाका जादू उनके पास है।

मीर साहब चुलबुले नहीं, गंभीर हैं। उनका हृदय-सागर निस्तब्ध है। वह अनुभव रखते हैं। उनकी दृष्टि है, स्वप्न है और नयनोंमें एक हलका विनोद है जो कहता है—तू कालचक्रको नहीं जानता; मैं उसके करिश्मे देख चुका हूँ। वह कल्पनाको अनुभवकी स्वाभाविकता पर ठुकरा देते हैं।

दोनोंपर उपयुक्त सम्मति :—एक दिन ‘मीर’ और ‘सौदा’की रचनाओंके विषयमें दो व्यक्तियोंमें विवाद हो गया। दोनों ख्वाजा बासित के शिष्य थे। उन्हींके पास जाकर प्रार्थना की कि आप फैसला कर दीजिए। उन्होंने कहा—“दोनों प्रतिभाशाली कवि हैं किन्तु अन्तर इतना है कि ‘मीर’ साहबका कलाम ‘आह’ है और मिर्जा साहब (सौदा) का कलाम ‘बाह’ है। उदाहरणमें उन्होंने ‘मीर’ का निम्नांकित शेर पढ़ा :—

सिरहाने ‘मीर’ के आहिस्ता बोले ,
अभी ठुक रोते-रोते सो गया है।

पश्चात् मिर्जाका शेर पढ़ा :—

‘सौदा’की जो बाली^१पै गया शोरे कयामत^२,
खुदामे-अदब^३ बोले, अभी आँख लगी है ।

पहलेमें बेचारगी, दूसरेमें क्या शान है ! खाजा साहबकी यह भाव-
भरी आलोचना बहुत उपयुक्त है ।

×

×

×

मीरके दो शेर हैं :—

हमारे आगे तेरा जब किसीने नाम लिया,
तो दिल सितमज्जदहको हमने थाम-थाम लिया ।
कसम जो खाइए तो तालए-जुलेखाकी,
अजीज मिस्रका भी साहब एक गुलाम किया ।

सौदाके भी इसीसे मिलते-जुलते शेर हैं :—

चमनमें सुबह जो उस जंगजूका नाम लिया,
सबाने तेराका मौजे-रवाँ से काम लिया ।
कमाल बन्दगीए-इश्क है खुदाबन्दी,
कि एक ज़नने महे-मिस्र-सा गुलाम किया ।

देखिए, दोनोंके भाव एक-दूसरेसे कितने लड़ गये हैं । दोनोंके प्रथम शेर देखिए । मीर कहते हैं कि “हमारे सामने जब किसीने तेरा नाम लिया तो मैंने अपने पीड़ित हृदयको थाम-थाम लिया” कि कहीं वह फट न जाय । सौदा कहते हैं कि “चमन (उद्यान) में प्रातःकाल जो उस लड़ाकेका नाम लिया तो (नाम लेते ही) सब (प्रभाती वायु) ने

१. सिरहाना, तकिया, छत । २. प्रलयका नाद । ३. साहित्य-सेवक ।

चलती तरंगोंसे तलवारका काम लेना शुरू कर दिया” (अर्थात् उसकी स्मृति आते ही, वियोगके कारण, प्रभाती शीतल वायु भी कृपाणके समान चुभने लगी ।)

दोनोंके कहनेका अपना-अपना ढंग है पर सौदाके शेरमें उतनी स्वाभाविकता, उतनी सादगी, उतनी विदग्धता नहीं है जितनी ‘मीर’ के शेरमें है । ‘हमारे आगे तेरा जब किसीने नाम लिया’ (तो क्या हुआ ?) ‘दिल सितमज्दहको हमने थाम-थाम लिया ।’ कितनी वेदना है ! सीधे तीर-सी लगती है । कहनेका ढंग ऐसा है मानो मीर साहब अपने प्रियतमके पास बैठे आप-बीती कह रहे हैं । दूसरे चरणने तो गजब ढा दिया है । ‘दिल सितमज्दहको हमने थाम-थाम लिया ।’ थाम-थाम लेना ! कितना स्वाभाविक है ! थामको दोहराकर कविने कमाल पैदा कर दिया है ।

सौदाने बड़ी छलाँग मारी है पर कल्पनाका जोर कहाँ तक जायगा ? विशेषतः प्रेमके मामलेमें । ऐसा कौन प्रेमी होगा जिसे प्रियतमके वियोगमें प्रभाती वायु दुःखदायिनी न प्रतीत हो ? यह मामूली-सी बात है जिसे सब जानते हैं और शुरूसे अबतक कहते आये हैं । सौदाने भी उसी आशय पर एक दीवार खड़ी की है । दिमागी खूराक सौदामें भले ही हो पर हृदय को सहलानेवाला रस उसमें नहीं है ।

×

×

चमनमें गुलने जो कल दावए-जमाल किया,
जमाले-यारने मुँह उसका खूब लाल किया ।

—मीर

बराबरीका तेरी, गुलने जब खयाल किया
सबाने मार थपेड़ा मुँह उसका लाल किया ।

—सौदा

मीरके शेरका आशय है कि “कल उद्यानमें गुल (गुलका रंग लाल माना गया है) ने जो अपनी सुन्दरताका दावा किया तो प्रियतमके सौन्दर्यने (अपनी स्मृति दिलाकर शर्मसे) उसका मुँह लाल कर दिया !” सौदा कहते हैं कि “तेरी बराबरी करनेका गुलने ज्योंही विचार किया त्योंही सब (प्रभाती वायु) ने थपेड़ोंसे उसका मुँह लाल कर दिया ।”

दोनों शेरोंमें विलक्षणता है । सौदाका शेर बहुत अच्छा हुआ है, उसमें बड़ी शोखी है पर मीर गंभीर हैं; वे उतावले नहीं । उनका जोश इस दर्जे का नहीं कि थपेड़ों और थपेड़ोंकी नौबत आती । उनके मौनमें एक संजीदगी है जो चुप होकर भी बोलती है ।

X

X

गिला मैं जिससे कलूँ तेरी बेवफ़ाईका,
जहाँमें नाम न ले फिर वह आशनाईका ।

—मीर

गिला लिखूँ मैं अगर तेरी बेवफ़ाईका,
लहूमें गर्क सफ़ीना' हो आशनाईका ।

—सौदा

देखिए, मीरमें निराशाकी कितनी गहरी छाया है । वह निराश हो अपने प्रियतमसे कहते हैं :—“ज़रा सोचो, तुम मुझपर कितना जुल्म करते हो, मुझे कितना सताते हो ? इससे तो तुम्हारे ही यश पर घब्बा लगता है न ? मैं जिसे भी तुम्हारी निष्ठुरताकी कहानी सुनाऊँगा वह फिर संसार में प्रेमका नाम न लेगा ।”

सौदा साहब लिखनेकी धमकी देते हैं—जब आप बेवफ़ाईका गिला लिखेंगे तो जो होना होगा, होगा; मीरके यहाँ तो सिर्फ़ कहने-सुनने मात्रसे विरक्ति हो रही है ।

मीर और ख़ाजा मीर दर्द :—मीरके समकालिक कवियोंमें मीर दर्द ही ऐसे हैं, जिसमें 'मीर'के काव्यके अनेक गुण पाये जाते हैं। डा० अब्दुल हक़ने लिखा है—“यूँ तो मीर साहबके तमाम नामवर हमासिरो^१के कलाममें सादगी, सफ़ाई और रोज़मर्रकी पाबन्दी पाई जाती है लेकिन महज़ सलासत^२ और ज़बानकी फ़साहत^३ काम नहीं आ सकती जब तक कि ज़बानमें ताज़गी, अदाए-मतलबमें शिगुफ़्तगी^४ और ख़्यालमें बुलन्दी व जिद्दत^५ न हो। मीर साहबके कलाममें यह सब खूबियाँ एक जाँ जमा हैं और फिर उसपर दर्द और तासीर खुदादाद^६ मालूम होती है। इसी वजहसे वह अपने तमाम हमासिरोमें मुमताज़^७ और उर्दू शायरोंमें खास दर्जा रखते हैं और उनकी इस मुमताज़ खसूसियत^८को अब तक कोई नहीं पहुँचा है। अलबत्ता ख़ाजामीर दर्द एक ऐसे शायर हैं जिन्होंने सलासत व फ़साहते ज़बानके साथ इख़लाकी मज़ामीन^९ और सूफ़ियाना ख़्यालात की चाशनी दी है और कलाममें दर्द पैदा किया है। बयानमें जिद्दत और ताज़गी भी पाई जाती है जिसमें वह मीर साहबके लगभग पहुँच जाते हैं लेकिन बयानमें वह घुलावट नहीं जो मीर साहबके हाँ है.....न सादगीके साथ वह सोज़ो-गुदाज़ है और न तख़य्युल^{१०}की वह शान है जो शायरी की जान है। खसूसन बयानका वह अनोखा अन्दाज़ जिसमें एक खास नज़ाकत होती है नज़र नहीं आता। मीर साहबका बड़ा कमाल इसी में है।”

मीर और अनीस : जलन, दुःख और तड़पनके बयानमें अनीस उर्दू साहित्यमें बेजोड़ हैं। मर्सियेके बादशाह हैं। फ़साहतमें उनका स्थान बहुत ऊँचा है पर वह भी मीरके बराबर नहीं पहुँचते। मीरमें जो सरलता

-
१. समकालिक। २. प्रसाद गुण, सरलता। ३. लाटिका, कोमलता, लुलुबयानी। ४. प्रफुल्लता। ५. नवीनता। ६. स्थान। ७. ईश्वरदत्त। ८. विशिष्ट। ९. विशेषता। १०. नैतिक विषय। ११. कल्पना।

और अकृत्रिमता है वह अनीसमें नहीं। उनमें कुछ तकल्लुफ़ है। अब्दुलहक साहब लिखते हैं:—“मीर इससे बिस्कुल बरी है। वह खुद सोजोग्रामका पुतला है और उसका शेर सोजोग्रामकी सही और सच्ची तस्वीर है जिसमें तकल्लुफ़का नाम नहीं। अनीसके हाँ ख्यालके मुक्काबिलेमें अलफ़ाज^१की बहुतायत है और ख्यालसे पहिले लफ़्ज़ पर नज़र पड़ती है लेकिन मीरके अशआर^२में अलफ़ाज ख्यालके साथ इस तरह लिपटे हुए हैं कि पढ़नेवाला मही^३ हो जाता है और इस लफ़्जे-ख्यालसे अलग नज़र नहीं आता। मीर अनीसके हाँ धूमधाम और बुलन्द-आहंगी^४ है, मीरके हाँ सकून और खामोशी है और उसके शेर चुपके-चुपके खुद बख़ुद दिलमें असर करते चले जाते हैं जिसकी मिसाल उस नशतरकी-सी है जिसकी धार निहायत बारीक और तेज़ है उसका असर उसी वक़्त मालूम होता है जब वह दिल पर जाकर खटकता है। अनीस रलाते हैं, मीर खुद रोता है। यह आप बीती है और वह जगबीती।”

मीर, जुरअत और सौदा:—मीरके भावोंकी छाया अनेक उर्दू कवियोंकी रचनाओंमें दिखाई पड़ती है। यदि उन सबका तुलनात्मक वर्णन किया जाय तो एक बड़ा ग्रंथ तैयार हो जायगा। यहाँ मैं दो एक उदाहरण दूँगा :—

अब करके फ़रामोश^५ तो नाशाद करोगे ,
पर हम जो न होंगे तो बहुत याद करोगे ।

—मीर

है किसका जिगर जिसपे यह बेदाद करोगे ,
लो हम तुम्हें दिल देते हैं क्या याद करोगे ?

—जुरअत

१. लफ़्ज़, (शब्द) का बहुवचन रूप । २. शेरका बहुवचन ।
३. तल्लीन । ४. उच्च ध्वनि । ५. विस्मृत ।

जिस रोज़ किसी औरपे बेदाद करोगे ,
यह याद रहे हमको बहुत याद करोगे ।

—सौदा

तीनों शेरोंके अर्थ साफ़ हैं और सबमें 'मीर'की भावना, किंचित् परिवर्तनके साथ, विराजमान है । सौदाके लिए तो भावापहरणका कलंक लगाया ही नहीं जा सकता क्योंकि वह मीरके समकालिक थे पर 'जुरअत' महाशयके शेरमें 'मीर' साफ़ झलक रहे हैं ।

'सौदा' के शेरमें अजीब लुत्फ़ है पर मीरके दूसरे पदने उसमें एक ऐसा अनुभूतिका वातावरण पैदा कर दिया है जिससे वह दिलमें चुमकर रह जाता है ।

मुद्ई मुझको खड़े साफ़ बुरा कहते हैं ,
चुपके तुम सुनते हो बैठे, इसे क्या कहते हैं ?

—मीर

तूने सौदाके तईं क़त्ल किया कहते हैं,
यह अगर सच है तो ज़ालिम इसे क्या कहते हैं ?

—सौदा

आईना रुख़को तेरे अहले सफ़ा कहते हैं ,
उसमें दिल'अटके है मेरा इसे क्या कहते हैं ?

—जुरअत

तीनों कवियोंके भावोंमें कोसोंका अन्तर है, हाँ ज़मीन एक है । मिसरेका अन्तिम प्रश्नवाक्य सबने अपनाकर पूर्तिर्या की हैं । सौदाके शेरमें कुछ विशेषता नहीं है । वह पूछते हैं कि 'तूने सौदाको क़त्ल किया है, ऐसा लोग कह रहे हैं । अगर यह सच है तो ऐ ज़ालिम ! यह क्या है ?'—पहिले तो अभी बात ही शुबहेमें है, 'अगर सच है' ने क़त्लको संदिग्ध

बना दिया है, फिर जो कल्ल है वही पूछता है, यह बेतुकी बात है। बिना जुर्म साबित हुए ही आपने 'जालिम' की उपाधि भी दे डाली। शेर बहुत साधारण है। हाँ, दूसरे दोनोंमें कुछ विचित्रता है।

मीर अपने प्रियतमसे पूछते हैं:—“देखो, तुम्हारे सामने ही मेरे विरोधी मुझको स्पष्ट बुरा-भला कहते हैं, मेरा अपमान करते हैं और तुम चुपचाप बैठे-बैठे सुनते रहते हो, उसका प्रतिवाद करनेकी तनिक चेष्टा नहीं करते। बोलो, यह क्या है ?” (यही तुम्हारा प्रेम है) भाषा कितनी सादी है; बिल्कुल बातचीतकी ज़बान है। एक शब्द फ़ालतू नहीं। मुलायम और रोती हुई ज़बान है।

जुरअत तो इस समय दूसरी ही दुनियामें है। उनका कहना है कि “स्वच्छताके पारखी तेरे मुख-मण्डलको आईना (दर्पण) कहते हैं तब दर्पण—जैसी चिकनी चीज़ पर भी मेरा दिल क्यों अटक रहा है ?” (चिकनी चीज़ पर फिसलना चाहिए, अटकना नहीं।)

एक ज़मीन पर अनेक कवियोंके अनेक शेर मिलते हैं—

बुरक़ेको उठा चेहरेसे वह बुत अगर आये,
अल्लाहकी क्रुदरतका तमाशा नज़र आये।

—मीर

हरगिज़ न मुरादे दिले^१-माशूक़ बर^२ आये,
यारब ! न शबे-वस्ल^३के पीछे सेहर^४ आये।

—मसहज़ी

उस पर्दानशीसे कोई किस तरह बर आये,
जो ख़ाबमें भी आये तो मुँह ढाककर आये।

—बुरअत

१. हृदयकी इच्छा। २. पूर्ण होना। ३. मिलन-रजनी। ४. प्रभात।

फिरदौस^१ में ज़िफ़र उस लबेशीरी^२ का गर आये ,
पानी देहने^३ चश्मए-कौसर^४ में भर आये ।

—चौक

‘मीर’ ने प्रियतमके सौन्दर्यको भगवद्विभूति बताकर उसे बहुत ऊँचा उठा दिया है ।

३. मीरके कवि मित्र

बहुत-से लोग समझते हैं कि मीरकी तुनुकमिज़ाजी और स्वाभिमानके कारण, उनके मित्र रहे ही न होंगे पर ऐसी बात नहीं । जैसे हृदयहीन, अभिमानी और असंस्कृत लोगोंके प्रति वह आँख उठाकर न देखते थे, उन्हें मुँह न लगाते थे वैसे ही सहृदय, काव्य-रसिक व्यक्तियों तथा श्रेष्ठ कवियोंके प्रति उनमें स्नेह और सम्मानका भाव भी था । उनके कई ऐसे मित्र थे जो स्वयं अच्छे कवि थे और जिनके साथ मीरकी खूब निभती थी ।

(१) शफ़ुद्दीन अली खाँ ‘पयाम’ के पुत्र नजमुद्दीन अलीखाँ ‘सलाम’ इनके परम मित्रोंमें थे । प्रायः दोनों साथ रहते थे । दोनोंमें काव्य-चर्चा होती, गप्पें लगतीं, साहित्य एवं संस्कृतिके अनेक पहलुओं पर बहस होती थी ।

(२) इनके दूसरे दोस्त श्रेष्ठ उर्दू कवि ख्वाजा मीर दर्द थे । मीर दर्दके यहाँ हर महीनेकी पंद्रह तारीखको मुशायरा हुआ करता था, उसमें मीर साहब नियमित रूपसे सम्मिलित हुआ करते थे । बादमें ख्वाजा साहबके अनुरोध पर यह मुशायरा मीरके ही मकान पर होने लगा था ।

(३) मीर सज्जाद—यह भी आगरा (अकबराबाद) के रहनेवाले थे पर दिल्ली (शाहजहानाबाद) रहने लगे थे । इनके यहाँ भी मुशायरे हुआ करते थे और मीर उनमें जाते थे । मीर इन्हें मानते थे । (४)

१. स्वर्ग । २. मधुराधर । ३. जिह्वा । ४. स्वर्गस्थ अमृतकुण्ड विशेष ।

मीर विलायत अलीखाँ, (५) अशरफ़ अलीखाँ 'फुर्गा', (६) मोहम्मद इस्माइल 'बेताब', (७) इनाम उल्लाखाँ 'यक़ीन', (८) मियाँ शहाबुद्दीन 'साकिब', (९) सय्यद अब्दुलवली 'अजलत', (१०) मीर अब्दुलहई 'ताबाँ', (११) हसन अली 'शौक़', (१२) 'क़ायम' चाँदपुरी, (१३) फ़जल-अली 'दाना', (१४) मीर हसन, (१५) हिदायत उल्ला 'हिदायत', (१६) मोहम्मद आरिफ़ 'आरिफ़', (१७) 'बेदार', (१८) लाला टेकचन्द 'बहार', (१९) मीर अब्दुल रसूल 'निसार', (२०) मोहम्मद अमानुल्ला 'शरीब', (२१) ज़ियाउद्दीन 'ज़िया', (२२) मियाँ इब्राहीम, (२३) मीर घासी मीर अली नक़्की (इनके यहाँ भी मुशायरा होता था) ।

४. मीरके शिष्य

मीरका यश यद्यपि दूर-दूर तक फैला किन्तु उनके जैसे महाकविके शिष्योंकी संख्या इनी-गिनी थी । वह जल्द किसीको शिष्य न बनाते थे । मसतको इन्कार कर दिया, सबादत यार खाँ 'रंगी' से कह दिया तीर-तलवार चलाना सीखिए, शायरी ज़िगरसोज़ीका काम है, उसमें न पड़िए । नासिखके साथ भी यही हुआ । पत्थरका कलेजा और फ़ौलादका दिल वाला ही उनके साथ निभ सकता था । इन बातोंका विचार करते हुए कोई आश्चर्य नहीं कि उनके शिष्योंकी संख्या बहुत कम है । कई तो इनसे उत्साह दान न पा दूसरोंके पास चले गये और उनके शिष्य हो गये । उनकी पुस्तक 'नकातुश्शुअरा' से ज्ञात होता है कि उनके निम्नलिखित शिष्य थे:—

१. मीर अब्दुलरसूल 'निसार'—अकबराबादसे ही दिल्ली आये थे । मीर लिखते हैं:—“मेरे मस्बिरेसे शेर कहते हैं ।” “बहुत आरास्ता-पैरास्ता, संजीदा और समझदार हैं । मैं इनके तौर-तरीक़से बहुत खुश हूँ ।”

काव्यका उदाहरण—

जो है याक्रूब यूसुफ़ देखना मंज़ूर आँखोंसे ,
तो इतना फूटकर मत रो कि जाये नूर^१ आँखोंसे ।

२. मोहम्मद मोहसिन 'मोहसिन'—“मीर”के भतीजे थे । काव्यका उदाहरण—

क्या जानिए वह शोख़ किधर है किधर नहीं ,
हमको तो तन-बदनकी भी अपनी खबर नहीं ।

३. वृन्दावन 'राक्लिम'—पहिले 'मीर' के शिष्य थे, बादमें 'सौदा'के पास चले गये । काव्यका उदाहरण—

ऐ बाग़बाँ ! नहीं तेरे गुलशनसे कुछ गरज़ ,
मुझको क्रसम है छेड़ूँ अगर बर्गोबर कहीं ।
इतना ही चाहता हूँ कि मैं और अन्दलीब^२ ,
आपसमें दर्देदिल कहें टुक बैठकर कहीं ।

४. मियाँ जगन—काव्यका एक ही उदाहरण, नकातुश्शुअरामें मिलता है :—

इस दिल मरीज़े इश्क़को आज़ार ही भला ,
चंगा हो तो सितम है, यह बीमार ही भला ।

५. तजल्ली—मीर मोहम्मद हुसेन नाम था । बेगम बाग़, चाँदनी चौक, दिल्लीमें रहते थे । मीरके भाँजे और दामाद थे । काव्यका उदाहरण—

मेरी वफ़ाये तुझे रोज़ शक़ था ऐ ज़ालिम !
य' सर यह तेरा है, ले अब तो एतबार आया ।

६. जान—जानअली नाम था । काव्यका उदाहरण—

जिक्र उस जुल्फकी दराजीका ,
सुबहसे ताबशाम होता है ।

७. शकेबा—शेख गुलाम हुसेन । काव्यका उदाहरण—

नीम बिस्मिल उसने गर छोड़ा शकेबा^१ गम नहीं ,
पर यह गम है एतबारे दस्ते क्रातिल उठ गया ।

८. चुत्क—मिर्जाअली नाम । हैदराबादकी तरफके रहनेवाले थे ।
काव्यका उदाहरण—

बढ़ाया क्रिस्सए संबुल सबाने हद लेकिन ,
फिसाना जुल्फका तेरे बहुत दराज रहा ।

९. मच्चनू—राय भीमनाथके पुत्र थे, साधुप्रकृति, नंगे सिर, सनकी,
अपनेमें लीन-से रहनेवाले । काव्यका उदाहरण—

जिससे जी चाहे मिलो तुम, न किसीसे पूछो ,
मुझसे क्या पूछते हो, अपने ही जीसे पूछो ।

१०. मिर्जा—आका मिर्जा नाम था । काव्यका उदाहरण—

बालीसे जब वह फिर गया, ग़शसे खुली तब आँख ,
मुझ नारसाके तालए-खाबीदा^२ देखना ।

इनके अतिरिक्त रासिख, बेगम, नज़रने भी शिष्यता ग्रहण की थी ।
अपनी पुस्तक 'इन्तखाब मस्नवियाते मीर' में स्व० सर शाह मुहम्मद
सुलेमानने निम्नलिखित नाम भी दिये हैं :—

सखुन, इस्क, आर्ज़ू, अबू ।

१. सब करनेवाला । २. सुप्त भाग्य ।

५. मीरके कुछ विरोधी

मीरके तीक्ष्ण स्वभावके कारण, तथा द्वेष-वश भी, 'मीर' के कई विरोधी हो गये थे। इनमें दो-तीन प्रमुख हैं। १. खाक़सार—इन्होंने मीर के तज़किरे 'नकातुश्शुअरा'के उत्तरमें एक तज़किरा लिखा था। मीरने भी इनके काव्यपर आपत्तियाँ की हैं। जान पड़ता है, दोनोंको दोनोंसे चिढ़ था। १. 'आजिज़'—यह भी मीरके विरोधी थे और मीरने भी उनके कलामपर आक्षेप किये हैं। ३. बक्रा—यह 'मीर' और सौदा दोनों के विरोधी थे। एक बार मीरके लिए कहा—

पगड़ी अपनी सँभालिएगा मीर,
और बस्ती नहीं, य' दिल्ली है।

एक बार मीर और सौदा दोनोंपर फ़न्तियाँ कसीं—

मीर व मिर्ज़ाकी शेरखानीने
बस कि आलममें धूम डाली थी।
खोल दीवान दोनों साहबके,
ऐ 'बक्रा' हमने जो ज़ियारत की।
कुछ न पाया सिवाय इसके सखुन
एक तू-तू कहे है एक ही-ही।

मीर और सौदा एक दूसरेकी इज्जत भी करते थे और बीच-बीचमें परस्पर आक्षेप करनेसे भी नहीं चूकते थे।

६. मीरकालिक काव्य-गोष्ठियाँ

मुशायरेकी परम्परा भारतीय है। उर्दू मुशायरेका आरम्भ दिल्लीमें हुआ। खाँ आरज़ू इसके प्रारम्भकर्ता थे। उनके यहाँ काव्य-गोष्ठी हुआ करती थी जिसमें सौदा, मीर, दर्द, ज़ुरत इत्यादि सम्मिलित हुआ करते

थे । 'आजाद' के 'आबेहयात' से पता चलता है कि एक बार इस मुशायरे में सौदाने यह शेर पढ़ा—

आलूदए-क़तराते-अक़्र^१ देख जबी^२ को ।
अस्तर^३ पड़े भाँके हैं फ़लक^४ पर से ज़मींको ।

वस्तुतः यह फ़ारसीके कवि क़दसीके निम्नलिखित शेरका भावापहरण मात्र था—

आलूदए-क़तराते-अक़्र दीदः जबी रा ।
अस्तर ज़फ़लक मीं नगद रूपज़ामीरा ।

खाँ 'आज़ू' ने तुरन्त कहा—

शेरे सौदा हदीसे क़दसी है,
चाहिए लिख रखें फ़लक पर मलक ।

खाँ आज़ूका मतलब तो था कि तुमने क़दसीकी चोरी की है पर सौदाने दूसरा अर्थ लेकर समझा कि मेरी तारीफ़ कर रहे हैं, और खाँ आज़ूसे लिपट गये ।

एक दिन मीर गोष्ठीमें नहीं थे । वह खाँ आज़ूके घरपर ही रहते थे । जब बाहरसे आये तो आज़ूने सुनाया कि आज मिर्जा सौदाने बहुत उम्दा मतला पढ़ा—

चमनमें सुबह जो उस जंगजूका नाम लिया ।
सबाने तेराका आबे-रवाँसे काम लिया ।

१. पसीनेकी बूंदोंसे युक्त । २. ललाट, माथा । ३. तारा । ४. आकाश ।
५. एक शेर ।

‘मीर’ने सुनते ही यह मल्ला बनाकर पढ़ा—

हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया ।

दिल सितमज़दहको हमने थाम-थाम लिया ॥

खाँ आज़ूँ इसे सुनकर उछल पड़े और कहा—खुदा चश्मे बद से मह-फ़ूज़^२ रखे ।

खाँ आज़ूँके यहाँकी गोष्ठी बन्द हो गयी तब मीरददके यहाँ यह सिल-सिला शुरू हुआ । फिर वही महफ़िल मीरके यहाँ होने लगी । मीरअली नक़्की और हाफ़िज़ अलीमके यहाँके मुशायरोंका ज़िक्र भी मीरने किया है ।

धीरे-धीरे मुशायरेकी परम्परा लोकप्रिय और विकसित होती गयी और दूर-दूर तक फैल गयी । सैर, तमाशे, त्यौहार एवं उत्सवोंके अवसर पर प्रायः काव्य-गोष्ठियाँ होती थीं । इनके कारण उर्दूकी उन्नतिमें बड़ी सहायता मिली ।

७. मीर द्वारा किये गये संशोधन

डा० फ़ारूक़ीने नकातुश्शुअरा के आधार पर अन्य कवियोंकी रचनामें ‘मीर’ द्वारा किये संशोधनोंकी चर्चा की है । मीरने उक्त ग्रन्थमें जहाँ-तहाँ लिखा है कि अगर यह शेर मेरा होता तो इस तरह लिखता या अगर अमुक शब्दकी जगह अमुक शब्द होता तो ज्यादा अच्छा होता । इन संशोधनोंसे मीरके काव्यकी गहरी पकड़का पता चलता है ।

‘मजमूँ’का शेर है :—

मेरा पैगामे वस्ल^३ ऐ क़ासिद^४,

कहो सबसे उसे जुदा करके ।

१. बुरी नज़र । २. बचाये । ३. मिलन-संदेश । ४. दूत ।

मीरने 'कहो' को 'कहियो' करके शेर यें कर दिया :—

मेरा पैगामे बस्ल ऐ क्रासिद,
कहियो सबसे उसे जुदा करके ।

मज़मूँ :

मज़मूँका एक दूसरा शेर है जिसमें संशोधन किया गया है ।

मज़मूँ तू शुक्रकर कि तेरा नाम सुन रक्कीब,
गुस्सेसे भूत हो गया, लेकिन जल तो है ।

संशोधन :

मज़मूँ तू शुक्रकर कि तेरा इस्म^१ सुन रक्कीब,
गुस्सेसे भूत हो गया, लेकिन जल तो है ।

'यकरंग' (मुस्तफ़ाख़ाँ) का शेर है—

सच कहे जो कोई सो मारा जाय,
रास्ती हैगी. दार^२की सूरत ।

'मीर'ने 'सच'को 'हक्र' कर दिया । लिखा है—“ब एतक्राद फ़क़ीर
बजाय सच हक्रें हक्र अब्बल अस्त ।”

'यकरंग'का एक शेर है :—

इसको मत बूझो सजन औरोंकी तरह
मुस्तफ़ाख़ाँ आशना^३ यकरंग है ।

'मीर' लिखते हैं कि अगर मेरा शेर होता तो इस तरह लिखता :—

मत तलज्वुन^४ इसमें समझें आपसा
मुस्तफ़ाख़ाँ आशना यकरंग है ।

१. प्रतिद्वन्दी । २. नाम । ३. सुली । ४. प्रेमी । ५. बदल जाना ।

मीर सज्जाद अकबराबादीका एक शेर है :—

काफ़िर बुतोंसे दाद न चाहो कि यों कोई
मरजा सितमसे उनके तो कहते हैं हक़ हुआ ।

मीरने 'काफ़िर' को 'बातिल' कर दिया ।

उन्हींका एक और शेर है :—

हिज्जे शीरी^१ में क्योंकि काटेगा
हिज्जकी यह पहाड़-सी रातें ।

मीरने संशोधन किया—

किस तरह कोहकन^२ पे गुज़रेंगी,
हिज्जकी यह पहाड़-सी रातें ।

संशोधनसे शेर खिल गया है ।

इनाम उल्लाखाँ 'यक़ीन'का शेर है :—

मजनूँकी खुशनसीबी करती है दाग़ मुझको,
क्या पेश कर गया है ज़ालिम दिवानेपनमें ।

'मीर'का संशोधन देखिए :—

मजनूँकी खुशमआशी करती है दाग़ मुझको ।

'खाकसार'का शेर है—

खाकसार उसकी तू आँखोंके कहे मत लगियो,
मुझको इन खानाख़राबों ही ने बीमार किया ।

मीरने 'बीमार किया'की जगह 'गिरफ़्तार किया' कर दिया ।

इन संशोधनोंसे पता चलता है कि मीर उर्दूकी प्रकृति तथा काव्यकी मनोभूमिके कितने बड़े उस्ताद थे ।

१. शीरीं (ईरानकी प्रसिद्ध प्रेमिका) के वियोगमें । २. पहाड़ तोड़नेवाला अर्थात् शीरींका प्रेमी फ़रहाद ।

मीरकी रचनाएँ



मीरने पद्य और गद्य, उर्दू और फ़ारसी दोनोंमें, अपनी रचनाएँ की हैं। इनका विस्तार भी बहुत दूर तक है। पद्य-रचनाएँ तो अनेक प्रकारकी और अनेक रंगोंमें हैं। हम यहाँ उनकी संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

१. पद्य-रचनाएँ

पद्य-रचनाओंको अनेक भागोंमें विभाजित किया जा सकता है।
जैसे:—

क. ग़ज़ल

ख. क़सीदा

ग. मस्नवी

घ. स्फुट (रुबाई, वासोस्त, हफ़्तबन्द इत्यादि)

क. ग़ज़ल—ग़ज़ल मीरका अपना क्षेत्र है। इसके वह बादशाह हैं। इस मैदानमें उनकी बराबरीका दावा आज तक कोई न कर सका। ऐसा जान पड़ता है कि वह ग़ज़लगोईके लिए ही पैदा हुए थे। उनमें इतना दर्द, इतना सोझो-गुदाज है कि दिल रो-रोके रह जाता है। वह सीधे दिलको छूते हैं। छोटी बहरोंकी ग़ज़लें तो अत्यन्त उच्चकोटिकी हैं। इनमें उनके आँसू ही शेर बन गये हैं। डा० फ़ारूक़ीने ठीक ही लिखा है कि हर मिसरा खूनकी बूँद है और दिल प्रेम-पीड़ाकी अग्निशाला है। शब्दोंमें वह घुलावट है कि 'दिल बताशा-सा घुला जाता है जी।' इनकी ग़ज़लें अपनी सफ़ाई और बाँकपनके लिए उर्दू साहित्यमें प्रसिद्ध हैं। विचारोंका अनोखा तारतम्य, कहनेका ढंग और वेदनाकी अनुभूतिने इनकी ग़ज़लोंको सबसे

अलग ही रखा है। सौदा, जोक, मीरदर्द, गालिब कोई इन तक नहीं पहुँचता। इनका ढंग निराला है। इनकी नक़ल बहुतोंने की पर कोई वह बात पैदा न कर सका जो इनमें है।

ग़ज़लोंके छः दीवान हैं। और हर दीवानमें सैकड़ों ग़ज़लें हैं।

ख़. क़सीदा—उच्च कोटिका निर्वाचन, शानदार शब्दयोजना, बन्दिशकी चुस्ती, हृदयकी चंचलता और हाज़िरजवाबी, यह सब क़सीदेके लिए आवश्यक उपादान हैं। इन बातोंकी 'मीर' में कमी थी। वह अपनी सादगी, गहरी अनुभूति, गंभीरता और बाँकपनके लिए प्रसिद्ध थे, इसीलिए इनके क़सीदे बहुत कम हैं और जो हैं उन्हें भी उच्चकोटिका नहीं कहा जा सकता। इनकी ग़ज़लों और क़सीदोंको देखनेसे साफ़-साफ़ प्रकट होता है कि ग़ज़ल और क़सीदा दोनोंके क्षेत्र एक दूसरेसे बिल्कुल भिन्न हैं। 'क़सीदा' के बादशाह सौदा हैं। वह उनकी रंगीन तबीयतके सर्वथा अनुकूल हैं; जब मीरकी प्रकृति ही उसके प्रतिकूल है।

मुसाहिबों और अमीरोंकी प्रशंसामें क़सीदे न कहनेका यह भी एक कारण था कि इनकी सादगी, स्वाभिमान, इनकी सम्पूर्ण प्रकृति किसी मनुष्यकी चापलूसी एवं झूठी प्रशंसाके अनुकूल न थी। इन्हें अपनी ग़रीबी सह्य थी पर किसीके आगे झुकना मंजूर न था। खुद ही कहा है:—

मुझको दिमाग़ वस्फ़े^१ गुलो^२ यासमन^३ नहीं,
मैं जूँ नसीमेबाद^४ फ़रोशे चमन^५ नहीं।
कल जाके हमने 'मीर'के दरपर सुना जवाब,
मुद्दत हुई कि याँ वह ग़रीबुलवतन^६ नहीं।

१. गुण। २. फूल, प्रायः गुलाबके अर्थमें आता है। ३. चमेली।
४. शीतल, मन्द, सुगन्ध, प्रभाती, समीर। ५. चमन प्रकाशित करने-
वाला। ६. लावतन।

इसीलिए इनके क़सीदे बहुत थोड़े हैं और जो हैं भी वे शिथिल हैं। अपनी 'दीवाने-ग़ालिब' की टीकामें 'तबातबाई' ने तो यहाँ तक कहा है कि वह क़सीदा कहना जानते ही नहीं। 'तज़किरा गुलशने बेख़ार' में नवाब शोप्रताने भी कुछ ऐसी ही राय ज़ाहिर की है। 'शेरुलहिन्द' में ज़रूर इस क्षेत्रमें भी इनकी सफलताका किञ्चित् उल्लेख है पर वह निरर्थक है। यों तो कोई महाकवि जो कुछ भी लिखता है उसमें उसकी कुछ-न-कुछ विशेषता होती ही है। पर इतना तय है कि क़सीदे लिखने लायक़ तबीयत ही उन्होंने नहीं पाई थी, न उन्हें इस क्षेत्रमें सफलता मिली। किसीकी प्रशंसा वा निन्दामें इन्होंने जो भी लिखा, उसमें जोर नहीं है, रस नहीं है, मज़ा नहीं है। इन चीज़ोंके मज़े लूटने हों तो 'सौदा'के चमनकी सैर कीजिए—वहाँ आपको निराली सजावटके दर्शन होंगे, मादक-सुगंध प्राप्त होगा और नयनानन्ददायिनी सुषमा देखनेको मिलेगी।

ग. मस्नवी:—ग़ज़लके पश्चात् सबसे अधिक सफलता मस्नवीमें ही 'मीर'को मिली है। इस सफलताकी मर्यादाके सम्बन्धमें विद्वज्जनोंमें मत-भेद है। सर शाह सुलेमानने अपनी पुस्तक 'इन्तखाब-मस्नवियात-मीर'में शेरुल हिन्दके प्रणेता आचार्य अब्दुलसलाम नदवीका यह मत उद्धृत किया है:—

“वह मस्नवियातके मूज़िद^१ और उम्दा नमूना हैं। उनमें क़ुदरती अन्दाज़ है। उन्हींकी बदौलत मस्नवीको तरक्की हुई। मीर हसन और शौक़को उन्हींका मुक़ल्लिद^२ समझना चाहिए।”

यह कहना कि वह मस्नवीके आविष्कारक हैं, इतिहास-विरुद्ध और अप्रामाणिक है क्योंकि उनके काफ़ी पहिले दक्षिणमें मस्नवियाँ लिखी जा चुकी थीं। हाँ, मीरके कारण उत्तर भारतमें मस्नवी ज़रूर पनपी और उन्नत हुई। मीरहसन और शौक़को 'मीर' का अनुयायी वा अनुकरणकर्ता

कहना भी सत्य नहीं क्योंकि मीर हसन और शौक़ दोनों पूरी तरह लखनवी रंगमें रंगे हुए हैं। मीर हसन तो बचपनसे ही लखनऊ आ गये थे और वहीं के वातावरणमें उनका मानसिक गठन हुआ तथा उनकी कविता जगी इसलिए उनपर लखनऊकी जीवनशैलीका गहरा प्रभाव है और उनकी मस्नवी 'सेह्रलबयान' उसी रंगमें डूबी हुई है। 'शौक़' पर भी उसी परम्पराका प्रभाव है; जब मीर देहलवी जीवन-धारणाओंसे अत्यधिक प्रभावित हैं; अपनी राजलोंमें भी और मस्नवियों में भी।

छोटी-बड़ी, बुरी-भली, कुल मिलाकर, इन्होंने २५ मस्नवियाँ लिखी हैं:—१. मस्नवी दर जश्ने होली, २. मस्नवी दर बयाने होली, ३. मस्नवी दर तारीफ़े सग व गर्बा, ४. मस्नवी दर बयाने बुज़, ५. मस्नवी दर बयाने मुर्गबाज़ा, ६. मस्नवी दर हजो खाना खुद, ७. मस्नवी दर हजो खानए खुद कि बसबव शिद्ते बारा खराबशुद: बूद, ८. मस्नवी दर मज़म्मत बरशगाल कि बारा दर इमसाल ज़्यादा शुद: बूद, ९. मस्नवी दर हजो नाबहू, १०. मस्नवी तम्बीहुलजेहाल, ११. मस्नवी अज़दरनामा, १२. मस्नवी दर मज़म्मत आईनादार, १३. मस्नवी दरहजो अकवल, १४. मस्नवी दर बयान कज़ब, १५. मस्नवी शिकारनामा; १६. मस्नवी साक्कीनामा, १७. मस्नवी शोलए इस्क, १८. मस्नवी दरियाए इस्क, १९. मस्नवी इस्किया, २०. मस्नवी मुआमिलाते इस्क, २१. मस्नवी जोशे इस्क, २२. मस्नवी एजाजे इस्क, २३. मस्नवी निसंगनामा, २४. मस्नवी खाबोलयाल, २५. मस्नवी दर मज़म्मत दुनिया।

इनमें छः प्रेमाख्यान-प्रधान वा इस्किया मस्नवियाँ हैं, सात ऐसी हैं जिनका सम्बन्ध नवाब आसफ़ उद्दौला और उनके दरबारसे है। कुछ छोटी-छोटी ऐसी हैं जो मीरके अपने जीवन वा पारिवारिक वातावरणसे सम्बन्धित हैं। एक मस्नवी अपने मुर्गेके मसियेमें लिखी है। लिखते हैं "मेरा प्यारा मुर्गा था। बड़ा अच्छा था। एक दिन उसपर बिल्लीने आक्रमण किया। मुर्गेने बड़ी वीरतासे सामना किया पर अन्तमें मारा गया।"

मस्नवी बिलकुल मामूली है पर पढ़नेमें मनोरंजन जरूर होता है । इसमेंका एक शेर है:—

झुका बसूए कदम सर खरोसे बेजौंका ,
जमीपै ताज गिरा हुदहुदे सुलेमाँका ।

एक मस्नवी अपनी बिल्लीपर भी लिखी है उसमें कहते हैं कि “मेरे एक बिल्ली थी । बड़ी वफ़ादार और सन्तोषी थी । उसके बच्चे जीते न थे । एक बार पाँच बच्चे हुए और पाँचो जिये । तीन बच्चे लोग माँग ले गये । दो रहे । दोनों मादा थे । एकका नाम ‘मोनी’ रखा, दूसरेका ‘मानी’ । ‘मोनी’ मेरे एक दोस्तको पसन्द आई; वह ले गये । ‘मानी’ के स्वभावमें दीनता और सादगी बहुत थी, उसने फ़क़ीरका साथ न छोड़ा ।”

एक मस्नवीमें घरकी ख़राबी और बरसातकी तकलीफ़ोंकी शिकायत है । दोन-दुःखियोंपर इस मौसिममें जो गुज़रती है उसका स्वाभाविक वर्णन है । चित्र-सा खींच दिया है । इसी प्रकार निसंगनामेमें वर्षाकी यात्राका अद्भुत वर्णन है ।

यह ठीक है कि उनकी इश्क़िया-मस्नवियाँ अच्छी हैं क्योंकि इनमें उसी प्रेमवेदनाकी अभिव्यक्ति है जो ग़ज़लकी आत्मा है और जो मीरकी अपनी विशेषता है पर इस प्रकारकी मस्नवियोंमें सफलता प्राप्त करना अपेक्षाकृत सरल कार्य था क्योंकि फ़ारसी साहित्यमें इस प्रकारकी तथा रहस्यात्मक—रज़्मिया तथा बज़्मिया—मस्नवियोंकी लम्बी परम्परा रही है । उसमें कल्पनाकी उड़ानकी गुंजाइश रहती है । इसलिए इन मस्नवियोंकी अपेक्षा सामान्य और अन्य कवियोंके लिए अच्छे विषयोंपर उन्होंने जो मस्नवियाँ लिखीं उसके लिए उनकी प्रशंसा की जाती है । इस क्षेत्रमें वह यकता हैं । प्रेमास्थानक मस्नवियोंमें उनके प्रतिद्वन्द्वी भी हैं पर इस क्षेत्रमें वही वह हैं । इन विषयोंपर लिखना बड़ा कठिन था । इनमें यथार्थका बड़ा सुन्दर चित्रण हुआ है ।

उर्दू-मस्नवीको मीरने प्रगति दी । उसे एक रूप प्रदान किया । खाजा अलताफ हुसेन हालीने लिखा है:—

“अब तक उर्दू में जितनी इश्किया मस्नवियाँ हमारी नज़ारसे गुज़री हैं उनमेंसे सिर्फ़ तीन शख्सोंकी मस्नवी ऐसी है जिसमें शायरीके फ़रायज़^१ कमो-बेश अदा हुए हैं । अब्बल मीरतक़ी जिन्होंने ग़ालिबन सबसे अब्बल चन्द इश्किया-क्रिस्ते उर्दू मस्नबीमें बयान किये हैं । जिस ज़मानेमें ‘मीर’ ने यह मस्नवियाँ लिखी हैं उस वक़्त उर्दू ज़बानमें फ़ारसीयत बहुत ग़ालिब^२ थी और मस्नवीका कोई नमूना उर्दू ज़बानमें ग़ालिबन मौजूद न था और अगर एकाध नमूना मौजूद भी हो तो उससे चन्दा मदद नहीं मिल सकती । इसके सिवा अगर्चे ग़ज़लकी ज़बान बहुत मँज गयी थी मगर मस्नवीका रास्ता साफ़ होने तक अभी बहुत ज़माना दरकार था । इसलिए ‘मीर’की मस्नवियोंमें फ़ारसी तरकीबें, फ़ारसी मुहाविरोंके तर्जुमे और ऐसे फ़ारसी अलफ़ाज़ जिनकी अब उर्दू ज़बान मुतहम्मिल^३ नहीं हो सकती, उस अन्दाज़ से, जो आजकल फ़सीह उर्दूका मैयार^४ है, बिला शुबहे किसी क्रूर ज़्यादा पाये जाते हैं । नीज़ उर्दू ज़बानके बहुतसे अलफ़ाज़ व मुहाविरात, जो अब मतरूक^५ हो गये हैं, ‘मीर’की मस्नवीमें मौजूद हैं । अगर्चे यह तमाम बातें ‘मीर’की ग़ज़लमें भी कमोबेश पाई जाती हैं, मगर ग़ज़लमें इनकी ख़पत हो सकती है क्योंकि ग़ज़लमें अगर एक शेर भी साफ़ और उम्दा निकल आये तो सारी ग़ज़लको शान लग जाती है; वह उम्दा शेर लोगोंकी ज़बान पर चढ़ जाता है और बाक़ी पुरकुन^६ अशवारसे कुछ सरोकार नहीं रहता । लेकिन मस्नवीमें जस्ता-जस्ता^७ अशवारके साफ़ और उम्दा होनेसे काम नहीं चलता; ज़ांजीरकी एक कड़ी भी नाहमवार^८

-
१. कर्तव्य, उत्तरदायित्व । २. प्रधान, प्रभुत्वमय । ३. सहनशील । ४. कसौटी । ५. परित्यक्त । ६. सामान्य, भरतीके । ७. स्फुट, यत्र-तत्र । ८. असमान ।

और बेमेल होती है तो सारी जंजीर आँखोंमें खटकती है। पस इन असबाब से शायद मीरकी मस्नवी आजकलके लोगोंकी निगाहमें न जँचे मगर इससे 'मीर'की शायरीमें कुछ फ़र्क नहीं आता। जिस वक़्त मीरने यह मस्नवी लिखी है उस वक़्त उससे बेहतर ज़बानमें मस्नवी लिखनी इम-कान^१से ख़ारिज थी।....बावजूदे कि मीरसाहबकी उन्न ग़ज़लगोईमें गुज़ारी है, मस्नवीमें भी बयानके इन्तज़ाम और तसल्लुल^२को उन्होंने कहीं हाथसे जाने नहीं दिया और मताल्लिब^३को बहुत खूबीसे अदा किया है जैसा कि एक मशशाक^४ और माहिर^५ उस्ताद कर सकता है। इसके सिवा साफ़ और उम्दा शेर भी 'मीर'की मस्नवीमें बमुक़ाबिले उन अशआरके, जिनमें पुराने मुहाबिरे या फ़ारसीयत ग़ालिब है, कुछ कम नहीं हैं; सदहा अशआर 'मीर'की मस्नवियोंके आजतक लोगोंके ज़बानज़द चले आते हैं।

“अगर्चे मीरकी मस्नवियोंमें क्रिस्तापन बहुत कम पाया जाता है, उन्होंने चन्द सही या सहीनुमा वाक़आत बतौर हिकायतके सीधे-सादे तौर पर बयान किये हैं, न उनमें किसी शादी या तक्ररीब या वक़्त और मौसिमका बयान किया गया है, न किसी बाग़ या जंगल या पहाड़की फ़िज़ा या और कोई ठाठ दिखाया गया है। मगर जितनी मीरकी इश्क़िया मस्नवियाँ हमने देखी हैं वह सब नतीजाख़ेज और आम मस्नवियोंके बर-ख़िलाफ़ बेशर्मी और बेहयाईकी बातोंसे मुबर्रा^६ हैं।”

जो हो इसमें सन्देह नहीं कि मीरने उर्दू ग़ज़लके साथ उर्दू मस्नवी की भी बड़ी सेवा की है। ग़ज़लोंकी तरह उनकी मस्नवियाँ भी काफ़ी लोकप्रिय हुईं। नीचे कुछ लोकप्रिय शेरोंके नमूने दिये जाते हैं:—

नै काबे नै दैरके^७ क़ाबिल,
मजहब उनका है सैरके क़ाबिल।

X

X

-
१. संभावना। २. शृंखलाबद्धता। ३. अभिप्राय। ४. अम्यस्त।
५. निष्णात। ६. रहित। ७. मन्दिर।

न एक बूँद खुश ही हवा हो गयी ,
वह रंगीनि ए बाग क्या हो गयी ।

×

×

कहते हैं, डूबते-उछलते हैं ।
डूबे ऐसे कोई निकलते हैं ।

×

×

रफ़ता-रफ़ता हुआ हूँ सौदाई ।
दूर पहुँची है मेरी रुसवाई ।

×

×

आह जो हमदमी-सी करती है ।
अब तो वह भी कमी-सी करती है ।

×

×

होश जाता रहा निगाहके साथ ।
सब्र रुखसत हुआ एक आहके साथ ।

यथार्थ चित्रः—ऊपर मैं कह चुका हूँ कि दैनिक जीवनकी बातोंके बड़े ही यथार्थ चित्र मीरने अपनी मामूली विषयोंपर लिखी मस्नवियोंमें दिये हैं । जैसे अपने मकानकी हालत बयान करते हैंः—

कहीं सूरख है कहीं है चाक । कहीं शड़-शड़के ढेर-सी है खाक ।
कहीं घूँसोंने खोद डाला है । कहीं चूहेने सिर निकाला है ।
कहीं घर है किसी छछूँदरका । शोर हर कोनेमें है मच्छरका ।
कहीं मकड़ीके लटके हैं जाले । कहीं भोंगुरके बेमज़े नाले ।
कोने टूटे हैं ताले फूटे हैं । पत्थर अपनी जगहसे छूटे हैं ।
कड़ी तख़्ते सब ही धुँएँसे सियाह । उसकी छतकी तरफ़ हमेशा निगाह ।

कमी कोई सँपोलिया है फिरे । कमी छतसे हज़ारपाये गिरे ।
कोई तख्ता कहींसे टूटा है । कोई दासा कहींसे छूटा है ।
दबके मरना हमेशा मद्देनज़र । घर कहाँ साफ़ मौतका है घर ।

इश्क़िया-मस्नवियाँ निम्नलिखित हैं:—

१. शोलए-शौक़
२. दरियाए-इश्क़,
३. जोशे-इश्क़,
४. मुआमिलाते-इश्क़,
५. ऐजाजे-इश्क़,
६. खाबो-ख़याल ।

इनमें शोलए-शौक़ सर्वमतसे इनकी सर्वोत्कृष्ट मस्नवी है । एक सरल एवं संक्षिप्त कथा है और बड़ी मार्मिक है । इसमें परशुराम और उसकी

शोलए-

शौक़

प्रेमिका तथा पत्नीकी मार्मिक प्रेम-कथा है । इसका अन्त बड़ा काशणिक है । पता नहीं जिस कथाको आधार बनाया गया है वह कहाँ तक सच्ची है । पर परशुरामका ज़िक्र पुरानी कविता और कागज़-पत्रोंमें कई बार आया है जिससे जान पड़ता है कि वह पटना—अज़ीमाबाद—का निवासी था । ‘शौक़’ नीमवीने अपनी किताब ‘यादगारे-वतन’ में लिखा है कि परशुराम दरअसल मुसलमान था और उसका नाम मुहम्मद हसन था । वह मोहम्मदशाहके राज्यकालमें पटनेके छोटी पटनदेवी मुहल्लेमें रहता था । यह नवयुवक अच्छे शरीफ़ खानदानका था । फ़ारसी और हिन्दी (भाखा) का विद्वान् था । एक दिन गंगा किनारे टहल रहा था । वहीं एक महाजनकी लड़की, जिसका नाम श्यामसुन्दरि था, स्नान कर रही थी । दोनोंकी चार आँखें हुईं और दोनों एक दूसरे पर मोहित हो गये । अब मोहम्मद हसन का यह हाल कि उसके मुखड़ेके दर्शनके लिए, पागलकी भाँति, इसकी

गलीमें बार-बार चक्कर लगता, कभी घण्टों प्रतीक्षामें घाट किनारे टहलता रहता । धीरे-धीरे प्रेम घना हुआ । पागलपन बढ़ता गया । तब उसने संस्कृतका अध्ययन आरम्भ किया । अभ्याससे उसमें अच्छा पाण्डित्य प्राप्त किया; सैकड़ों श्लोक कण्ठस्थ किये; वेद एवं रामायण पढ़ा और तब योगीके वेशमें महाजनके यहाँ आने जाने लगा । अपना नाम परशुराम रखा । महाजनके यहाँ बड़ी आव-भगत हुई; सारा घर महात्माके चरणोंमें था । कुछ दिनों बाद श्यामसुन्दरिकां विवाह किसीसे निश्चित हुआ । परशुराम ही इस अवसरके लिए पण्डित नियत किये गये । ठीक शादीके दिन घरमें आग लगी । लोग अपनी-अपनी जान बचाकर भगे । श्यामसुन्दरि अपने कमरेमें बेहोश हो गिर पड़ी । परशुराम उसे गोदमें उठा घर लाये । उधर महाजनका सारा घर जलकर राख हो गया । उसे और उसके घरवालोंको विश्वास हो गया कि लड़की उसीमें जल-भुन गयी । उधर परशुरामने श्यामसुन्दरिको महाजनके पास पहुँचाना चाहा किन्तु सब रहस्य ज्ञात होने पर वह जानेको तैयार न हुई । तब विवाह करके दोनों प्रसन्नतापूर्वक रहने लगे । पर एकाध वर्ष बाद परशुराम छतरके मेलेसे लौट रहा था कि नाव भँवरमें पड़कर उलट गयी । खोजनेपर यह न मिला । लोगोंने समझा डूब गया । श्यामसुन्दरिके पास समाचार पहुँचा तो उसने सिर पीट लिया और प्राण त्याग दिये । उधर परशुराम डूबा नहीं, कुछ दूर जाकर किनारे लग गया । उसे श्यामसुन्दरिकी मृत्युकी ऐसी चोट लगी कि वह पागल हो गया । उधर नदी किनारे विचित्र बात दिखाई दी । आधीरातको एक तीव्र प्रकाश आकाशसे उतरता और परशुराम-परशुराम पुकारता । परशुरामने जब यह हाल सुना तो और बेचैन हुआ; नहा-धोकर कपड़े बदले, एक कागजपर कुछ लिखा, उसे सदरीकी जेबमें डाला और कुछ मित्रोंके साथ नौकासे नदीके दूसरे किनारे पहुँचा । आधीरात बीत जानेपर आकाशसे वह ज्योति उतरी, किनारों पर दौड़ी और उसका नाम लेकर पुकारने लगी । परशुरामकी विचित्र अवस्था हो गयी । बड़ी तेजीसे वह ज्योतिकी

ओर लपका, ओर मित्रोंके दौड़ते-दौड़ते यह गया, वह गया न जाने कहाँ
आँखोंसे ओझल हो गया। थोड़ी देर बाद जलके ऊपर दो तीव्र ज्योतियाँ
उभरीं और 'परशुराम-श्यामसुन्दरि', 'परशुराम-श्यामसुन्दरि' कहती एक
दूसरेकी ओर बढ़ने लगीं। जब दोनों मिल गयीं तो भक्से बिजलीका सा
प्रकाश हुआ और समस्त नदी-तल पर उजाला हो गया। फिर धीरे-धीरे
वह समाप्त हो गया और फिर कभी कोई ज्योति दिखाई न दी, न परशु-
रामके शवका ही कहीं पता चला। सदरी जो उसने नावपर उतार दी थी
उसकी जेबसे कागज़ निकला जिसे खाजा अब्दुल्ला 'तार्ईद' ने अपने पत्रके
साथ शाह आलमके बेटे शाहजादा मिर्जा जवान बख्त जहाँदार शाहको भेजा
था। यह पत्र 'तार्ईद'के पत्रोंके एक संग्रहमें मीरके समय प्रकाशित हो
गया था।

बटुआ सही हो या गलत, उसने अनेक उर्दू साहित्यकारोंको प्रेरित
किया। मीर, झक़रअली, शौक नीमत्री—मतलब कई आदमियोंने इसपर
काव्य एवं गद्य लिखे।

'दरियाए-इश्क' बहुत लोकप्रिय हुई और अब भी है। इसमें भी प्रेम-
कथा है। एक प्रेमी एक स्त्रीपर मोहित था। जब बदनामी होने लगी, छल-

दरियाए

इश्क़

छन्द रचकर प्रेमीको बीच नदीमें डूबा दिया।

तब प्रेमिका भी बीच धारमें 'वह कहाँ है'

कहती कूद पड़ी और डूब गयी। इसी प्रकार

प्रायः सभी इश्क़िया-मस्नवियाँ दुःखान्त हैं। 'खाबो-ख़याल'में इन्होंने अपने
प्रेम एवं दिवानेपनका हाल लिखा है। 'जोशे-इश्क़' विचारोंकी सूक्ष्मता
एवं बाँकपनसे अलंकृत है पर वह उतनी प्रसिद्धि न प्राप्त कर सकी।
'मामिलाते-इश्क़' बड़ी है किन्तु उच्चकोटिकी नहीं है।

सबसे बड़ी मस्नवी 'शिकारनामा' है जिसमें नवाब आसिफ़उद्दौलाके
शिकार और सैरका विस्तृत वर्णन है। इसमें बीच-बीचमें ग़ज़लें भी आ

गयी हैं पर इसमें बयानकी गूँथ खड़ाई नहीं है जो शोले-इस्क और दरियाए-इस्क इत्यादिमें है। इसमें फ़ारसीयत भी ज्यादा है।

घ. रबाइयाँ—जैसे गज़ल प्रेमाभिव्यक्ति और मस्नवी कथा वा उपाख्यान के लिए उपयुक्त है वैसे ही रबाई या कस्तुरी ताल्विक एवं आध्यात्मिक अनुभूतिके लिए सर्वोत्तम साधन है। फ़ारसीमें रबाईकी परम्परा यही बताती है। उमर खैयाम, फरीदउद्दीन अत्तार, अबूलखैर, सेहाबी इत्यादि इसके प्रमाण हैं। उर्दूमें इस परम्पराका पालन नहीं हुआ। 'मीर' ने भी सौ-सवा सौ रबाइयाँ कहीं, पर वे उस ऊँचे पाये-पर न पहुँच सकीं। इस दिशामें मीरसे अधिक सफलता खाजा मीरदर्दको प्राप्त हुई। आधुनिक उर्दू साहित्यमें तो रबाईने पर्याप्त प्रगति की है।

च. मसिये या मृत्युगीत—इसमें मृत व्यक्तिके गुणों एवं कार्योंका स्मरण किया जाता है। उर्दूमें ज्यादातर मसिये हज़रत हुसैन और उनके साथियों एवं स्वजनोंकी शहादतपर लिखे गये हैं। पहले मसिये अनेक छन्दोंमें लिखे जाते थे किन्तु 'जमीर' लखनवीने मुसद्दस (षट्पद) को ही मसियेके लिए विशेष छन्द बना दिया और अब उसीका रिवाज चल निकला है।

खोजसे अबतक 'मीर' के एकतालीस मसिये प्राप्त हुए हैं और सर-फ़राज़ कौमी प्रेस, लखनऊसे 'मरासीमीर' के नामसे प्रकाशित हुए हैं। ये मसिये बहुत उच्चकोटिके तो नहीं हैं पर उस ज़मानेके विचारसे, जब मसियागोईकी दशा अच्छी न थी, अच्छे कहे जा सकते हैं।

छ. बासोक्त—यह पद्यका एक विशेष प्रकार है जिसमें प्रेसी अपने प्रियतमकी बेबफ़ाई, अन्याय-अत्याचार, प्रतिस्पर्द्धीके प्रति अनुचित आसक्ति तथा विरह-वेदनाकी शिकायतें करता है। इसमें एक प्रकारका उलाहना होता है तथा छिपी धमकी कि यही हाल रहा तो हमें भी सम्बन्ध त्याग कर देना पड़ेगा। फ़ारसी भाषामें बहुशीने इसका आविष्कार किया परन्तु उर्दूने इस मामलेमें फ़ारसीको पछाड़ दिया और बहुत आगे बढ़ गयी।

यद्यपि दक्षिणमें मीरसे पहले ऐसी कविताएँ लिखी गयीं जिन्हें वासो-स्त कहा जा सकता है पर उत्तरमें इसे स्पष्टरूप देनेवाले मीर ही थे । 'आजाद' ने 'आबेहयात' में इन्हें ही वासोस्तका आविष्कारक बताया है । मीरके कुल चार वासोस्त मिलते हैं । दो काफ़ी अच्छे हैं । बादमें देहलीमें मोमिन तथा लखनऊमें जुर्रत, आतिश, अमानत और शौक़ने इसे बहुत ऊँचा उठाया ।

इसी प्रकार मुसल्लस (त्रिपदी), मुखम्मस (पंचपदी) तथा हफ़्त-बन्द लिखकर उन्होंने नई-नई दिशाएँ उर्दूको दीं ।

ज. फ़ारसी-काव्य—'मीर' ने फ़ारसीमें भी काव्य-रचना की है जिसमें चन्द खाइयाँ, एक अधूरी मस्नवी और ४८१ ग़ज़लें हैं । जो विशिष्टता इनके उर्दू काव्यमें है वही फ़ारसीमें भी पाई जाती है । वही दर्द, वही प्यास, वही बेचैनी, वही सोझोगुदाज़ फ़ारसी-रचनाओंमें भी है । उर्दूकी भाँति ही फ़ारसीमें भी इन्होंने अपनी राह खुद बनाई, किसीका अनुकरण नहीं किया ।

२. गद्य-रचनाएँ

मीरने गद्यमें भी कई पुस्तकें लिखी हैं पर ये सब फ़ारसी भाषाओं में हैं । इनके नाम निम्नलिखित हैं:—

१. नकातुशुअरा,
२. फ़ैजे-मीर,
३. जिन्ने-मीर

नकातुशुअरा:—उर्दू काव्य तथा समीक्षाके इतिहासमें इस पुस्तकका बड़ा महत्त्व है । इसमें उर्दूके प्राचीन कवियोंकी चर्चा है । इसे रेखतागोईका पहिला तज़क़िरा कहा जाता है । मीर अपनी प्रस्तावनामें खुद कहते हैं :—
“यह उर्दूका पहला तज़क़िरा है इसमें एक हजार कवियोंका हाल लिखूंगा । मगर उनको न लूँगा जिनके कलामसे दिमाग़ परीशान हो ।” हाल बहुत

संक्षेपमें दिये गये हैं। जिनको लिया है उनमेंसे भी चन्द ही हैं जो आक्षेपसे बचे हैं। उर्दूसे परिचय रखनेवाले जानते हैं कि वली उर्दूका सबसे पहला प्रसिद्ध कवि है। वलीका उर्दूमें वही दर्जा है जो हमारे यहाँ चन्दका है। उस बेचारेको भी आपने शैतान बना दिया है :—“वली, शायरीस्त अज शैतान मशहूरतर।”

बहुतोंको उनका यह आक्षेप खला। मीरखाँ ‘कमतरीन’ इस जमानेमें एक पुराने शायर थे। ‘मीरखाँ’ नाम, ‘कमतरीन’ उपनाम। बहुत वृद्ध थे। शाह आबरू और नाजीके देखनेवालोंमेंसे थे किन्तु इस दौरमें अभी तक मौजूद थे। पुराने आदमी थे। कुछ विशेष प्रतिभा न थी पर जो बात सूझ जाती उसे अवसरका विचार किये बिना कह डालते थे। कोई उनकी ज़बानसे बचा नहीं। वेश-भूषा भी इनकी दुनियासे निराला होती थी। एक बड़ी घेरेदार पगड़ी सिरपर बाँधते थे, लम्बा-सा दुपट्टा बल देकर कमरपर लपेटते थे, एक सोटा हाथमें रखते थे। उन दिनों प्रत्येक शुक्रवारको सैदुल्लाखाँकी चौक (दिल्ली) पर मेला लगता था। अपनी ग़ज़लोंको परचोंपर लिख वहीं जा खड़े होते। लड़के और शौकीन सहृदय रसिक दाम देते और एक-एक, दो-दो परचे खुशीसे ले जाते थे। उन्हें ‘मीर’ साहबकी उक्त टिप्पणी पर बड़ा क्रोध आया। एक पद्यमें ‘मीर’ साहबको खूब फटकारा और अन्तमें लिखा—

“वली पर जो सखुन लाये उसे शैतान कहते हैं।”

बादमें फतेहअली, मीर कल्लन, क़ुदरत उल्ला क़ासिम, शफ़ीक़ औरंगाबादी इत्यादिने भी मीरके दोष-दर्शनपर आक्षेप किये हैं पर आज तक इस ग्रन्थकी इज्जत और लोकप्रियता वैसीकी वैसी है।

नक्रातुश्शुअराका रचना-काल सन् १७५२ ई० है। तासीका कथन है कि मीरके तज़किरेके पूर्व कई तज़किरे मौजूद होंगे। कहा जाता है कि इमामउद्दीन, खाँ आरज़ू और सौदाने भी तज़किरे लिखे थे। पर आज वे

प्राप्य नहीं हैं इसलिए उनके सम्बन्धमें कुछ कहना कठिन है। आज जो तज़किरे प्राप्त हैं उनमें यह सबसे पुराना है। उर्दूमें समीक्षाका आरम्भ इसी पुस्तकसे होता है। यह ठीक है कि उस ज़मानेकी समीक्षा आजकी समीक्षा नहीं है, हो भी नहीं सकती। उस समय लोग अपनी राय रखते थे और उसे जोरोंसे प्रकट करते थे, तटस्थ वृत्ति वाली समीक्षा बहुत बादमें आई है। इस ग्रन्थसे उस युगकी अनेक बातों तथा सामाजिक स्थितियों एवं प्रेरणाओंपर प्रकाश पड़ता है।

फ़ैज़े-मीर—फ़ारसी भाषामें लिखी एक छोटी पुस्तक है। इसके रचना-कालका कुछ पता नहीं चलता पर इसे उन्होंने अपने पुत्र फ़ैज़अलीके लिए लिखा था। इसमें दरवेशोंके पाँच क्रिस्से हैं, जिनमें उनकी सिद्धियोंका आँखों-देखा हाल भी है। इस पुस्तकका महत्त्व यह है कि इससे 'मीर' के चरित्र तथा उनकी धार्मिक मान्यताओंपर प्रकाश पड़ता है। भाषा शक्तिसे भरी और सुलझी हुई है।

झिक्के-मीर—मीरके जीवनको समझनेके लिए इस पुस्तकका बड़ा महत्त्व है। इसमें उन्होंने आत्म-कथा लिखी है। यद्यपि इसमें कवि एवं कविता-विषयक बातें और घटनाएँ कम हैं किन्तु तात्कालिक सामाजिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमिकी जानकारीके लिए यह पुस्तक बड़े कामकी है। फिर इससे मीरके जीवनकी उठान, उनकी मानसिक उथल-पुथल, उनकी दृढ़ता, उनके चरित्र, तूफ़ानोंमें नावकी भाँति डूबती-उतराती, फिर भी आगे बढ़ती हुई जिन्दगीपर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। उनके पारिवारिक जीवनकी भी अनेक बातें इससे मालूम होती हैं। मुहम्मदशाहकी मृत्युसे लेकर गुलाम क़ादिर रूहेलाके लोमहर्षक अत्याचारों तककी ऐतिहासिक घटनाएँ विस्तार-पूर्वक इसमें मिलती हैं। मुग़लोंके उस पतन-युगमें दिल्ली तथा मराठों, सिखों, जाटों, अंग्रेज़ों और पठानोंकी प्रतिद्वन्द्विताके बीच कम्पित उत्तर भारतकी अवस्थाके जीवित चित्र इसमें दिखलाई पड़ते हैं।

दरियाए-इश्क़—अपनी मीस्नवी दरियाए इश्क़को मीरने फ़ारसी गद्यमें भी लिखा है। यह पुस्तक अभी तक छपी नहीं है। कुछ समय पहिले 'नैरंग' पत्रके 'मीर' अंकमें इसके कुछ भाग निकले थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मीरने गद्य, पद्य, गज़ल, ख़्बाई, क़सीदे, वासोख़्त, उर्दू फ़ारसी, मतलब अनेक रचनाएँ दोनों भाषाओंमें कीं। इससे उनकी व्यापक दिलचस्पी एवं प्रतिभाका ज्ञान होता है। उस कालके कदाचित् ही किसी दूसरे उर्दू कविकी साहित्य, समाज तथा उनकी स्वस्थ परम्पराओंके प्रति इतनी महती देन हो जितनी मीरकी है।



त्याख्या-भाग

कुछ शेर



‘मीर’के शेरका अहवाल कहूँ क्या ‘ग़ालिब’,
जिसका दीवान कम अज़ गुलशने-कश्मीर नहीं ।

—ग़ालिब

[१]

अबके जुनूँमें फ्रासला शायद न कुछ रहे,
दामनके चाक और गरेबाँके चाक में ।

गरेबाँ कुत्तेका वह भाग है जिसे गला कहते हैं । इसी भागमें लोग बटन या घुण्डी लगाते हैं । दामनका चाक कुत्तेके उस कटे हुए भागको कहेंगे जो नीचे कमरके पास, बगलमें, प्रायः जेबके नीचे होता है ।

दीवाना या पागल होनेपर उर्दू-साहित्यके कथित पागल प्रायः गरेबाँ फाड़ा करते हैं—‘गरेबाँ फाड़ता है तंग जब दीवाना आता है ।’ प्रायः सभी उर्दू कवियोंने दिल, गरेबाँ और जुनूँपर मज़मून बाँधे हैं पर मीरका शेर बहुत खूब हुआ है ।

मीर साहब कहते हैं कि मेरा पागलपन जिस तरह बढ़ रहा है यदि इसी प्रकार रहा तो इस बारके पागलपनके दौरमें शायद गरेबाँ और दामन-के चाकमें कुछ अन्तर न रह जाय—यानी नीचेसे ऊपर तक, दोनों मिल जायँ, मतलब पूरा वस्त्र फट जाय ।

इस शेरकी मौलाना हालीने बड़ी प्रशंसा की है । लिखते हैं कि गरेबाँ या दामन या दोनोंका चाक करना एक पिटा-पिटाया मज़मून है जिसे अत्यन्त प्राचीन कालसे लोग बराबर बाँधते आये हैं । “ऐसे चियेड़े हुए मज़मूनको मीरने बावजूद गायत^१ दर्जेकी सादगीके एक ऐसे अच्छे, निराले और दिलकश^२ असलूबमें बयान किया है कि उससे बेहतर असलूब तसव्वुर^३ में नहीं आ सकता । इस असलूबमें बड़ी खूबी यही है कि सीधा-सादा है, नेचुरल है और बावजूद इसके बिलकुल अनोखा है ।”

-
१. अत्यन्त, अन्तिम । २. चित्ताकर्षक । ३. अभिव्यक्ति-प्रणाली ।
४. कल्पना, ध्यान ।

इस सिलसिलेमें मौलानाने एक और घटनाका जिक्र किया है:—

“मौलाना आजुर्दकि मकानपर उनके चन्द अहबाब, जिनमें मोमिन और शेप्रता भी थे, एक रोज़ जमा थे। ‘मीर’का यह शेर पढ़ा गया। शेरकी बेइन्तिहा तारीफ़ हुई और सबको यह ख्याल हुआ कि इस क़ाफ़ियेको हर शख्स अपने-अपने सलीक़े और फ़िक्रके मुआफ़िक़ बाँधकर दिखाये। सब क़लम, दावात और काग़ज़ लेकर अलग-अलग बैठ गये और फ़िक्र करने लगे। इसी वक़्त एक और दोस्त वारिद^२ हुए। मौलानासे पूछा—हज़रत किस फ़िक्रमें बैठे हैं? मौलानाने कहा—‘कुल-हो-अल्लाहो^३’ का जवाब लिख रहा हूँ।”

शेरका सचमुच जवाब नहीं।

[२]

सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो,
अभी टुक़ रोते-रोते सो गया है।

मौलाना अब्दुलहक़ इस शेरकी प्रशंसा करते हुए लिखते हैं :—“यह शेर किस क़दर सादा है। इससे ज़्यादा आसान, आम और मामूली अल-फ़ाज़ और क्या होंगे? लेकिन अन्दाज़े-बयान दर्दसे लबरेज़ है और लफ़्ज़-लफ़्ज़से हसरत और यास^१ टपकती है। उर्दू क्या मुश्किलसे किसी ज़बानमें इस पायेका और ऐसा दर्दअंगेज़ शेर मिलेगा। एक दूसरी बात इस शेरमें क़ाबिल ग़ौर यह है कि जो शख्स दूसरोंको गुल न करने और आहिस्ता बोलनेकी हिदायत कर रहा है वह भी बीमारके पास बैठा है और उस-पर भी लाज़िम है कि यह बात आहिस्तासे कहे। इसके लिए यह ज़रूर

१. मित्रगण। २. प्रविष्ट। ३. क़ुरानकी एक सूरात है ‘कुल-हो-अल्लाहो-अहद’ अर्थात् ‘कह कि अल्लाह एक है।’ मतलब यह कि यह अद्वितीय अतुलनीय शेर है। ४. ओत-प्रोत। ५. निराशा।

है कि लफ़्फ़ ऐसे छोटे, सलीस और धीमे हों कि धीमीसे-धीमी आवाज़-में भी अदा हो सकें। अब इस शेरको देखिए कि लफ़्फ़ तो क्या, एक हर्फ़ भी ऐसा नहीं जो करस्त हो या होठोंके ज़रासे इशारेसे भी अदा न हो सकता हो।”

[३]

मक़दूर भर तो ज़ाब्त करूँ हूँ पै क्या करूँ,
मुँहसे निकल ही जाती है एक बात प्यारकी।

प्रेमीके हृदयकी अवस्थाको किस खूबीसे कहा है। सीधे-सादे शब्दोंमें एक दुनिया भर दी है। “अपनी शक्तिभर तो मैं दिलको दबाता हूँ, पर क्या करूँ प्यारकी एकाध बात निकल ही जाती है।”

इसी बातको एक और जगह भी कहा है—

हरचन्द मैंने शौक्रको पेनहाँ किया वले,
एक आध हरफ़ प्यारका मुँहसे निकल गया।

[४]

आजीवन मीर वियोगकी वेदनाके गीत गाते रहे। उनका काव्य ही एक प्रलम्ब आह है। इसीलिए आहके मज़मून उनकी कवितामें बार-बार आये हैं। अतिशयोक्ति खूब है। कहते हैं :—

करूँ जो आह ज़मीं वो ज़माँ जल जाय,
सपहरे^२ नीलीका यह सायबाँ जल जाय।

अर्थात् “यदि मैं आह करूँ तो सम्पूर्ण पृथ्वी और उसपरके जीव-जन्तु सब जल जायें, तथा यह आकाशका जो नील वितान है वह भी जल-कर खाक हो जाय।”

अच्छा ही हुआ, आपने इस आहूकी आजमाइश नहीं की। दयालु-प्रकृतिके सरसहृदय आदमीसे यह काम होता भी कैसे? चुनांचे खुद ही फ़रमाते हैं :—

मैं गिरिय-ए-खूनीको रोके ही रहा बर्ना,
एक दममें ज़मानेका यँ रंग बदल जाता।

“मैं इस खूनी आहूकी रोके ही रहा अन्यथा एकबार भी निकल जाती तो ज़मानेका रंग क्षणभरमें बदल जाता।”

वियोगकी अग्नि और आह ऐसी ही प्रबल होती है। हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी सभी भाषाओंके कवियोंने इसपर मज़मून बाँधे हैं। एक हिन्दी कविकी नायिका कहती है :—

विरहकी ज्वालनि सों बीजुरी जराइ डारौं,
स्वासनि उड़ाऊँ बैरी बेदरद बादरनि।

अर्थात् विरहकी ज्वालाओंसे बिजलीको जलाती हूँ और स्वाससे इन बैरी निष्ठुर मेघोंको उड़ा देती हूँ।

वियोगिनीकी वियोग-ज्वालासे ज़मानेका रंग बदलनेवाला एक दूसरा कवि (‘शंकर’, नाथूराम शर्मा) विनाश-क्रमका वर्णन करता है :—

‘शंकर’ नदी नद नदीसनके नीरनकी,
भाप बनि अंबर तें ऊँची चढ़ जायगी।
दोनों ध्रुव छोरन लौं पलमें पिघलकर,
धूम-धूम धरनी धुरी-सी बढ़ जायगी।
भारेंगे अँगारे ये तरनि तारे तारापति,
जारेंगे खमण्डल मैं आग मढ़ जायगी।
काहू विधि विधि की बनावट बचैगी नहिं,
जो पै वा वियोगिनीकी आह कढ़ जायगी।

विरहाग्निकी असह्यता प्रमाणित करते हुए श्रीहर्षने नैषधमें एक स्थानपर लिखा है :—

दहनजा न पृथुर्दवथुव्यथा,
विरहजैव पृथुर्यदि नेदृशम् ।

दहनमाशु विशन्ति कथं स्त्रियः,
प्रियमपासुमुपासितमुद्धुराः ॥

अर्थात् साधारण आगमें जलनेकी व्यथा कुछ विशेष नहीं है, विरह-जन्य-व्यथा ही असह्य वेदना है। तभी तो विरहिणी स्त्रियाँ (मृत) पतिसे मिलनेके लिए आगमें कूद पड़ती हैं ।

‘मीर’के आहों-सम्बन्धी शेर और भी हैं :—

आहोंके शोले जिस जा उठते थे मीरसे शब,
वाँ जाके सुबह देखा मुश्ते गुबार पाया ।

अर्थात् “जिस स्थानपर कल रात मीरके मुँहसे आहोंके शोले निकलते थे वहाँ आज सुबह जाकर देखा तो कुछ न था, सब जल गया था, बस मुट्टी भर धूल पड़ी हुई थी ।”

पैदा है कि पेनहाँ थी आतशनफ़सी मेरी,
मैं ज़ब्त न करता तो सब शहर यह जल जाता ।

अर्थात् “स्पष्ट है कि मेरी दाहकता प्रच्छन्न थी। मैं न रोकता तो यह सारा शहर ही जल जाता ।”

जौकने भी इसी ज़मीनपर कहा है :—

न करता ज़ब्त मैं नाला तो फिर ऐसा धुवाँ होता ।

कि नीचे आसमाँके एक नया और आसमाँ होता ।

बड़ी कृपा हुई जो दूसरे विश्वामित्र बननेकी इच्छाको आपने कार्यरूपमें परिणत होनेसे विरत रखा ।

मीर एक जगह और कहते हैं :—

तारे तो ये नहीं, मेरी आहोंसे रातकी,
सूराख पड़ गये हैं तमाम आसमानमें ।

अर्थात् “जिन्हें तुम तारे समझ रहे हो, ये वस्तुतः तारे नहीं हैं वह मेरी रातकी आहोंसे आसमानमें जो सूराख हो गये हैं वही चमक रहे हैं ।”

फिर कहते हैं :—

नीला नहीं सपहर, तुझे इश्तबाह^१ है,
दूदे जिगर^२से मेरे यह छत सब सियाह है ।

अर्थात् “आकाशको जो तुम नीला कहते हो, यह तुम्हारा भ्रम है । वस्तुतः मेरे दिलके धुएँसे यह सारी छत काली पड़ गयी है ।”

[५]

धोका है तमाम बहरे-दुनिया^३,
देखेगा पै होंठ तर न होगा ।

“यह संसार-सागर केवल धोका ही धोका है, भ्रममात्र है । यह दिखाई तो पड़ता है पर इससे तेरा ओठ कभी तर न होगा ।”

[६]

सब्ज होती ही नहीं यह सरजमीं,
तुरूमे खाहिश दिलमें तू बोता है क्या ?

मीर कहते हैं कि यह ज़मीन कभी हरी तो होती नहीं फिर तू उसमें इच्छाओंके बीज क्या बोता है ? (व्यर्थ बो रहा है, उससे अंकुर तो फूटनेकी सम्भावना है नहीं ।)

इस शेरके पहलूमें मीरका दर्द भरा है, उसकी बदनसीबी तड़प रही है। दूसरी ओर संसारकी असारताकी दिशामें भी संकेत है।

[७]

होगा किसी दीवारके सायेके तले 'मीर'
क्या काम मुहब्बतसे उस आरामतलबको।

कैसा गम्भीर एवं व्यथाजनक व्यंग्य है। मौलाना अब्दुलहक़ने इस शेरकी प्रशंसा करते हुए लिखा है:—“इस शेरका हुस्न शरह व बयानसे बाहर है। ‘आरामतलब’का लफ़्ज़ इसकी जान है। इस लफ़्ज़को नज़रमें रखिए और फिर इस शेरको ग़ौरसे मुलाहिज़ा कीजिए तो शेरका असली लुत्फ़ समझमें आ जायगा। एक शख्स जो मुहब्बतके कारण ऐशो-आरामपर लात मारके और घर-बार छोड़कर, बे-यारो ख़ानुमाँ, आबारा व सरगर्दाँ, महबूबकी दीवारके नीचे पड़ा है उसे ताना दिया जाता है कि आरामतलब है और ऐसे आरामतलबको मुहब्बतसे क्या काम ? जब यह आरामतलबी है तो क़यास करना चाहिए कि मुहब्बतकी मुसीबत क्या होगी ?”

[८]

जुज़ाँ मर्तबए कुल^१को हासिल^२ करे है आख़िर^३,
एक क़तरा^४ न देखा जो दरिया न हुआ होगा।

अर्थात् “अंश अन्ततोगत्वा पूर्णताकी श्रेणी अवश्य प्राप्त करता है। ऐसा एक भी क़तरा नहीं देखा जो दरिया न हुआ हो।”

दार्शनिक और आध्यात्मिक भाव सरल शब्दोंमें कह दिया गया है। जैसे जलबिन्दु सागरसे अभिन्न है, वैसे ही अंश पूर्णसे अलग होकर भी

१. अंश, खण्ड। २. पूर्णताका दर्जा। ३. प्राप्त। ४. अन्तमें।
५. बूँद।

अलग नहीं है । 'अपूर्ण' मुक्त होकर 'पूर्ण' हो जाता है । इस जमीनपर गालिबका भी एक शेर है ।

इशरते कतरा है दरियामें फ़ना हो जाना ।

दर्दका हृदसे गुज़रना है दवा हो जाना ॥

अर्थात् जलबिन्दुका गौरव नदीमें निमग्न हो जानेमें ही है (क्योंकि नष्ट होकर, निमग्न होकर वह अपनी सत्ताको विशाल बना देता है ।) इसीसे प्रकट होता है कि वेदनाकी सीमाका अतिक्रमण होना ही, दवा हो जाना है (क्योंकि जो लाभ दवासे होगा उससे भी अधिक 'दर्दके हृदसे गुज़रने' पर होगा ।)

विभिन्न दृष्टियोंसे जीवन-मरणके ऐक्यका, विशेषतः प्रेमजगत्में, मज़मून बहुतेरे कवियोंने बाँधा है । किसीने कहा है:—

मुहब्बतमें नहीं है फ़र्क़ जीने और मरनेका,
उसीको देखकर जीते हैं जिस काफ़िरपे दम निकले ।

[९]

एक शख्स मुझी-सा था कि था तुझपे वह आशिक़,
वह उसकी वफ़ापेशगी वह उसकी जवानी ।
यह कहके मैं रोया तो लगा कहने न कह 'मीर',
सुनता नहीं मैं जुल्मरसीदोंकी कहानी ॥

कोई खास बात नहीं है पर अपनी कामनाकी अभिव्यक्तिके लिए क्या सुन्दर ढंग निकाला है । कविने परदे-परदेमें बड़ी खूबीसे अपनी बात कह दी है—अपनी हृदय-व्यथा व्यक्त कर दी है । मज़ा यह कि इसमें कहीं माशूक़के अन्याय या उत्पीड़नका वर्णन नहीं, सिर्फ़ प्रेमीके यौवन और उसकी बुरी हालतकी ओर इशारा किया गया है । और यह कहके रोने लगना उसकी गहरी हृदय-व्यथाको प्रकट कर देता है । परदा होकर भी

यहाँ परदा नहीं रह जाता; प्रीच्छन्न होकर भी यहाँ अर्थ स्पष्ट है। 'माशूकके उत्तरने दर्दमें हज़ारों टीसों पैदा कर दी हैं। यह भीर साहबका खास कमाल है।'*

[१०]

गुल व बुलबुल बहारमें देखा ।

एक तुझको हज़ारमें देखा ॥

अर्थ स्पष्ट है। प्रियतमकी ही छवि फूल, बुलबुल और वसन्त सबमें दिखाई दे रही है। 'भीर दर्द' ने भी लिखा है :—

जगमें आकर इधर-उधर देखा,

तू ही आया नज़र जिधर देखा ।

परमात्मा अथवा प्रियतमकी व्यापकताका अनुभव इसमें है। बिहारीका प्रसिद्ध सोरठा याद आता है :—

मैं समुझ्यो निरधार, यह जग काँचो काँच सम,

एकै रूप अपार, प्रतिबिम्बित लखियत जहाँ ।

देखिए, बिहारीने वेदान्तके 'प्रतिबिम्बवाद' को काँचका उदाहरण देकर, कितनी सफलताके साथ समझाया है। कहते हैं, मैंने भली-भाँति देख लिया है कि यह संसार कच्चे काँचके समान है जिसमें एक ही रूप अपार रूपोंमें प्रतिबिम्बित हो रहा है।

भीरने एक स्थानपर और कहा है :—

यक जा अटकके रहता है दिल हमारा बर्ना,

सबमें वही हक़ीक़त दिखलाई दे रही है ।

फिर कहते हैं :—

हर कदमपर थी उसकी मंज़िल लेक,
सरसे सौदाए-जुस्तजू न गया ।

उसकी मंज़िल तो कदम-कदमपर थी पर दिमागमें जो खोजका पागलपन था, वह नहीं गया । उसीके कारण मैं जन्मभर उसे ढूँढ़ता ही रह गया ।

[११]

छाती जला करे है सोझे दरूँ बलासे,
एक आग-सी लगी है, क्या जानिए कि क्या है ?

मीरके कलेजमें दर्द है । वह छटपटा रहा है । साथी और डाक्टर प्रश्न करते हैं—क्या बात है भाई ! कुछ बताओ, तब तो इलाज किया जाय । मीर बेचारेकी तो जान निकल रही है । वह खुद नहीं समझ पाता । झुँसलाकर कहता है—“भाई ! जान मत खाओ । मैं क्या बताऊँ । आन्तरिक अग्निसे रात-दिन छाती जलती रहती है । कलेजमें एक आग-सी लगी हुई है । क्या मालूम यह क्या है ?”

शेरके प्रत्येक शब्दमें करुणा है । कलेजा मुँहको आ रहा है । प्रेमकी वह अवस्था है जब आदमी नहीं जानता कि यह बेचैनी, यह घबड़ाहट, यह जलन क्या है और क्यों है ?

लोगोंने कहा—हज़रत, कहीं दिल तो नहीं लगा बैठे । लक्षण तो कुछ ऐसे ही हैं ।

मीर उत्तर देते हैं—

हम तौरे-इश्कसे तो वाकिफ़ नहीं हैं लेकिन,
सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करे है ।

जिसके दिलमें कुछ भी रस है वह इसे पढ़कर झूम उठेगा । मीर कहते हैं कि भाई, हम प्रेमके तौर-तरीक़ेसे तो परिचित नहीं हैं पर हाँ, ऐसा लगता है जैसे सीनेमें कोई दिलको मला करता हो ।

‘मला करे है’ पद इस शेरकी जान है । वेदना शब्द-शब्दसे टपकी पड़ती है ।

इसी जमीनपर ‘शेप्रता’ का भी शेर है :—

शायद इसीका नाम मुहब्बत है ‘शेप्रता’,
एक आग-सी है दिलमें हमारे लगी हुई ।

‘शायद’ शब्दने इस शेरमें एक चमत्कार पैदा कर दिया है । कवि प्रेमकी उस अवस्थामें है जब कुछ-कुछ रोगके विषयमें उसे अनुमान हो रहा है ।

[१२]

कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह ,
कल ‘मीर’ खड़ा था याँ, सच है कि दिवाना था ।

पागलपनका कैसा सफल चित्र इस शेरमें मिलता है । कल मीर यहाँ खड़ा था । किसीसे कुछ कहता, फिर किसीका मुँह ताकता । सच है, वह पागल हो गया है ।

भाषा कितनी सरल और मँजी हुई है ।

[१३]

परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सबोंकी ख़ुदा कर चले ।

शत-शत श्रुतियाँ चिल्लाकर कहती हैं कि शुद्ध ब्रह्म निराकार है किन्तु उस परम तत्त्वका सम्यक् रहस्य हृदयंगम होनेके पूर्व साधक क्या करे ? मानव सदैव सरल आलम्बनोंकी खोज करता है । अपनी खोजमें ही उसने मूर्ति-पूजाको प्राप्त किया । किसी रुचिकर रूपमें कल्पना करके उसकी उपासना ही मूर्तिपूजाका रहस्य है । साकार, दृश्य, इन्द्रियलब्ध वस्तुके प्रति सामान्यतः मनुष्यका आकर्षण जितना ठोस और स्वाभाविक होता है, उतना निराकारके प्रति सम्भव नहीं । इस प्रकार मूर्तिकी उपा-

सना करके हम धीरे-धीरे उसके अधिकाधिक निकट होते जाते हैं जिसकी वह मूर्ति है। धीरे-धीरे हमारे स्नेहका विकास होता है और अन्तमें जब प्रेम प्रौढ़ताको प्राप्त होता है तब मूर्तिकी सत्ता क्षीण होने लगती है और सान्निध्यजन्य प्रणयभूत ध्यानमें विलीन हो जाती है। इस प्रकार सच्चा मूर्तिपूजक मूर्ति और आराध्य दोनोंका ऐकात्म्य अनुभवकर आराध्य—भगवान्—के सगुण रूपका साक्षात्कार करता है। इस साक्षात्कारके पश्चात् उसे आराध्य सर्वत्र दिखाई देता है और निर्विकार, निराकार ब्रह्म की प्रतीति होती है। फिर वह अपने एवं आराध्यके अभेदत्वका अनुभव करता है। इस प्रकार मूर्तिपूजककी आनन्द-धारा वेदान्तके 'अहं ब्रह्मास्मि' में मिल जाती है।

मान लीजिए, मैं करुण वात्सल्य प्रकृतिका आदमी हूँ। अपनी भावनाओंके अनुकूल मैंने एक पाषाण-मूर्तिका निर्माण एवं उसमें प्राण-प्रतिष्ठा कराई। मैं उसकी उपासनामें लीन हुआ। धीरे-धीरे मेरी भक्ति-सरितामें तरंगें उठने लगीं। आनन्दकी अधिकाधिक वृद्धि होते-होते मेरा प्रणय प्रगाढ़ होने लगा। ध्यान करते-करते मेरी अनुरक्ति उससे सघन होती गयी; तन्मयता आने लगी। थोड़ी देरके लिए संसारका लोप हुआ। जब ध्यानका आवेग कम हुआ, आँखें खुलीं तो देखता हूँ कि जिसका ध्यान अभी तक कर रहा था, वही तो सामने है (याद रहे भक्तिकी प्रबलतामें यह बात भूल जाती है कि पाषाण-मूर्तिके आगे बैठा हुआ हूँ)। फिर थोड़ी देर बाद शंका उठती है कि नहीं जी, यह कल्पित पाषाण-मूर्ति है जो मैंने बनवाई थी। कभी मूर्तिमें उपास्यकी प्रत्यक्ष प्रतीति होती है। (उस समय पाषाण-मूर्तिकी सत्ता विस्मृत हो जाती है) और कभी पाषाणरूप दृष्टिगोचर होता है। यह मूर्तिपूजाबलम्बित भक्तिकी प्रथम श्रेणी है (जिसमें कभी प्रत्यक्ष प्रतीति होती है, कभी अप्रत्यक्ष और आरोपित)। इसके पश्चात् प्रेम और प्रौढ़ एवं धनीभूत होता है। धीरे-धीरे पाषाण-भाव सुप्त और लुप्त होने लगता है। इस विकासका अन्त उस समय होता है

जब मूर्ति में पाषाणत्वकी जरूरत भी अनुभूति शेष नहीं रहती। यह मूर्ति और उपास्यकी अभेदावस्था है। साधन साध्य हो जाता है। तब वह मूर्ति बोलती है, हँसती है।

इसी प्रकार किसी मनुष्यको प्रेम करके भी परमतत्त्वको प्राप्त किया जा सकता है। मूल वस्तु प्रेम है। सब कुछ उस प्रेमको ग्रहण करनेकी हमारी शक्तिपर निर्भर है। कुछ उस प्रेमको बासना एवं भोगमें परिवर्तित कर देते हैं, दूसरे हैं जो उसे जीवनका अमृत बना लेते हैं और उससे अपरिमित शक्ति एवं ओज प्राप्तकर साधना-पथमें बढ़ जाते हैं। मीरने इसी मानव-प्रेमके विराट् संवेदनका चित्रण उक्त शेरमें किया है। कहते हैं:—“ऐ बुत (प्रियतम) ! मैंने तेरी पूजा इस सीमा तक की है कि तुझे सब लोगोंकी दृष्टिमें खुदा-परमात्मा-बना दिया है !”

[१४]

उसे ढूँढ़ते ‘मीर’ खोये गये,
कोई देखे इस जुस्तजूकी तरफ़।

मीर कहते हैं कि मैं ढूँढ़ने तो उसे चला था पर स्वयं ही खो गया। मला कोई मेरी इस खोजको तो देखे !

पता उसका लगाने चले थे पर अपनी ही सत्ता खो बैठे। वेदान्तका तत्त्व इस शेरमें आ गया है।

ब्रह्मकी अनन्त सत्तामें मिल जानेकी प्रायः चार श्रेणियाँ हैं। जब भक्तिकी प्रबलता होती है तो मनुष्य परमात्मा (श्रेय) और अपने सम्बन्धको जिन शब्दोंमें प्रकट करता है उसे संस्कृतके दार्शनिक साहित्यमें ‘तस्यैवाहम्’ कहते हैं। इसका अर्थ होता है—‘मैं उसका हूँ’ (अहं तस्यैव)। इसके बादका दर्जा ‘तवैवाहम्’ है अर्थात् ‘मैं तुम्हारा ही।’ इसमें सम्बन्ध अधिक प्रत्यक्ष और सघन होगया है। प्रथम पदमें वह अन्यपुरुष में है और दूसरेमें सामने है। इसके बाद तीसरी श्रेणी आती है ‘त्वमेवाहम्’ अर्थात् “मैं तू ही हूँ।” अर्थात् जो मैं हूँ वही तुम हो। यह साम्यानुभूतिकी

अवस्था है । पर अभी मैं और तुम दोनों एक नहीं हैं, दोनोंमें भेद वर्तमान है । इसके बाद वह दर्जा आता है जिसमें साधक 'तुम' या 'मैं' मेंसे एकको भूल जाता है । यही सर्वोच्च अवस्था है । ग़ालिबने भी कहा है :—

बहुत ढूँढ़ा उसे फिर भी न पाया,

अगर पाया पता अपना न पाया ।

अर्थात् “ढूँढ़ते-ढूँढ़ते हैरान हो गया फिर भी उसे न पा सका और पाया तो अपना ही पता न रहा ।”

इसी ज़मीनपर, कुछ मिलता-जुलता मीरका एक और शेर है—

तेरी आह किससे खबर पाइए,

वही बेखबर है जो आगाह है ।

मीर साहब फ़रमाते हैं कि आह ! तेरा समाचार और पता किससे पूछें । जो तुमसे आगाह है, परिचित है, तेरा पता जान चुका है, वही बेखबर है ।

इसमें भी वही परमानुभूतिकी बात कही गयी है । उसको जान लेनेपर ज्ञाता बतायेगा क्या, जब वह स्वयं तल्लीन हो जायगा । जो उससे आगाह हो गया है, वह तो हमारे लिए बेखबर है । एक बेहोशी, एक दीवानगी उसपर छा गयी है । वह क्या बतायेगा ?

इसमें उसी 'तत्त्वमसि' अवस्थाकी परछाई है जिसकी अनुभूतिमें एक फ़ारसी सूफ़ीने कहा है :—

तनहास्तम तनहास्तम चे बुल अजब तनहास्तम ।

जुज़ मन न बाशद हेच शै तनहास्तम यकतास्तम ॥

अर्थात् “मैं अकेला हूँ । मैं ! क्या आश्चर्य है ! मैं एकदम अकेला हूँ । मेरे सिवा और कोई वस्तु है ही नहीं—मैं अकेला, बेजोड़, लासानी हूँ ।”

एक उर्दू कवि तो इससे भी आगे जाकर अपनेको परमात्माका उत्पत्तिकर्ता कहता है :—

मैंने माना देहकी हकने किया पैदा वले,
मैं वह खालिक हूँ मेरे कुनसे खुदा पैदा हुआ ।

अर्थात् “मैं मान लेता हूँ कि सृष्टिकी रचना ईश्वरने की है । पर मैं तो वह हूँ कि मेरे ‘हो’ शब्दके उच्चारणमात्रसे ईश्वरकी उत्पत्ति हुई ।”

मानवमें परमात्माके दर्शनके सम्बन्धमें ‘मीर’का एक शेर याद आ गया । इसी सिलसिलेमें लिख देता हूँ :—

सरापामें उसके नज़र करके तुम,
जहाँ देखो अल्लाह अल्लाह है ।

उसके नखशिखमें ध्यान देकर देखो तो सर्वत्र ईश्वर ही ईश्वर दिखाई देता है ।

[१५]

रुदनकी व्यर्थता—निष्फलता—पर मीरका एक दर्दनाक शेर है :—

ऐ गिरिया उसके दिलमें असर खूब ही किया,
रोता हूँ जब मैं सामने उसके तो दे है हँस ।

बेबसीका कैसा चित्र है ! ऐ रुदन ! तूने उसके दिलपर खूब प्रभाव डाला, मैं जब उसके सामने रोता हूँ तो वह हँस देता है ।

[१६]

प्यार करनेका जो खूबाँ हमपे रखते हैं गुनाह,
उन्से भी तो पूछिए तुम इतने क्यों प्यारे हुए ?

अर्थ स्पष्ट है । ‘प्यारे’ शब्द इस शेरकी जान है । इसमें शेर सादीके निम्नलिखित शेरकी छाया है :—

दोस्तां मनअ कुनिन्दम कि चरा दिल बुतो दादम,
बायद अब्वल बुतो गुप्तनकी चुनी खूब चराई ।

[१७]

शामसे कुछ बुझा-सा रहता है,

दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिसका ।

मीरका यह शेर बहुत प्रसिद्ध है । वियोगके चित्र बहुतोंने दिये हैं पर यह अप्रतिम है । कहते हैं :—शरीब आदमीके दीपकके समान हमारा दिल शामसे ही कुछ बुझा-बुझा-सा रहता है ।

शरीबोंके घरमें जो दीपक जलते हैं उनकी शिखा इतनी कम और ज्योति इतनी धीमी होती है कि जलते हुए भी वे बेजले और बुझे-से होते हैं । हमारे दिलकी भी वही हालत है । कैसा रूपक है ।

[१८]

क्यों कर तू मेरी आँखसे हो दिल तलक गया,

यह बहर^१ मौजखेजे^२ तो असरुल अबूर^३ था ।

मतलब यह है—“समझमें नहीं आता कि तू मेरी आँखोंके रास्ते दिल तक कैसे गया ? (निरन्तर अश्रुमयताकी ओर इशारा) यह तरंगित सागर तो पार करने योग्य न था ।”

कौन जाने वह किधरसे पहुँच जाते हैं ? पता भी नहीं चलता । ‘जौक’ का एक शेर है :—

खुलता नहीं दिल बन्द ही रहता है हमेशा,

क्या जाने कि आ जाता है तू इसमें किधरसे ।

अर्थात् ‘हमारा दिल तो सदैव (गमसे) बन्द ही रहता है (कभी खुलता नहीं, प्रसन्न नहीं होता) फिर तू न जाने किधरसे उस बन्द दिलमें घुस आता है !’

जरा हिन्दीके महाकवि बिहारीकी करामात देखिए :—

१. सागर । २. तरंगित, तरंगप्रय । ३. पार करनेमें कठिन ।

देख्यौ जागत वैसिये, साँकरि लगी कपाट ।
कित है आवत जात भजि, को जाने किहि बाट ॥

दोहमें शेरसे कहीं अधिक चमत्कार है । चारों ओरसे किवाड़ बन्द करके नायिका सो रही है । स्वप्नमें उसके प्रिय आते हैं । इतनेमें वह जग जाती है । जगकर देखती है कि किवाड़ तो वैसे ही बन्द है; उसमें साँकल उसी प्रकार लगी हुई है । न जाने वह किधरसे आते हैं और किस रास्ते भाग जाते हैं ।

[१९]

सौन्दर्यकी एक उपमा देखिए :—

खिलना कम कम कलीने सीखा है,
उसकी आँखोंकी नीमखाबी से ।

अर्थात् उनकी आँखोंकी नीमखाबी (अलसान, मस्ती) से कलीने धीरे-धीरे खिलना सीखा है ।

कली धीरे-धीरे खिलती है । अलसाई, उनींदी आँख भी मस्तीसे धीरे-धीरे खुलती है । उसीकी ओर संकेत है ।

[२०]

होश जाता नहीं रहा लेकिन,
जब वह आता है तब नहीं आता ।

अभी मेरा होश एकदम गुम नहीं हुआ है । चेतना बनी है; मैं चेतना-रहित नहीं हुआ हूँ पर हाय, जब वह आते हैं तभी होश नहीं रहता । तभी बेहोशी आजाती है ।

‘प्रसाद’का पद है :—

१. उनींदापन, अर्धस्वप्नावस्था ।

मादकता-से आये वे,
संज्ञा-से चले गये थे ।

वही भाव है । उनके आगमनसे प्रेमीपर मादकता छा जाती है और जानेपर होश आता है ।

[२१]

पूछा जो मैंने दर्दे मुहब्बतसे मीरको,
रख हाथ उसने दिलपै टुक अपने रो दिया ।

वेदनाका कैसा चित्र है । जो मैंने सहानुभूतिपूर्वक मीरसे उसका हाल पूछा तो अपने कलेजेपर हाथ रखकर टपटप आँसू बहा दिये ।

वेदना अकथ है । इसलिए मीर जवाब नहीं देता । चुपचाप द्रवित होकर रो पड़ता है और केवल संकेत करता है कि पीड़ा कहाँ है ।

[२२]

उसको तर्जे निगाह मत पूछो,
जी ही जाने है, आह मत पूछो ।

इसमें भी प्रियतमाकी आँखोंके जादूका वर्णन है । वह जादू जो अकथ है, कैसे कहा जा सकता है । मीरके कोई दोस्त हमदर्दी दिखाने उनके पास पहुँचे और पूछा कि 'आखिर उसकी आँखोंमें ऐसी क्या बात है, जो तुम यों पागल हो रहे हो ।' मीर क्या जवाब देते ? बार-बार पूछने-पर कलेजेका उच्छ्वास इस शेरके रूपमें निकल पड़ा—“भाई, मेहरबानी करके, उसकी तर्जेनिगाह, देखनेके ढंगके बारेमें कुछ न पूछिए ! आह ! उसे मेरा जी ही जानता है, बस पूछिए नहीं ।” ‘जी ही जाने है’ और ‘आह’ शब्दने शेरको वेदनाकी गहरी अनुभूति प्रदान की है ।

• [२३]

तेरे बालोंके वस्त्रोंमें मेरे,
शेर सब पेचदार होते हैं ।

उर्दू साहित्यमें प्रियतमके बालों, विशेषतः टेढ़ी-मेढ़ी जुल्फोंका खूब वर्णन है । प्रायः सभी कवियोंने उसपर कुछ-न-कुछ कहा है । बालों-को उर्दू कवि जितना पेचदार, उलझा, कह सकें उतना ही अच्छा माना जाता है ।

मीर कहते हैं कि तेरे बाल इतने पेचदार हैं कि उनकी प्रशंसामें मैं जो शेर कहता हूँ वही पेचदार हो जाता है ।

मीरकी ही एक उक्ति और है :—

आवेगो एक बला तेरे सर सुन कि ऐ सबा,
जुल्फे-सियह^१का उसके अगर तार जायगा ।

मीर साहब सबा (प्रभाती वायु) को सावधान कर रहे हैं कि होश-यार होकर बहा कर, वर्ना यदि किसी रोज़ उसके जुल्फे-सियह (काली जुल्फों) से पाला पड़ गया तो तेरे सिर एक बला आ जायगी ।

बालों, अलकों, जुल्फोंका सभी भाषाओंके कवियोंने वर्णन किया है । मीरने ही किसी शेरमें कहा है—“तू कैसा उद्दण्ड शिकारी है कि अपनी जुल्फोंमें मेरा तायरे-दिल (हृदय-पक्षी) फँसाये लिये जा रहा है ।”

किसी संस्कृत कविने कहा है :—

जानुभ्यामुपविश्य पार्णि निहितश्रोणिभरा प्रोन्नमद्-
दोर्वल्ली नमदुन्नमत्कुचतटी दीव्यनस्त्राङ्गावलिः ।
पाणिभ्यामवधूय कङ्कणभूणत्कारावतारोत्तरं
बाला नक्षति किं निजालम्भरं किं वा मदीयं मनः ॥

बिहारी कहते हैं:—

कच समेटि कर भुज उलटि, खये सीस पट टारि ।

काकौ मन बाँधै न यह, जूरौ बाँधनिहारि ॥

‘शृंगार-सप्तशती’कारने इस दोहेका संस्कृत दोहेमें यों अनुवाद किया है :—

उन्नमय्य बाहुद्वयं, कचपुञ्जं गृह्णाति ।

प्रियाकेशबन्धे मनः, कस्य न सा बध्नाति ॥

बिहारीका ही एक और दोहा है :—

छुटे छुटावैं जगत् ते, सटकारे सुकुमार ।

मन बाँधत बेनी बँधे, नील छबीले बार ॥

एक और संस्कृत कविका कथन है:—

कमलाक्षि ! विलम्ब्यतां क्षणं कमनीये कचभारबन्धने ।

दृढलम्नमिदं दृशोर्युगं शनकैरद्य समुद्धराम्यहम् ॥

कमलाक्षि ! जरा ठहरो । मेरी आँखें तुम्हारे केश-पाशमें जा फँसी हैं । धीरे-धीरे मैं उन्हें निकाल लूँ तब जूड़ा बाँधो । थोड़ी देर मुझपर कृपा करो नहीं तो ये उसीमें बँधी रह जायेंगी ।

[२४]

जिस दिनसे उसके मुँहसे बुरका उठेगा, सुनियो,

उस रोज़से जहाँमें खुरशीद फिर न भाँका ।

मीर साहब फ़रमाते हैं कि जिस दिन उसके मुँहसे बुरका (मुँह और शरीर ढकनेका वह वस्त्रावरण जो प्रायः मुसलमान स्त्रियाँ पहनती हैं) उठेगा, तुम सुनोगे कि उस दिनसे सूर्य फिर नहीं निकला ।

उसके मुँहको सूर्यको लज्जित करनेवाला बताया है पर बात अनूठे ढंगसे कही गयी है ।

सूरज क्यों न झाँकेगा ?

सूरजके न झाँकनेके दो कारण भीरके शेरसे निकलते हैं। पहला यह कि उसके 'मुखकी अनन्त ज्योतिके आगे अपनी ज्योतिकी मलिनताका अनुभव करके सूर्यको इतनी लज्जा आयेगी कि वह अपना मुँह फिर न दिखायेगा' और दूसरा यह कि 'उसकी अपार ज्योतिके कारण सूर्यका प्रकाश इतना क्षीण हो जायगा कि फिर साधारणतः वह लोगोंको दिखायी ही न देगा, लोग समझेंगे कि अब वह निकलेगा ही नहीं।'।

इस विषयपर हिन्दी और संस्कृतके कवियोंकी भी उक्तियाँ उपलब्ध हैं। 'रसनिधि' हिन्दीके एक प्रसिद्ध दोहाकार हुए हैं। कितने ही लोग उनके दोहोंकी बिहारीके दोहोंसे तुलना करते हैं। 'रतनहजारा' इनका प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

'रसनिधि' अपनी नायिकाकी मुख-ज्योतिको लेकर लिखते हैं:—

कुहूनिशा तिथिपत्र मैं, वाचन कौ रहि जाइ ।

तुव मुख-ससि की चाँदनी, उदै करति है आइ ॥

—भारतजीवन संस्करण, पृष्ठ २३, दोहा १९७

कवि कहता है—“पत्रमें कुहू-निशा केवल बाँचने भरके लिए रह गयी है, वस्तुतः वह कभी आती नहीं, क्योंकि तेरे मुखरूपी चन्द्रकी चाँदनी उदित होकर उसपर अधिकार जमा लेती है।”

चलिए रातके समय रास्ता चलनेवालोंको आराम हो गया। पर 'रसनिधि' केवल एक दिनकी बात कर रहे हैं; उनकी चाँदनी केवल एक दिनकी है, जब उसी ज़मीनपर बिहारीने प्रति दिन चाँदनीकी व्यवस्था कर रखी है:—

पत्रा ही तिथि पाइयतु, वा घर के चहुँ पास ।
नित प्रति पून्योई रहै, आनन-ओप-उजास ॥

—सालचन्द्रिका—आखनशाही क्रम—४८६

—बिहारी-बिहार, पृष्ठ १४५

अर्थात् “उस घरके आस-पास अब तिथियाँ केवल पत्रमें ही लिखी हुई दीख पड़ती हैं, क्योंकि नायिकाके मुखकी आभाके कारण वहाँ सदा ही पूर्णिमा बनी रहती है । (इसके कारण अन्य सब तिथियाँ केवल पत्रमें रह गयी हैं ।)

‘शृंगारसप्तशती’कार ने इस दोहेका संस्कृत अनुवाद यों किया है :—

तव गृहमभि नाऽपुस्तकस्तिथिं कोऽपि जानाति ।

यतः पूर्णचन्द्रानने पूर्णिमेव निशि भाति ॥

एक संस्कृत कविका चमत्कार देखिए—

तानि प्राञ्चि दिनानि यत्र रजनी सेहे तमिस्रापदं,

सा सृष्टिर्विरराम यत्रभवति ज्योत्स्नामयो नातपः ।

अद्यान्यः समयस्तथाहि तिथयोऽप्यस्या मुखस्योदये,

हस्ताहस्तिकया हरन्ति परितो राकावराकीयशः ॥

अर्थात् “वे दिन बीत गये जब रजनी तमिस्रापदको प्राप्त थी—काली होती थी । वह सृष्टि समाप्त हो गयी जब कि आतप ज्योत्स्नामय न था, धूपमें चाँदनी नहीं आती थी । यह तो कुछ दूसरा ही समय है । देखो न, उसके मुखके उदय होनेसे बारी-बारी सब तिथियाँ ‘राकावराकीयशः’—पूर्णमाके यशको—सब प्रकार लूटे लेती हैं ।”

कैसा चमत्कार है । अब तो दिन-रात पूर्णिमा ही है । अभी तक जितने कवियोंने कहा केवल रातके लिए कहा पर ‘सा सृष्टिर्विरराम यत्र भवति ज्योत्स्नामयो नातपः’ कहकर कविने धूपको भी चाँदनीमें परिवर्तित

कर दिया है—सूर्यके आतपपर भी नायिकाकी 'मुख-द्रुति' का वानिष पेण्ट कर दिया; सूर्यका भी मान-मर्दन हो गया ।

अब तुलना कीजिए ।

'रसनिधि'की नायिका बड़ी सुन्दरी है । 'कुहूनिसा' में चन्द्रमाकी अनुपस्थितिके कारण जब चारों ओर अन्धकार रहता है तब उसके 'मुख-ससि की चाँदनी' उदय होकर 'कुहूनिसा' की सत्ता ही मिटा देती है, उसे केवल पत्रामें बाँचनेके लिए रहने देती है ।

वास्तविक चन्द्रकी अनुपस्थितिमें यदि नायिकाके 'मुख-ससि' ने सच्चे चन्द्रकी मर्यादा प्राप्तकर ज्योति फैला दी तो क्या हुआ ? और तिथियाँ तो पड़ी हुई हैं । यह तो केवल एक दिनकी बात हुई ।

हाँ, बिहारीकी नायिका अलबत्ता जबर्दस्त है । उसके 'आनन-ओप-उजास' से 'बा घरके चहुँपास नितप्रति पून्योई रहै' और इस प्रकार 'पत्रा ही तिथि पाइयतु'—केवल पत्रेमें ही तिथियोंकी सत्ता रह गयी है; वहाँ सदा पूनो ही पूनो है ।

रसनिधिकी नायिका सीधी है, साफ़ है, अच्छी है । पर बिहारीकी उससे कहीं रसीली और सुन्दर है । संस्कृत कविकी नायिका बिहारीसे भी आगे है । उसने अपने मुखोदय-द्वारा, दिन हो या रात सदा समग्र संसारको अखण्ड चाँदनीसे ढक रखा है—केवल उस घरके चतुर्दिक् नहीं, सर्वत्र उसका राज्य है । दिन-रातका भेद नष्ट हो गया; धूपमें भी चाँदनी घुस गयी है ।

अब भीरकी ओर लौटिए । यह हज़रत दीन-हीन चन्द्रमापर हाथ न उठाकर सीधे 'खुरशीद'—सूर्यपर ही टूटे हैं । उनको विश्वास है कि प्रियतमा जिस दिन अपने मुखसे बुर्का उठा देगी, उसके बाद सुनोगे कि सूरज फिर दुनियामें झाँकने नहीं आया ।

संस्कृत कविकी रचनामें मामला बढ़ गया है । उसमें शक्तिके दुरु-पयोगकी भी किञ्चित् छाया है । फिर इतनी उड़ानके बाद भी ज्योत्स्ना

केवल आतपमें मिलकर रह गयी पर धूप और ज्योत्स्ना दोनोंका अस्तित्व बना रहा । मीरके कथनानुसार तो सूर्य बेचारा मुख-प्रकाशसे लज्जित होकर फिर झाँकनेका नाम ही न लेगा !

[२५]

मीर इन नीमझाब आँखोंमें ,
सारी मस्ती शराबकी-सी है ।

मीर साहब कहते हैं कि इन उनींदी आँखोंमें जो मस्ती है, वह ठीक शराबकी भाँति है । (शराबके प्रभावमें आँखें चढ़ जाती हैं, उनमें एक विशेष प्रकारका उनींदापन, मस्ती और लालिमा आ जाती है ।)

मीर तो यहीं तक रह गये परन्तु एक और उर्दू कविने इससे आगे बढ़कर कहा है:—

मयमें वह बात कहाँ जो तेरे दीदारमें है ,
जो गिरा फिर न कभी उसको सँभलते देखा ।

अर्थात् “शराबमें वह बात कहाँ जो तेरी आँखोंमें है । तेरी आँखोंके नशेमें जो एक बार गिरा कि वह फिर सँभलते—उठते—नहीं देखा गया ।”

हिन्दीका प्रसिद्ध दोहा है:—

अमिय, हलाहल, मदभरे, स्वेत, श्याम, रतनार ।

जियत, मरत, झुकि-झुकि परत, जेहि चितवत इक बार ॥*

* क्रमालंकार देखिए:—

अमिय	हलाहल	मदभरे
स्वेत	श्याम	रतनार
जियत	मरत	झुकि झुकि परत ।

तेरी इन स्वेत, श्याम, रक्तनारी आँखोंमें अमृत, विष और मद तीनों का ही विचित्र सम्मिश्रण हुआ है (क्योंकि) ये जिसको एक बार (प्यारसे) देख लेती हैं वह जीता, मरता और झुक-झुक पड़ता है !”

क्रमालंकारका इतना सरल पर उत्कृष्ट उदाहरण कदाचित् ही और कहीं देखनेको मिलेगा । शब्द-सौष्ठव, अर्थगांभीर्य, स्वभावोक्ति, अनुभव एवं अलंकारमयी योजना सबमें अनुठापन है ।

[२६]

जब नाम तेरा लीजिए तब चश्म भर आवे ,
इस ज़िन्दगी करनेको कहाँसे ज़िगर आवे ।

अतलस्पर्शी वेदनाका एक चित्र है । जब तेरा नाम लेता हूँ, जब तुम्हारी चर्चा होती है, तब आँखें भर आती हैं । जीवन बितानेको कहाँसे दिल लाऊँ ?

[२७]

जीमें था उससे मिलिए तो क्या क्या न कहिए ‘मीर’ ,
पर जब मिले तो रह गये नाचार देखकर ।

अनुभवकी वाणी है । मनमें तो बहुत-सी बातें थीं कि उनसे भेंट होगी तो न जाने क्या-क्या कहूँगा, कितनी बातें कहेगा पर जब वह मिले तो उन्हें लाचारीके साथ देखता ही रह गया, कुछ भी न कह सका ।

इसी बातको दूसरी जगह कहा है—

कहते तो हो यूँ कहते यूँ कहते जो वह आता ।
यह कहनेकी बातें हैं कुछ भी न कहा जाता ॥

भावनाके आधिक्यमें वाणी मौन हो जाती है । इसी बातको यहाँ कहा गया है ।

[२८]

हस्ती अपनी हुबाब^१की-सी है ,
यह नुमाइश सुराब^२की-सी है ।

मानव-जीवन ठीक वैसा है जैसे अपार सागरके तलपर बुलबुले होते हैं । बुलबुलेसे उपमा देनेमें कई खूबियाँ हैं । जो लोग प्रकृतिवादी हैं उनका कथन है कि विशेष प्रकारकी स्थितियोंके परस्पर संमिश्रणसे जगत्की भिन्न-भिन्न वस्तुएँ बनती हैं और उन्हींके संघर्षणसे नष्ट हो जाती हैं । इस प्रकार सृष्टिका कार्य अपने आप चला करता है । मनुष्यकी उत्पत्ति और विनाशका भी उनके मतसे यही उत्तर है । मानव-जीवनकी उपमा बुलबुलेसे देनेमें इन लोगोंके भी सिद्धान्तका खण्डन नहीं होता । जैसे पंचतत्त्वों तथा कुछ अन्य उपादानोंके विशेष स्थितिजन्य पारस्परिक संयोगसे मानव-जीवनका आविर्भाव तथा उनके अव्यवस्थाजन्य संघर्षणसे नाश होता है उसी प्रकार आकाश, वायु तथा जलके विशेष संयोगसे बुलबुलेकी भी उत्पत्ति होती है और उसमें जरा भी व्यतिक्रम होनेसे उसका अन्त हो जाता है ।

दूसरी विशेषता, बुलबुलेके उदाहरणमें, यह दीख पड़ती है कि जैसे बुलबुला सागरका अखण्ड और अभेदभाव-सूचक एक अंश है, वैसे ही मनुष्य भी अनन्त सृष्टिका अभेदभाव-सूचक जीव है । बुलबुलेमें जैसे अपार सागरका आन्तरिक तत्त्व सूक्ष्मरूपसे सन्निहित रहता है; छोटेसे एक बुलबुलेमें जैसे समस्त सागरका भाव हृदयंगम किया जा सकता है, मानव-जीवनमें भी उसी प्रकार अनन्त तत्त्वोंका अन्वेषण किया जा सकता है; सीमाबद्ध इस मानव-जीवनमें भी चिरन्तन, व्यापक शक्ति एवं असीम सत्स्वरूप विराट तथा उसके वैभवको प्रत्यक्ष कर सकते हैं । जैसे बुलबुला,

अलग होकर भी, वस्तुतः समुद्रसे अलग नहीं है वैसे ही मानव-सत्ता भी अनन्तसे भिन्न कुछ नहीं। “नेह नानास्ति किञ्चन”, “अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव । एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च” इत्यादि श्रुतियोंमें इसी रहस्यकी ओर संकेत है।

दूसरे चरणमें भीर कहते हैं—‘यह नुमाइश सुराबकी-सी है।’ यह दृश्य—प्रपंच मृगजल-भ्रमके समान है अर्थात् माया है। सुराब रहती कुछ है और दिखाई देती कुछ और है। कड़कड़ाती धूपमें प्याससे व्याकुल शिथिलदृष्टि मृग जब चारों ओर देखता है तो दूरकी शुष्क बालुकाराशि लहराते हुए जलके सदृश दीख पड़ती है। यह संसार भी एक सुराब है। जिस रूपमें हम इसे देख रहे हैं, वह इसका वास्तविक रूप नहीं है।

इसे समझकर ही अन्यत्र भीरने कहा है:—

चश्मे-दिल खोल उस भी आलमपर,
याँकी औकात खाबकी-सी है।

“जबरा अपने हियेकी आँखें उस दुनियाकी ओर खोल। यहाँकी अवस्था (जिसमें तू भूला हुआ है) तो स्वप्नवत् है।

स्वप्नमें हम जो चीजें देखते हैं वे रहती तो असत् हैं किन्तु स्वप्नकी अवस्थामें वे सच्ची ही मालूम पड़ती हैं, वही स्थिति इस दुनियाकी भी है।

[२९]

बारीक वह कमर है ऐसी कि हाल क्या है ।
जो अन्नलमें न आवे उसका खयाल क्या है ॥

कमरका पतला होना सौन्दर्यका लक्षण माना जाता है। उसकी बारीकीको लेकर उर्दू, हिन्दी, संस्कृतके कवियोंने बड़ी उड़ानें भरी हैं। भीर साहब कहते हैं कि वह कमर इतनी पतली है कि क्या कहा जाय ? भला जो बुद्धिमें, कल्पनामें ही न आवे उसका विचार करनेसे क्या लाभ ?

कमरकी सूकमताकी पराकाष्ठा है ।, 'जो अत्रलमें न आवे उसका खयाल क्या है' कहकर मीरने उतना कह डाला है जिसके आगे कोई कुछ कह ही नहीं सकता । बुद्धि या कल्पनासे ही कवि कुछ कह सकता है पर वह इनके परे है । तब उसकी बात क्या ?

इस जमीनपर अन्य कवियोंकी करामात भी देखिए । संस्कृतके महा-कवि पण्डितराज जगन्नाथ कहते हैं :—

जगन्मिथ्याभूतं मम निगदतां वेदवचसा-

मभिप्रायो नाद्यावधि हृदयमध्याविशदयम् ।

इदानीं विश्वेषां जनकमुदरं ते विमृशतो

विसन्देहं चेतोऽजनि गरुडकेतोः प्रियतमे !

और भी—

अनल्पैवादीन्द्रैरगणितमहायुक्तिनिबहै-

निरस्ता विस्तारं कचिदकलयन्ती तनुमपि ।

असत्ख्याति-व्याख्यादिकचतुरिमाख्यातमाहंमा-

ऽवलम्बे लम्बेयं सुगतमतसिद्धान्त-सरणिः ॥

अर्थात् बौद्ध दार्शनिकोंके शून्यवादको जब बड़े-बड़े प्रतिद्वन्द्वी विद्वानों (शंकर एवं वाचस्पति इत्यादि इसका खण्डन जोरोंसे कर गये हैं) की (अकाट्य युक्तियोंकी) मारसे दुनियामें कहीं जगह न मिली तो वह तुम्हारी (लक्ष्मीकी) कटिमें जाकर समा गया ।

पण्डितराज अपने ढंगके अनोखे कवि थे; उनकी शब्द-योजना, उनकी शैली, उनकी मधुरिमा और उनकी धारा उन्हींकी चीज है । ये विशेषताएँ एकत्र, संस्कृतके कदाचित् ही दूसरे किसी कविको प्राप्त हुई हों । भाषाके प्रवाह और वर्णनकी निर्भीकतामें तो कोई उनके सामने ठहर नहीं सकता । यह उसी निर्भीकताका उदाहरण है—जगज्जननीकी कटिपर भी कलम चलानेमें उन्हें हिचकिचाहट न हुई ।

‘बेङ्गटाध्वरि’ संस्कृतके एक प्रतिभाशाली, पर अपेक्षाकृत अप्रसिद्ध, कवि हुए हैं। यह ‘नीलकण्ठ’ (संस्कृतके प्रसिद्ध कवि) के सहपाठी थे। इनका समय १६४० ई०के आस-पास है। ‘लक्ष्मीसहस्र’ इनकी सबसे उत्तम पर क्लिष्ट रचना है। लक्ष्मीके ऊपर संस्कृत साहित्यमें जितने स्तुतिकाव्य हैं, कहा जा सकता है कि, यह उनमें सर्वश्रेष्ठ है। इसमें भी लक्ष्मीकी कटिका वर्णन मिलता है :—

परमादिषु मातरादिमं यदिदं कोषकृताह मध्यमम् ।

अमरः किल पामरस्ततो स बभूव स्वयमेव मध्यमः ॥

अत्यन्त क्लिष्ट पर चमत्कारपूर्ण रचना है। कवि कहता है :—‘हे देवि ! तुम्हारी कटि संसारके आदिभूत परमाणुओंसे भी सूक्ष्म है। यह मध्यभाग (कमर) परमादि (उत्तमोंमें भी उत्तम) वस्तुओंमें भी आदिम (श्रेष्ठ, उत्तम) है किन्तु अमर (कोषकार) को यह समझ कहाँ ? उसने ऐसी उत्तम कटिको मध्यम (नीच एवं मध्यमें मकार युक्त) कह डाला। वह यही समझता है कि यह मध्यम, परमादि (अन्त्य ‘म’कार संयुक्त) शब्दोंमें आदिम (आदि ‘म’कार-संयुक्त) है (अर्थात् जैसे परम चरम इत्यादि शब्दोंके अन्तमें ‘म’ है वैसे ही ‘मध्यम’ में भी है) उनसे इसमें विशेषता यह है कि यह आदिम है (क्योंकि इसके आदिमें भी ‘म’कार है।) देवि ! तुम्हारी ऐसी सर्वोत्तम कटिको मध्यम (नीच) कहनेका फल कोषकार अमरको खूब भोगना पड़ा। उसने तुम्हारी कटिको ‘मध्यम’ कहा, इसका फल यह हुआ कि वह स्वयं ही मध्यम (मध्य ‘मकार’ संयुक्त) हो गया। कहाँ तो वह पहले ‘अमर’ (देवता) था—स्वर्गमें सुख भोगता था कहाँ इस निन्दाजन्य पापका फल पाकर मध्यम (मानव लोकमें आकर मनुष्य) बन गया। देवि ! तुम्हारी शक्तिसे अपरिचित मदमत्त चला तो था तुम्हें ‘मध्यम’ (मध्य मकार युक्त) कहने पर वह स्वयं ‘मध्यम’ (अमर शब्दके मध्यमें ‘म’ है) हो गया। (तुम्हारा)

मध्यम (कटिभाग) तो मध्यमें मकारवाला नहीं हुआ (क्योंकि उसके मध्यमें तो 'म' न होकर 'ध्य' है) परन्तु अमर स्वयं मध्यम हो गया । इतना ही नहीं वह 'पामर' बन गया (क्योंकि देवलोकमें था, अब मनुष्य-लोकमें आकर देवत्वसे च्युत हो गया ।)

किलष्ट श्लेषकी बहार है । नैषधमें श्रीहर्षने भी कटिका अच्छा वर्णन किया है पर विस्तार-भयसे उसे छोड़ता हूँ । अब उर्दू-हिन्दी कवियोंकी करामात देखिए ।

उर्दूके प्रसिद्ध कवि स्वर्गीय 'अकबर' इलाहाबादी कहते हैं :—

कहीं देखा न हस्ती वो अदम का इश्तराक़ ऐसा,

जहाँमें मिस्ल रखती ही नहीं उनकी कमर अपना ।

अर्थात् "कहीं भाव और अभावका ऐसा संयोग दिखाई न दिया । उनकी कमरकी दुनियामें कोई बराबरी नहीं ।"

भूषण कहते हैं—

सोघेको अधार किसमिस जिनको अहार,

चारको सो अंक लंक चंद सरमाती हैं ।

—शिवा बाबनी

कमर इतनी पतली है जैसे—४—के अंकका मध्य भाग जो पड़ी रेखाओं के बीचमें दिखाया गया है ।

बिहारीने कहा है—

*बुधि अनुमान प्रमान सुति, किये नीठि ठहराइ ।

सूछम कटि परब्रह्म लौं अलख लखी नहिं जाइ ॥

*याज्ञवल्क्यने मैत्रेयीको ब्रह्म-साक्षात्कारके उपाय बताते हुए जो चार श्रेणियाँ बताई थीं, बिहारीने 'बुधि, अनुमान, प्रमान, सुति' कहकर उसी-का प्रतिपादन किया है । मूल श्रुति यों है—

'आत्मा वा अरे ब्रह्मः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः ।'

“वह सूक्ष्म कटि परब्रह्मके समान ‘अलख’ है। श्रुति (कान और वेद वाक्य) द्वारा सुनते हैं कि कमर है (श्रुति यह भी बताती है कि परब्रह्म है)। सुननेके बाद अनुमान करते हैं कि ऐसा हो सकता है या नहीं ? इसके बाद प्रमाण सोचते हैं कि कटिके बिना घड़ ठहरेगा किसपर ! (दूसरी ओर यह सोचते हैं कि संसारका आधार कौन है ?) ऐसा सोचकर उस ‘अलख’ (कमर और परब्रह्म) दोनोंको बुद्धि द्वारा निरन्तर अम्यास करके कल्पनाके बलपर स्थिर करते हैं। तब भी वह अलख ही है। परब्रह्म होते हुए भी जैसे दिखाई नहीं देता उसी प्रकार कमरका पता नहीं चलता।”

निश्चय ही बिहारीने पण्डितराजको भी पीछे छोड़ दिया है। कवि-श्रेष्ठ ‘शंकर’ ने कहा है:—

पासके गये पै एक बूँद हू न हाथ लगे,
दूर सों दिखात मृगतृष्णिकामें पानी है।
‘शंकर’ प्रमाण-सिद्ध रंगको न संगपर,
जानि परै अम्बरमें नीलिमा समानी है।
भावमें अभाव है अभावमें धौं भाव भरयो,
कौन कहै ठीक बात काहूने न जानी है।
जैसे इन दोउनमें दुविधा न दूर होत,
तैसे तेरी कमरकी अकथ कहानी है ॥

‘शंकर’ का यह कवित्त भी किसीकी उक्तिसे कम नहीं है। कहते हैं—दूरसे तो मृगतृष्णिकामें पानी दिखाई देता है। किन्तु पास जानेपर एक बूँद भी हाथ नहीं लगता। यह बात भी प्रमाण-सिद्ध है कि आकाशमें रंगका संयोग नहीं है परन्तु देखनेसे ऐसा मालूम पड़ता है मानो वह नीला है। जान नहीं पड़ता कि यह क्या बात है ? भावमें अभाव है या अभावमें भाव है ! जैसे आजतक ये दोनों बातें द्विविधामें पड़ी हुई हैं, वैसे ही तेरी

कमरका भी कोई निश्चय नहीं। उसकी कहानी 'अकथ' है। कोई क्या कहेगा ?”

‘चन्द्रशेखर’ कहते हैं—

जौ कहिये मनकी गति तो मन सों न रहै थिर एक घरी है ।
लोक कहै जिमि ब्रह्म है सूछम त्यों अनुमानि कै मानि परी है ।
देखि परै न कहूँ दरसै परसै परमानु लौं जानि परी है ।
भावतीकी कटि मैं करतार करी केहि भाँति धौं कारीगरी है ॥

सैयद गुलाम नबी (रसलीन) अपने ‘अंग-दर्पण’में कहते हैं—

सुनियत कटि सुच्छम निपट, निकट न देखत नैन ।

देह भये यों जानिए, ज्यों रसनामें बैन ॥

अपूर्व दोहा है। कहते हैं—लोगोंसे सुनता हूँ कि कटि निपट सूक्ष्म है किन्तु आँखोंसे तो कुछ दिखाई नहीं देता। तब ! तब क्या मान लें कि कटि है ही नहीं ? नहीं ऐसा तो हो नहीं सकता क्योंकि यदि कटि है नहीं तो घड़ इत्यादि ठहरे किसके सहारे हैं ? जरूर कटि है। तब फिर दिखाई क्यों नहीं देती ? जैसे रसनामें बैन है पर उसे देख नहीं सकते, वैसे ही देह होनेसे जान पड़ता है कि कमर भी है।

पटका बँधा रहा तो गुमाँ था हमें कि हो,
खुलनेसे खुल गया कि निशाने-कमर नहीं ।

—सईब

कहता है कोई बाल उसे कोई रगे-गुल,
कुछ मैं भी कहूँ, तेरी कमर जो नज़र आवे ।

—हैफ़

मादूमको क्योंकर कोई साबित करे अल्ला,
मज़मून कमर यारका उनक्रासे नहीं कम ।

—निजाम

तुम्हारे लोंग कहते हैं कमर है,
कहाँ है किस तरहकी है किधर है ?

—प्रबन्ध

यह भी उस नाजुक बदनको बार हो, |
गर कमर बाँधें नज़रके तारसे । |

—शोक

दीदे-कमरे-यारकी मुश्ताक हैं आँखें,
हस्तीमें तमाशाए-अदम महे-नज़र है ।

—आतिश

[३०]

हाय उसके शर्बती लबसे जुदा,
कुछ बताशा-सा घुला जाता है जी ।

कैसी मधुर शब्द-योजना है। सीधे-सादे शब्द हैं पर विदग्धतासे ऊपर-से नीचे तक भरे हुए। 'लब' (ओठ) के लिए शर्बती विशेषण भी कितना अच्छा हुआ है। इससे मधुरता और लालिमा दोनोंका काम निकल जाता है। "कुछ बताशा-सा घुला जाता है जी"—इस पदने तो शब्द ही कर दिया है। 'बताशा-सा जी घुलना' ! कितना बढ़िया ! चमत्कार देखिए—शर्बती लबसे अलग रहनेपर जी बताशा-सा घुला जाता है। 'शर्बत'से मिलनेपर बताशेको घुलना चाहिए किन्तु यहाँ उलटी बात है। उस शर्बतसे दूर रहकर 'बताशा' घुला जा रहा है।

[३१]

यह छेड़ देख हँसके रुखे-ज़र्दपर मेरे,
कहता है मीर ! रंग तो अब कुछ निखर चला ।

यह छेड़ और शरारत देखिए । मेरे पीले चेहरेको देखकर यह कहना कि मीर ! अब तो तेरा रंग कुछ निखर चला है ।

वहाँ जान जा रही है, यहाँ हँसी सूझ रही है ।

[३२]

आशिक हैं हम तो 'मीर'के भी ज़ब्तें इश्क़के,
दिल जल गया था और नफ़स लबपे सर्द था ।

ठण्डी आहपर क्या शेर कहा है ! हम मीरके प्रेमपर नियन्त्रण रखनेकी शक्तिपर मुग्ध हैं कि दिल जल गया था पर ओठोंपर साँस ठण्डी थी । 'जले दिलसे ठण्डी साँस' का निकलना काव्यका चमत्कार है ।

[३३]

बेखुदी ले गयी कहाँ हमको
देरसे इन्तज़ार है अपना ।

बेखुदी हमें न जाने कहाँ ले गयी है कि देरसे हम अपनी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

अनुभूत एवं गहरे भाव हैं ।

[३४]

शरारत-भरे बाह्य सौन्दर्यके चित्र देखिए । वह रातको आये हैं पर—

थी सुबह जो मुँहको खोल देता,
हर चंद कि तब थी एक पहर रात ।
फिर ज़ुल्फ़ोंमें मुँह छिपाके बोला,
अब होवेगी 'मीर' किस क्रदर रात ।
जुल्म है, क्रह है, क्रयामत है,
गुस्सेमें उसके ज़ेरे-लबकी बात ।

रातमें जब मुँह खोल देते हैं तब सुबह हो जाती है। फिर बालोंमें मुँह छिपा लेते हैं और अँधेरा हो जाता है। शरारतसे पूछते हैं—मीर, अब कितनी रात है ? क्रोधमें उनके ओठोंकी बात क्या कहें, क्यामत है।

[३५]

ओठोंके आमंत्रणशील सौन्दर्यपर कहते हैं:—

लाले खमोश अपने देखो हो आरसीमें
फिर पूछते हो हँसके मुझ बेनवाकी खाहिश !

अपने मौन लाल (रक्त हीरक ओठ, अघर) को दर्पणमें देखते हो, फिर भी मुझ दीनकी इच्छा पूछते हो ? (चुम्बनकी इच्छाको किस तरह प्रकट किया है ।)

[३६]

चालके सौन्दर्य एवं आकर्षणके बारेमें कहते हैं:—

क्या चाल यह निकाली होकर जवान तुमने, |
अब जब चलो हो, दिलको ठोकर लगा करे है । |

तरुणाई पाकर तुमने क्या चाल निकाली है कि जब चलते हो, दिलको ठोकर लगा करती है !

[३७]

वह दर्द-दिल नहीं तो क्यों देखते ही मुझको,
पलकें झुका लिया हैं, आँखें चुरा लिया हैं ।

अगर उनमें दिलकी व्यथा नहीं है, उनमें भी प्यारकी किरण नहीं है तो मुझे देखते ही उनकी पलकें क्यों झुक जाती हैं और आँखें क्यों चुराई जाती हैं ?

[३८]

किया जो अर्ज़ कि दिल-सा शिकार लाया हूँ;
कहा कि ऐसे तो मैं मुफ्त मार लाया हूँ ।

बदकिस्मत मीर बड़ी आशासे अपना दिल लेकर सरकारके दरबारमें नज़र करने गये थे । वहाँ जाकर बड़ी आरजू-मिश्रित एवं दीनतासे कहा कि “सरकार ! मैं आफ़तका मारा, आपकी नज़रोंका घायल हूँ । आपके लिए दिल-जैसा (बढ़िया) शिकार लाया हूँ । वह आपकी नज़र है !”

हुज़ूरने फ़रमाया—क्या अदना चीज़ लेकर आया । ऐसे न जाने कितने शिकार तो मैं मुफ्त, बिना परिश्रम, मार लाया हूँ । (तब तेरा दिल लेकर क्या करूँगा ?)

शेरके दूसरे पदमें, जो कि राजकीय उत्तर है—कितनी शोखी, कितना चुलबुलापन है । सीधे-सादे शब्दोंमें अपने त्याग और अपने दिलकी चोटका उल्लेख कर दिया है । ‘दिल-सा शिकार’ कहकर यह भी जता दिया कि मेरा दिल किसीके (नयन) बाणोंसे घायल भी हो चुका है । फिर यह भी ध्वनि निकलती है कि मैं तुम्हें ही इसके ग्रहण करने योग्य समझता हूँ, तुम्हीं इसको लो । इसके बाद प्रियतमके मुँहसे ‘ऐसे तो मैं मुफ्त मार लाया हूँ’ कहलाकर उनकी निष्ठुरता और परिहासभरी शोखीका चित्र भी खींच दिया है ।

[३९]

पलकोंसे रफ़ू उनने किया चाके-दिल ऐ मीर,
किस ज़ख़्मको किस नाज़कीके साथ सिया है ।

रफ़ू करना, किसी फटी हुई चीज़को तागे भरकर पूरा करनेको कहती हैं । बाक़ी अर्थ साफ़ है ।

[४०]

कहता है दिल कि आँखने मुझको किया खराब,
कहती है आँख यह कि मुझे दिलने खो दिया ।
लगता नहीं पता कि सही कौन-सी है बात,
दोनोंने मिलके 'मीर' हमें तो डुबो दिया ॥

दिलका कहना है कि मुझे आँखने चौपट किया और आँख कहती है कि मुझे दिलने खो दिया । दोनोंका झगड़ा चल रहा है । ठीक पता नहीं लगता कि बात क्या है ? पर इन दोनों (दिल और आँख) के झगड़ेमें मैं तो डूब गया ।

[४१]

हर सुबह उठके तुझसे माँगूँ मैं तुझीको,
तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दा नहीं है ।

एक प्रेमीके लिए इससे बड़ी कोई इच्छा नहीं हो सकती कि किसी भी अवस्थामें वह अपने प्रियतमको न भूले और सदा उसे ही पानेकी इच्छा करे । उसके लिए वही सब कुछ है । परमेश्वर है तो वही है, सृष्टिका लक्ष्य है तो वही है, माता-पिता, भाई-बहिन जो है वही है । वह उसे छोड़ परमात्माकी भी इच्छा नहीं करता । *और यदि वह परमात्माको मानता है तो उससे भी अपने प्रियतमको ही माँगता है । आशा हृथ कहते हैं :—

* मजनूँके सम्बन्धमें एक कथा कही जाती है । एक बार मजनूँने यह स्थिर करके कि मैं इन आँखोंसे लैलाके अतिरिक्त और कुछ न देखूँगा, आँखें मूँद लीं और बहुत दिन हो गये खोलीं नहीं । परीक्षार्थ परमात्मा स्वयं प्रकट हुए और कहा—'तू आँखें खोल और मेरी ओर देख ।' मजनूँने पूछा—'तू कौन है ?' आवाज आई,—'मैं परमात्मा हूँ ।' मजनूँने कहा—

सब कुछ खुदासे माँग लिया 'तुम्हको माँगकर,
उठते नहीं हैं हाथ मेरे इस दुआके बाद ।

मीर साहब भी फ़रमाते हैं कि "प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर मैं तुझसे तुझीको माँगता हूँ । तेरे अतिरिक्त मेरा और कोई प्रयोजन नहीं है । तेरे सिवा दूसरा और कुछ नहीं चाहता ।"

दूसरी जगह भी मीर कहते हैं :—

चाहें तो तुमको चाहें, देखें तो तुमको देखें,
स्वाहिश दिलोंकी तुम हो, आँखोंकी आरज़ू तुम ।

[४२]

पासे-नामूसे-इश्क़ था वर्ना,
कितने आँसू पलक तक आये थे ।

प्रेममें दिलपर कितना जोर डालना पड़ता है, उसे कितना दबाना पड़ता है । अन्दर व्यथा और बेचैनीका समुद्र लहरें मारता है; ऊपर हँसना-मुसकराना पड़ता है । आँखें भर-भर जाती हैं पर आँसू रोक लेने पड़ते हैं ।

मीर कहते हैं :—प्रेमकी बदनामीका ध्यान था अन्यथा न जाने कितने आँसू पलक तक आये हुए थे (जिन्हें मैंने रोक लिया ।)

‘मुझे परमात्मासे कुछ काम नहीं । मैं इन आँखोंसे लैलाको छोड़ किसीको नहीं देख सकता ।’ खुदाने कहा—‘मेरे लिए लोग न जाने कितना दुःख भोगते हैं, तब भी मैं मुश्किलसे मिलता हूँ और तू इन्कार कर रहा है ?’ तरह-तरहके प्रलोभन दिये जानेपर मजनूने यही कहा—“लैलाके अतिरिक्त मैं न तो किसीको चाहता हूँ, न जानता हूँ और न जानने या देखनेकी इच्छा ही रखता हूँ ।”

[४३]

आँखोंसे पूछा हाल दिलका,
एक बूँद टपक पड़ी लहूकी ।

वेदनाका कैसा चित्र है । हर शब्द व्यथासे गीला है ।

[४४]

सुबह तक शमा सिरको घुनती रही,
क्या पतिंगेने इल्तेमास किया ।

न जाने पतिंगेने क्या अर्ज किया कि शमा सुबह तक अपना सिर
घुनतो रह गयी !

रहस्यवादका स्पर्श है ।

[४५]

न कटती दुःक न होती जो फ़क़ीरी साथ उलफ़तके,
हमें जब उसने गाली दी है तब हमने दुआ दी है ।

मीर साहब कहते हैं कि “यदि प्रेमके साथ मुझमें थोड़ी फ़क़ीरी भी न
होती तो दिन न बीतते । उसने जब-जब गालियाँ दी हैं, मैंने उसे आशी-
र्वाद दिया है ।”

प्रेमी किसी भी रूपमें प्रियतमसे सम्बद्ध रहना चाहता है इसीलिए
उसे गालियाँ भी अच्छी लगती हैं । ‘प्रसाद’ने कितना बढ़िया कहा है :—

तेरे स्मृति-सौरभमें मृग-मन मस्त रहे,
यही है हमारी अमिलाषा सुन लीजिए ।
शीतल हृदय सदा होता रहे आँसुओंसे,
छिपिए उसीमें, मत बाहर हो भीजिए ॥

हो जो अवकाश कभी ध्यान आवे तुम्हें मेरा,
 ए हो प्राण-प्यारे ! तो कठोरता न कीजिए ।
 क्रोधसे, विषाद से, दया या पूर्व प्रीति ही से ,
 किसी भी बहानेसे तो याद किया कीजिए ॥

[४६]

कोई नाउमीदाना करते निगाह ,
 सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले ।
 कभी-कभी निराशापूर्ण आँखें तुमपर डाल दिया करते थे सो तुम
 अब हमसे मुँह छिपाकर जा रहे हो ?
 कैसी हसरत है ! कैसा दर्द है !

[४७]

हसरत उसकी जगह थी खाबीदा .
 मीरका खोलकर कफ़न देखा ।
 कैसा करुणापूर्ण चित्र है । मीरका कफ़न खोलकर देखा तो वह नहीं
 था, उसकी जगह उसकी हसरत निद्रामग्न थी ।

[४८]

मृत्युको वह क्षणिक विश्राम मानते हैं; वह जीवनका अन्त नहीं है:—
 मर्ग एक माँदगीका वक्रफ़ा है ,
 यानी आगे चलेंगे दम लेकर ।

एक जगह और कहते हैं :—

वक्रफ़ाए-मर्ग अब ज़रूरी है ,
 उम्र तय करते थक रहे हैं हम ।

कुछ इसी तरहका संकेत, उम्रके बारेमें भी है :—

यह जो मोहलत जिसे कहे हैं उम्र,
देखो तो इंतज़ार-सा है कुछ ।

[४९]

हुई है दिलकी महबियतसे यक़साँ याँ ग़मो-फ़रहत,
न मातम मरनेका है 'मीर' नै जीनेकी शादी है ।

मनुष्यकी आन्तरिक शक्तियोंके विकासकी सीमा सुख-दुःखकी सम-
अनुभूति ही है जब न आनन्दकी कामना हो, न शोककी ।

मीर साहब कहते हैं :—“चित्रकी असीम संलग्नतासे मेरे लिए दुःख-
सुख समान हो गये हैं । अब मुझे न तो मरनेका शोक ही है और न तो
जीनेका आनन्द ही है !”

[५०]

अत्यन्त दुःखमें, बहुत रोनेके बाद, वह अवस्था आती है जब रोना भी
नहीं आता । आँखें सूख जाती हैं; आँसू नहीं निकलते । इसीका बयान मीर
करते हैं :—

आगे दरिया थे दीदए-तर 'मीर',
अब जो देखो सुराब हैं दोनों ।

पहिले ये तर आँखें सरिता थीं, अब मरुभूमि हैं ।
विस्तार-भयसे थोड़े ही शेर दिये गये हैं ।



★

काल्य-भाग

★

ग़ज़लें

न हुआ पर न हुआ 'मीर' का अन्दाज़ नसीब ,
 'ज़ौक' यारोंने बहुत ज़ोर ग़ज़लमें मारा ।

—ज़ौक ।

[१]

था मुस्तआर^१ हुस्न से उसके जो नूर^२ था ,
 खुरशीद^३ में भी उस ही का ज़र्रा ज़हूर था ।
 पहुँचा जो आपको तो मैं पहुँचा खुदाके तई ,
 मालूम अब हुआ कि बहुत मैं भी दूर था ।
 आतिश^४ बुलन्द दिलकी न थी वर्ना ऐ कलीम^५ ,
 यक शोला बर्क^६ ख़िरमने सद कोहेतूर^७ था ।
 मजलिसमें रात एक तेरे परतो^८ ए बग़ैर ,
 क्या शमअ, क्या पतंग हर एक बे हुज़ूर था ।
 हम खाकमें मिले तो मिले लेकिन ऐ सपहर ,
 उस शोखको भी राह पै लाना ज़रूर था ।
 कल पाँव एक कासए^९ सरपर जो आ गया ,
 यकसर वह इस्तख़ान^{१०} शिकस्तोंसे चूर था ।
 कहने लगा कि देखके चल राह बेख़बर ,
 मैं भी कभू किसूका सरे पुर ग़रूर था ।
 था वह तो रश्के दूर बिहिश्ती^{११} हमीसे 'मीर' ,
 समझे न हम तो फ़हम^{१२} का अपने क्रसूर था ।

-
१. रियायत, उधार माँगा हुआ । २. प्रकाश । ३. सूर्य । ४. अग्नि ।
 ५. ईश्वरसे बातें करने वाला, हज़रत मूसा । ६. सौ कोहे तूर । कोहे तूर
 पर ही मूसाको ब्रह्मज्योतिके दर्शन हुए थे (ख़िरमनकी बिजलीका एक
 शोला शत-शत कोहेतूर जैसा था ।) ७. ज्योति, आभा । ८. खोपड़ी ।
 ९. हड्डी । १०. स्वर्गकी परियोंको लज्जित करनेवाली । ११. बुद्धि ।

[२]

गुल व बुलबुल बहारमें देखा ,
 एक तुझको हज़ारमें देखा ।
 जल गया दिल सफ़ेद हैं आँखें ,
 यह तो कुछ इन्तज़ारमें देखा ।
 आबलेका भी होना दामन गीर ,
 तेरे कूचेके ख़ारमें देखा ।
 जिन बलाओंको 'मीर' सुनते थे ,
 उनको इस रोज़गारमें देखा ।

[३]

इस ओहदे^१ में इलाही मुहब्बतको क्या हुआ ?
 छोड़ा वफ़ाको उनने मुरौवतको क्या हुआ ?
 उम्मीदवार वादये दीदार^२ मर चले,
 आते ही आते यारो क्रयामत को क्या हुआ ?
 बख़्शिशन^३ ने मुझको अत्रे करम^४ की किया ख़िजल^५,
 ऐ चश्म जोशे-अश्के नदामत^६ को क्या हुआ ?
 जाता है यार तेगबक़^७ ग़ैरकी तरफ़,
 ऐ कुश्तए-सितम^८ तेरी ग़ैरतको क्या हुआ ?

१. युग । २. दर्शनके आश्वासनके प्रत्याशी । ३. कृपावर्षा ।
 ४. लज्जित । ५. अनुतापजन्य अभु-प्रवाह । ६. तलवार हाथमें लिये ।
 ७. अत्याचार-दग्ध, अनीतिसे कटा हुआ ।

[४]

कहा मैंने कितना है गुलका सबात^१,
कलीने यह सुनकर तबस्सुम^२ किया ।
जिगर ही में एक क्रतरा खूँ है सरश्क^३*,
पलक तक गया तो तलातुम^४ किया ।
किसू वक्त पाते नहीं घर उसे,
बहुत 'मीर' ने आपको गुम किया ।

५]

उल्टी हो गई सब तदबीरों कुछ न दवाने काम किया,
देखा इस बीमारिफ-दिलने आखिर काम तमोम किया ।
अहद जवानी रो रो काटा पीरी^५ में लीं आँखें मूँद,
यानी रात बहुत जागे रैं, सुबह हुई आराम किया ।
नाहक हम मजबूरोंपर यह तोहमत है मुस्तारी^६ की,
चाहते हैं सो आप करे हैं, हमको अबस बदनाम किया ।
किसका काबा, कैसा क़िबला, कौन हरम है क्या अहराम,
कूचेके उस बाशिंदोंने सबको यहींसे सलाम किया ।

१. दृढ़ता, स्थिरता । २. मुसकराकट । ३. आँसू ।

* इसी जमीनपर मिर्जा गालिबने लिखा है :—

बिलमें फिर गिरियाने एक शोर उठाया 'गालिब',
आह जो क्रतरा न निकला था सो तूफ़ान निकला ।

४. तूफ़ान, लहर पर लहर उठना । ५. वृद्धावस्था । ६. स्वतंत्रता ।

याँके सपेद व सियहमें हमको दखल जो है सो इतना है,
 रातको रो रो सुबह किया, या दिनको जूँतूँ शाम किया ।
 'मीर'के दीनो मज़हबको अब पूछते क्या हो उनने तो,
 क़शक़ा'खींचा, देर'में बैठा, कब का तर्क इस्लाम किया ।

[६]

चमनमें गुलने जो कल दावए-जमाल किया,
 जमाले-यारने मुँह उसका खूब लाल किया ।
 मेरी अब आँखें नहीं खुलतीं जोफ़'से हमदर्द',
 न कह कि नींदमें है तू यह क्या खयाल किया ।
 बहारे-रफ़ता फिर आई तेरे तमाशेको,
 चमनको य़मने क़दमने तेरे निहाल किया ।
 लगा न दिलको कहीं क्या सुना नहीं तूने,
 जो कुछ कि 'मीर'का इस आशिक़ी ने हाल किया !

✓ [७]

जिस सरको गुर्र आज है याँ ताजवरीका ।
 कल उसपे यही शोर है फिर नौहागरी'का ।
 'ज़िन्दों'में भी सोरिश' न गई अपने जुनूँकी,
 अब संग' मुदावा' है इस आशुप्रतासरी'का ।

१. तिलक । २. मन्दिर । ३. दुर्बलता । ४. साथी, मित्र । ५. मृत्यु-
 परान्त रोदन । ६. कारागार । ७. हंगामा । ८. उन्माद । ९. पत्थर ।
 १०. ओषधि । ११. पागलपन ।

हर ज़रूमे-जिगर दावरे महशर^१से हमारा,
इन्साफ़तलब है तेरी बेदादगरी^२का ।
ले साँस भी आहिस्ता कि नाजुक है बहुत काम,
आफ़ाक़^३की इस कारे गहे शीशागरीका ।
टुक 'मीर' जिगरसोस्त^४की जल्द ख़बर ले,
क्या यार भरोसा है चिरागे-सेहरी^५का ।

[८]

मुँह तका ही करे है जिस तिसका,
हैरती है यह आईना किसका ।
शाम ही से कुछ बुझा-सा रहता है,
दिल हुआ है चिराग़ मुफ़लिसका ।
फ़ैज़ ऐ अन्न चश्मे-तरसे उठा,
आज दामन वसीअ^६ है उसका ।
ता'ब ही किसको जो हाले 'मीर' सुने,
हाल ही और कुछ है मजलिसका ।

[९]

वह एक रविशसे खोले हुए बाल आ गया ,
संबुल^७ चमनका मुफ़्तमें पामाल^८ हो गया ।

१. प्रलयके अधिकारी, खुदा । २. अन्याय । ३. संसारसे अभिप्राय ।
४. दग्ध हृदय । ५. प्रातःकालीन दीपक । ६. विस्तृत । ७. एक सुगन्धित
घास जिससे बालोंकी उपमा दी जाती है । ८. पद-मर्दित ।

*दावा किया था गुलने तेरे रुखसे बाग़में ,
 सेली लगी सबाकी सो मुँह लाल हो गया ।
 क्रामत खमीदा^१ रंग शिकस्ता^२ बदन नज़ार^३ ,
 तेरा तो 'मीर' ग़ममें अजब हाल हो गया ।†

[१०]

हमारे आगे तेरा जब किसूने नाम लिया ,
 दिल सितमज़दःको हमने थाम थाम लिया ।
 मेरे सलीक़ेसे मेरी निभी मोहब्बतमें ,
 तमाम उम्र मैं नाकामियोंसे काम लिया ।

* किसी शायरने कहा है :—

दवा किया था गुल ने कल उसके रंगो-बूका ।
 धौलें सबाने मारीं, शबनमने मुँहपे थूका ॥

मीरने स्वयं अन्यत्र कहा है :—

घमनमें गुलने जो कल दावए जमाल किया ।
 सबाने मार तमाँचा मुँह उसका लाल किया ॥

१. झुका हुआ । २. टूटा । ३. दुर्बल ।

† हसरत मोहानीका शेर है :—

इश्के कुर्ताको जीका जंजाल कर लिया है ।
 'हसरत' यह तूने अपना क्या हाल कर लिया है ॥

[११]

कुछ नहीं सूझता हमें उस बिन ,
शौकने हमको बेहवास किया ।
सुबह तक शमा सिरको धुनती रही ,
क्या पतिंगेने इल्तमास^१ किया ।
ऐसे वहशी कहाँ हैं ऐ खूबाँ ,
'मीर' को तुम अबस^२ उदास किया ।

[१२]

ऐ तू कि यँसे आक्रबते-कार जायगा ,
गाफ़िल न रह कि क्राफ़ला एकबार जायगा ।
मौक्रूफ़^३ हश्रे पर है सो आती भी वह नहीं ,
कब दरमियाँसे वादए दीदार जायगा ।
आवेगी एक बला तेरे सिर सुन ले ऐ सबा ,
जुल्फे सियहका उसके अगर तार जायगा ।

[१३]

गर्मीसे मैं तो आतिशे शर्म^४की पिघल गया ,
रातोंको रोते-रोते ही जूँ शमा गल गया ।
हम खस्ता-दिल हैं तुझसे भी नाज़ुक मिज़ाजतर ,
त्योरी चढ़ाई तू ने कि यँ जी निकल गया ।
गर्मी-ए-इश्क मान'ए^५ नशबो-नुमां^६ हुई ,
मैं वह निहार्ल था कि उगा और जल गया ।

१. निवेदन । २. व्यर्थ । ३. स्थगित । ४. प्रलय । ५. दुःखाग्नि ।

६. बाधक । ७. पालन-पोषण, विकास । ८. पीषा ।

[१४]

मिला है खाकमें किस किस तरहका आलम यों ,
निकलके शहरसे ठुक सैर कर मज़ारोंका ।
तड़पके खिरमने गुलपर कभी गिर ऐ बिजली ,
जलाना क्या है मेरे आशियाँ^१के खारोंका^२ ।

[१५]

दमे-सुब्ह बड़मेखुशजहाँ शबेगमसे कम न थे मेहरबाँ ,
कि चिराग़ था सो तो दूद^३ था जो पतंग था सो गुबार था ।
दिले-मुज़तरब^४ से गुज़र गई शबेवस्ल^५ अपनी ही फ़िक्रमें ,
न दिमाग़ था, न फुराग़^६ था, न शकेब^७ था, न क्ररार था ।
कभू जायगी जो उधर सबा तो य कहियो उससे कि बेवफ़ा ,
मगर एक 'मीर' शिकस्तपा तेरे बाग़ ताज़ामें खार था ।

[१६]

फोड़ा सा सारी रात जो पकता रहेगा दिल ,
तो सुबह तक तो हाथ लगाया न जायगा ।
याद उसकी इतनी ख़ूब नहीं 'मीर' बाज़ आ ,
नादान फिर वह जीसे मुलाया न जायगा ।

१. पुष्प-समूह । २. घोंसला । ३. काँटों (तिनकों) । ४. धुर्वा ।
५. बेचैन हृदय । ६. मिलन-रात्रि । ७. फुरसत । ८. धैर्य ।

[१७]

उनने तो मुझको झूठे भी पूछा न एकबार ,
मैंने उसे हजार जताया तो क्या हुआ ?
क्या क्या दुआएँ माँगी हैं खिलवत^१ में शेख, यों ,
जाहिर जहाँमें हाथ उठाया तो क्या हुआ ?
जीते तो 'मीर' उनने मुझे दाग ही रखा,
फिर गोर^२ पर चिराग जलाया तो क्या हुआ ?

[१८]

ऐ दोस्त कोई मुझ सा रुसवा न हुआ होगा,
दुश्मनके भी दुश्मनपर ऐसा न हुआ होगा ।
जुझ^३ मर्तबए कुल^४ को हासिल^५ करे है आखिर,
एक क्रतरा न देखा जो दरिया न हुआ होगा ।

[१९]

वे दिन गये कि आँखें दरिया सी बहतियाँ थीं,
सूखा पड़ा है अब तो मुद्दतसे यह दोआबा ।

[२०]

इन्तिदाए इश्क^६ है रोता है क्या ?
आगे आगे देखिए होता है क्या ।
सब्ज होती ही नहीं यह सरज़मीं,
तुस्मे खादिश^७ दिलमें तू बोता है क्या ।

१. एकान्त । २. क्रत्र, समाधि । ३. अंश । ४. पूर्णताका पद ।
५. प्राप्त । ६. प्रेमारम्भ । ७. इच्छाओंके बीज ।

[२१]

रंग उड़ चला चमनमें गुलोंका तो क्या नसीम,
 हमको तो रोज़गार^१ने बे बालोपर किया ।
 है कौन आपमें जो मिले तुझसे मस्ते-नाज़ ?
 जौक्रे ख़बर ही ने तो हमें बेख़बर किया ।
 बेशरम महज़ है वह गुनहगार जिनने 'मीर',
 अन्ने करम^२के सामने दामाने तर किया ।

✓ [२२]

अश्क आँखोंमें कब नहीं आता,
 लहू आता है जब नहीं आता ।
 होश जाता नहीं रहा लेकिन,
 जब वह आता है तब नहीं आता ।
 दूर बैठा गुबारे 'मीर' उससे,
 इश्क़ बिन यह अदब नहीं आता ।

[२३]

क्रद्र रखती न थी मूताभे^३ दिल ,
 सारे आलमको मैं दिखा लाया ।
 दिल कि एक क्रतरा खूँ नहीं हैं बेश ,
 एक आलमके सर बला लाया ।

१. मलयबायु । २. संसार । ३. दया-मेघ । ४. माल, जिस ।

सब पे जिस बारने गिरानीकी ,
 उसको यह नातवाँ^१ उठा लाया ।*
 दिल मुझे उस गलीमें ले जाकर ,
 और भी ख्वाकमें मिला लाया ।
 इब्तिदा^२ ही में मर गये सब यार ,
 इश्ककी कौन इन्तिहा^३ लाया ।
 अब तो जाते हैं बुतकदे^४ से 'मीर' ,
 फिर मिलेंगे अगर खुदा लाया ।

✓ [२४]

ग़म रहा जब तक कि दममें दम रहा ।
 दिलके जानेका निहायत ग़म रहा ।
 हुस्न था तेरा बहुत आलमफ़रेब^५ ,
 ख़तके आनेपर भी एक आलम रहा ।
 दिल न पहुँचा गोशए-दामाँ^६ तलक ,
 क़तरए-ख़ूँ था मजे^७ पर जम रहा ।

१. दुर्बल ।

*हाफ़िज़ कहते हैं:—

घासमाँ बारे अमानत न तबानस्त कशीद ।
 कुरए फ़ाल बनामे मने दीवाना जबंद ।

२. आरम्भ । ३. अन्त, सीमा । ४. मूर्तिधाम, मन्दिर । ५. विश्व-
 प्रलुब्धकारी । ६. आँचलके कोने तक । ७. पलक ।

मेरे रोनेकी हक्रीक़त 'जिसमें थी ,
 एक मुद्दत तक वह काग़ज़ नम रहा ।
 सुबह पीरी शाम होने आई 'मीर' ,
 तू न चेता यौं बहुत दिन कम रहा ।

[२५]

आँखोंमें जी मेरा है इधर यार देखना ,
 आशिक़का अपने आख़री दीदार देखना ।
 कैसा चमन कि हमसे असीरों^१को मना है ,
 चाके क़फ़स^२से बाग़की दीवार देखना ।

[२६]

जो इस शोरसे 'मीर' रोता रहेगा ,
 तो हमसाया काहेको सोता रहेगा ।
 मैं वह रोनेवाला जहाँसे चला हूँ ,
 मुझे अब्र^३ हर साल रोता रहेगा ।
 मुझे काम रोनेसे अक्सर है नासेह^४ ,
 तू कब तक मेरे मुँहको धोता रहेगा ।
 बस ऐ मीर ! मिज़गौं^५से पोंछ आँसुओंको ,
 तू कब तक यह मोती पिरोता रहेगा ।

१. बन्दियों । २. बन्दीगृहके छिद्रसे । ३. मेघ । ४. उपदेशक ।
 ५. पलकें ।

[२७]

आहे सेहरने सोझिसे दिलको मिटा दिया ,
 इस बादने हमें तो दिया-सा बुझा दिया ।
 पोशीदा^१ राजे-इश्क^२ चला जाय था सो आज ,
 बेताकतीने दिलका वह परदा उठा दिया ।
 इस मौजखेज^३ देहरमें हमको कर्जा^४ ने आह ,
 पानीके बुलबुलेकी तरहसे मिटा दिया ।
 आवारगाने-इश्कका पूछा जो मैं निशां ,
 मुश्तेगुबार^५ लेके सबाने उड़ा दिया ।

[२८]

बेखुदी ले गई कहाँ हमको ,
 देरसे इन्तज़ार है अपना ।*
 रोते फिरते हैं सारी-सारी रात ,
 अब यही रोज़गार है अपना ।
 जिसको तुम आसमान कहते हो,
 सो दिलोंका गुबार है अपना ।

१. गुप्त । २. प्रेमका भेद । ३. तरंगित । ४. मृत्यु । ५. मुट्ठीभर धूल ।

* 'मीर' अन्यत्र कहते हैं:—

हम आपसे गये सो इलाही कहाँ गये ,
 मुद्दत हुई कि अपना हमें इन्तज़ार है ।

[२९]

इस मौजखेज़ देह^१में तू है हुबाब-सा ,
 आँखें खुलें तेरी तो यह आलम है खाब-सा ।
 वह दिल कि तेरे होते रहे था भरा-भरा ,
 अब उसको देखिए तो है एक घर खराब-सा ।
 मुदत हुई कि दिलसे करारो सुकूँ गये,
 रहता है अब तो आठ पहर इजतराब^२ सा ।

[३०]

दिसलाते क्या हो दस्ते हिनाई^३का मुझको रंग,
 हाथोंसे मैं तुम्हारे बहुत हूँ जला हुआ ।
 यों फिर उठा न जायगा ऐ अब्र दस्त^४ से,
 गर कोई रोने बैठ गया दिल भरा हुआ ।
 दामनसे मुँह छिपाये जुनूँ कब रहा छिपा,
 सौ जा से सामने है गरेबां फटा हुआ ।

[३१]

मेरे मुरदेसे भी वह चौंके हैं,
 अब तलक मुझमें जान है गोया ।
 हैरते रूये गुलसे मुर्गो चमन,
 चुप है यों बेज़बान है गोया ।
 मस्जिद ऐसी भरी भरी कब है,
 मैकदो^५ एक जहान है गोया ।

१. बेचनी । २. मेंहदी लगे हाथ । ३. जंगल । ४. मद्यशाला ।

[३२]

आँसू मेरी आँखोंमें हर दम जो न आ जाता,
तो काम मेरा अच्छा परदेमें चला जाता ।
तिफली^१ की अदा तेरी जाती नहीं यह जी से,
हम देखते तुझको तो तू मुँहको छिपा जाता ।
कहते तो हो यों कहते यों कहते जो वह आता,
यह कहनेकी बातें हैं कुछ भी न कहा जाता ।

[३३]

मुँहपर उस आफ़ताब^२के है यह नक्राब क्या ?
परदा रहा है कौन सा हमसे हिजाब^३ क्या ?
ऐं अब्रेतर यह गिरिया हमारा है दीदनी,
बरसे है आज सुबहसे चश्मे पुरआब^४ क्या ?
सौ बार उसके कूचे तलक जाते हैं चले,
दिल है अगर बना तो है वह इज़तराब क्या ?

[३४]

कब और ग़ज़ल कहता मैं इस ज़मीमें लेकिन ,
परदेमें मुझे अपना अहवाल सुनाना था ।
कहता था किसूसे कुछ तकता था किसूका मुँह ,
कल 'मीर' खड़ा था यों सच है कि दिवाना था ।

१. लड़कपन । २. सूर्य । ३. लज्जा । ४. पानी (आँसू) भरी आँखें ।

[३५]

दूरिए यारमें है हाले-दिल अबतर अपना ,
 हमको सौ कोससे आता है नज़र घर अपना ।*
 तुमसे बेमेहरके लग लगाने न देते हरगिज़ ,
 ज़ोर चलता कुछ अगर चाहमें दिलपर अपना ।

[३६]

ऐ काश मेरे सरपर एक बार वह आ जाता ,
 ठहराव सा हो जाता यूँ जी न चला जाता ।
 अब तो न रहा वह भी ताक़त गई सब दिलकी ,
 जो हाल कभी अपना मैं तुमको सुना जाता ।
 क्या शौक़की बातोंकी तहरीर हुई मुश्किल ,
 थे जमा क़लम क़ाग़ज़पर कुछ न लिखा जाता ।
 था 'मीर' भी दीवाना पर साथ ज़राफ़तके ,
 हम सिलसिलेवारोंकी जंजीर हिला जाता ।

[३७]

शायद जिगर हरारते-इश्क़ीसे जल गया ।
 कल ददें-दिल कहा सो मेरा मुँह उबल गया ।
 हरचन्द मैंने शौक़को पेनहां किया बले ,
 एक आध हर्फ़ प्यारका मुँहसे निकल गया ।
 सर अब लगे झुकाने बहुत खाक़की तरफ़ ,
 शायद कि 'मीर' जी का दिमागी ख़लल गया ।

* 'हाली' का शेर है:—

हो अस्मे बेर शायब काबेसे फिर कर अपना ।
 आता है दूर ही से हमको नज़र घर अपना ।

[३८]

अगर हँसता उसे सैर चमनमें अबकी पाऊँगा ।
तो बुलबुल आशियाँ तेरा भी मैं फूलोंसे छाऊँगा ।
बशारत^१ ऐ सबा दी जो असीराने क्रफ़स^२को भी ,
तसल्लीको तुम्हारी सरपे रख दो फूल लाऊँगा ।
दिमाग़ो-नाजबरदारी नहीं है कमदिमागीसे,
कहाँ तक हर घड़ीके रूठेको पहरों मनाऊँगा ।
अभी हूँ मुन्तज़िर^३ जाती है चश्मे शौक्र हर जानिब,
बुलन्द उस तेग़को होने तो दो सर भी झुकाऊँगा ।

[३९]

सख़ुन मुश्ताक्र^४ है आलम हमारा ।
ग़नीमत है जहाँमें दम हमारा ।
रहे है आलमे-मस्तीमें अबसर,
रहा कुछ और ही आलम हमारा ।
बिखर जाते हैं कुछ गेसू तुम्हारे,
हुआ है काम दिल बरहम^५ हमारा ।
रखे रहते हैं दिलपर हाथ ऐ मीर !
यहीं शायद कि है सब ग़म हमारा ।

१. शुभ समाचार, प्रसन्नता । २. पिंजड़ेके बन्दी । ३. प्रतीक्षारत ।
४. काव्यप्रेमी । ५. बिखरा हुआ ।

[४०]

बज़्म^१ की पेशे शब^२ का यों दिन होते ही यह रंग हुआ ।
 शमअकी जगह दूद^३ तनिक था खाक़स्तर परवाना था ।*
 तुफ़्फ़ा ख्याल किया करता था, इश्को जुनूँ में रोज़ोशब, ।
 रोते रोते हँसने लगा यह 'मीर' अजब दीवाना था ।

[४१]

फ़लकने पीसकर सुर्मा बनाया ।
 नज़रमें उसकी मैं तो भी न आया ।
 तमामी उम्र जिसकी जुस्तजू की,
 उसे पास अपने एक दम भी न पाया ।
 न थी बेगानगी मालूम उसकी,
 न समझे हम उसीसे दिल लगाया ।

१. सभा । २. आनन्द रात्रि । ३. घुर्वा ।

*शालिब कहते हैं :—

या शबको देखते थे कि हर गोशए-बिसात,
 बामाने बापबाँ ब कफ़्फ़े-गुलफ़रोश है ।
 खुल्फ़ेजरात साक़ी ब चौंके सदाये चंग,
 यह जसते निगाह बह फिरबौस गोश है ।
 या सुबहबस जो देखिए आकर तो बरस में,
 न बह सफ़रो सोज न ओशो खरोश है ।
 बापे फ़ुराक़ सोहबते शबकी जली हुई,
 एक शमा रह गयी है सो बह भी खमोश है ।

रदीफ़ बे

[४२]

शबनमसे कुछ नहीं है गुलो यासमनमें आब ।
देख उसको भर भर आवे है सबके देहनमें आब ।
सोजिश^२ बहुत हो दिलमें तो आँसूको पी न जा,
करता है काम आगका ऐसी जलनमें आब ।
देखो तो किस रवानीसे कहते हैं शेर 'मीर',
दुर^३से हजार चंद है उसके समुन में आब ।

[४३]

क्या हमें हम तो हो चले ठंडे,
गर्म गो यारकी खबर है अब ।
क्या कहें हाले-खातिर आशुप्रता^४,
दिल खुदा जानिए किधर है अब ।

[४४]

जोश रोनेका मुझे आया है अब ।
दीदए-तर^१ अत्र सा छाया है अब ।
टेढ़े बाँके सीधे सब हो जायेंगे,
उसके बालोंने भी बल खाया है अब ।

१. मुँहमें पानी भर आता है। २. जलन । ३. मोती । ४. बेचैन दिलकी हालत । ५. अध्रुपूर्ण नयन (घनसे घिरे हैं) ।

[४५]

दिलके गये बेकस कहलाये ऐसा कहाँ हमदम है अब ।
 कौन ऐसे महरूम ग़मी'का हमराज़ो-महरम है अब ।
 सुनके हाल किसूके दिलका रोना ही मुझको आता था ,
 यानी कभू जो कुढ़ता था मैं वह रोना हरदम है अब ।
 देखें दिन कटते हैं क्योंकर रातें क्योंकर गुज़रती हैं ,
 बेताबी है ज़्यादा ज़्यादा सब्र बहुत कम कम है अब ।
 इश्क हमारा आह न पूछो क्या क्या रंग बदलता है ,
 खून हुआ दिल दाग़ हुआ फिर दर्द हुआ फिर ग़म है अब ।
 मिलनेवालो फिर मिलिएगा है वह आलमे-दीगरमें ,
 'मीर' फ़क़ीर को सुक़्र है यानी मस्तीका आलम है अब ।

रवीन्द्र ते

[४६]

पलकों पै थे पारए ज़िगर रात ।
 हम आँखोंमें ले गये बसर रात ।
 मुखड़ेसे उठाई उनने जुल्फ़ें ,
 जाना भी न हम गई किधर रात ।
 खुलती है जब आँख शबको तुझ बिन,
 कटती नहीं आती फिर नज़र रात ।
 थी सुबह जो मुँहको खोल देता ,
 हरचंद कि तब थी एक पहर रात ।

फिर जुल्फोंमें मुँह छिपाके पूछा ,
अब होवेगी 'मीर' किस क्रदर रात ।

[४७]

कहते थे उससे मिलिये तो क्या क्या न कहिए लेक ,
वह आ गया तो सामने उसके न आई बात ।
अब तो हुए हैं हम भी तेरे ढबसे आशना ,
वाँ तूने कुछ कहा कि इधर हमने पाई बात ।
खत लिखते लिखते 'मीर' ने दफ़्तर किये रवाँ ,
इफ़राते इश्तियाक़^१ ने आख़िर बढ़ाई बात ।

[४८]

देरसे सूए हरम आया न डुक ,
हम मिज़ाज अपना इधर लाये बहुत ।
फूलो गुल शम्सो क्रमर^२ सारे ही थे ,
पर हमें इनमें तुम्हीं भाये बहुत ।
'मीर'से पूछा जो मैं आशिक़ हो तुम ,
होके कुछ चुपकेसे शरमाये बहुत ।

[४९]

दिलकी तहकी कही नहीं जाती नाज़ुक हैं इसरार बहुत ,
अक्षर हैं तो इश्क़के दो ही लेकिन है बिस्तार बहुत ।
हिज़्रने जी ही मारा हमारा क्या कहिए क्या मुश्किल है ,
उससे जुदा रहना होता है जिससे हमें है प्यार बहुत ।

१. उत्कण्ठाकी प्रबलता । २. सूर्य-चन्द्र । ३. वियोग ।

[५०]

खुशकी लबकी ज़र्दी रुखकी, नमनाकी दो आँखों की ,
 जो देखे है कहे है उनने खींचा है आज़ार बहुत ।
 ज़िस्मकी हालत जी की ताक़त नब्ज़से कर मालूम तबीब ,
 कहने लगा जाँबर क्या होगा यह तो है बीमार बहुत ।
 चार तरफ़ अबरूँके इशारे इस ज़ालिमके ज़मानेमें ,
 ठहरे क्या आशिक़ बेकस याँ चलती है तलवार बहुत ।
 जीके लगाव कियेसे हमने जी ही जाते देखे हैं ,
 इस पे न जाना आह बुरा है उल्फ़त का आज़ार बहुत ।

रवीन्द्र जीम

[५१]

आये हैं मीर मुँहको बनाये जफ़ासे आज ।
 शायद बिगड़ गई है कुछ उस बेवफ़ासे आज ।
 जीनेमें इस्तिथार नहीं वर्ना हमनशीं ,
 हम चाहते हैं मौत तो अपनी खुदासे आज ।
 साक़ी टुक़ एक मौसिमे गुलकी तरफ़ भी देख ,
 टपका पड़े है रंग चमनमें हवासे आज ।
 था जीमें उससे मिलिए तो क्या क्या न कहिए 'मीर' ,
 पर कुछ कहा गया न शमे दिल हयासे आज ।

[५२]

उसका बहरे हुस्न सरासर ओज व मौजो तलातुम है ।
 शौक्रकी अपने निगाह जहाँ तक जावे बोसो किनार है आज ।
 खूब जो आँखें खोलके देखा शास्त्रे गुल पै नज़र आया ,
 इन रंगों फूलोंमें मिला कुछ महवे^१ जल्चये यार है आज ।
 जज़्बे इश्क़ जिधर चाहे ले जाये महमिल लैलाका ,
 यानी हाथमें मजनूँके नाक़े^२की उसके मेहार है आज ।
 रातको पहना हार जो अब तक दिनको उतारा उनने नहीं ,
 शायद 'मीर' जमाले गुल भी उसके गलेका हार है आज ।

रवीन्द्र च

[५३]

चश्म हो तो आईनाखाना है देह^३ ,
 मुँह नज़र आता है दीवारोंके बीच ।
 हैं अनासिर^४ की यह सूरतबाज़ियाँ ,
 शोन्दे^५ क्या क्या हैं इन चारों के बीच ।

[५४]

मैं बेदिमाग़ इश्क़ उठा सो चला गया ,
 बुलबुल पुकारती ही रही गुलसितांके बीच ।
 क्या जानूँ लोग कहते हैं किसको सुरूरेक़ल्ब^६ ,
 आया नहीं यह लफ़्ज़ तो हिन्दी ज़बाँके बीच ।

१. निमल, तल्लीन । २. ऊँटनी । ३. जमाना । ४. तत्त्व ।
 ५. चमत्कार, जादू । ६. हृदयका आनन्द ।

इतनी जर्बी रगड़ी कि संग आईना हुआ ,
आने लगा है मुँह नज़र उस आस्ताँके बीच ।

[५५]

यह उलझाव सुलझता मुझको देहै दिखाई मुश्किल सा ,
यानी दिल अटका है जाकर इन बालोंकी शिकनके बीच ।
क्या शीरी है हफ़ों हिकायत हसरत हमको आती है ,
हाय जुबाँ अपनी भी होवे यकदम उसके देहनके बीच ।
रवीन्द्र हे

[५६]

क्या मैं ही छेड़ छेड़के खाता हूँ गालियाँ ,
अच्छी लगे है सबको मेरे बदज़बाँकी तरह ।
नक्रशा इलाही दिलके मेरे कौन ले गया ,
कहते हैं सारं अर्श में है इस मकाँ की तरह ।

[५७]

दौरे गर्दसे हुई कुछ और मैखाने की तरह ।
भर न आवें क्योंकि आँखें मेरी पैमानेकी तरह ।
आ निकलता है कभू हँसता तो है बाग़ो बहार ,
उसकी आमदमें है सारी फ़सल गुल आनेकी तरह ।
किस तरह जीसे गुज़र जाते हैं आँखें मूँदकर ,
दीदनी है दर्दमन्दों की भी मर जानेकी तरह ।

रवीन्द्र दाल

[५८]

न पढ़ा खतको या पढ़ा क्रासिद^१ ।
 आखिरकार क्या कहा क्रासिद ।
 गिर पड़ा खत तो तुझपे हर्क^२ नहीं ,
 यह भी मेरा ही था लिखा क्रासिद ।
 यह तो रोना हमेशा है मुझको ,
 फिर कभू फिर कभू भला क्रासिद ।

[५९]

तुझ बिन ऐ नौबहारके मानिन्द ।
 चाक है दिल अनार के मानिन्द ।
 बेक^२ तड़पी बहुत वले न हुई ,
 इस दिले बेकरारके मानिन्द ।

[६०]

तनको जिस जगहसे छेड़ूँ वहाँ है दर्द दर्द ।
 हाथ लगते दिलके हो जाता हूँ कुछ मैं ज़र्दज़र्द ।
 अब तो वह हसरतसे आहोनाला करना भी गया ,
 कोई दम-होंठों तक आ जाता है गाहे सर्द सर्द ।

१. दूत, संदेश-वाहक । २. बिजली ।

रदीफ़ रे

[६१]

देखूँ मैं अपनी आँखोंसे आवे मुझे करार ।
 ऐ इंतज़ार तुझको किसीका हो इंतज़ार ।
 किस ढबसे राहे-इश्क़ चलूँ है यह डर मुझे ,
 फूटें कहीं न आबले टूटें कहीं न खार ।

[६२]

यह क्या जानूँ कि क्यों रोने लगा रोनेसे रहकर मैं ,
 मगर यह जानता हूँ मेह घिर आता है फिर खुलकर ।
 मेरे पास उसकी खाकेपाय^१ बीमारीमें रक्खा था ,
 न आया सर मेरा बाली पै ऊपर जो गया दुलकर ।
 गुदाज़े आशक्की^२ का 'मीर' के शब ज़िक्र आया था ,
 जो देखा शमअ मजलिसको तो पानी हो गयी घुलकर ।

[६३]

गुस्सेसे उठ चले हो जो दामनको भाड़कर ।
 जाते रहेंगे हम भी गरेबान फाड़कर ।
 दिल वह नगर नहीं कि फिर आबाद हो सके ,
 पछताओगे सुनो हो यह बस्ती उजाड़कर ।

[६४]

सहल मत बूझ यह तिलिस्मे जहाँ^३ ,
 हर जगह यों खयाल है कुछ और ।

१. चरण-धूलि । २. प्रेमकी तपिश । ३. जगत्का इन्द्रजाल ।

तू रगेजाँ^१ समझती होगी नसोम,
 उसके गेसूका बाल है कुछ और ।
 न मिलें गोकि हिज्रमें मर जायँ ,
 आशिक्रोंका विसाल^२ है कुछ और ।
 'मीर' तलवार चलती है तो चले ,
 खुशखरामोंकी चाल है कुछ और ।

[६५]

उस रूप आतशी^३से बुर्का सरक गया था ,
 गुल बह गया चमनमें खिजलत^४से आब होकर ।
 एक कतरा आब मैंने इस दौरमें पिया है ,
 निकला है चश्मे तरसे वह खूने नाब^५ होकर ।

[६६]

हम भी फिरते हैं एक हशम^६ लेकर ।
 दस्तए दाग व फ़ौजे ग़म लेकर ।
 दस्तकश नाला पेशरू गिरिया ,
 आह चलती है याँ अलर्म^७ लेकर ।
 मर्ग यक माँदगीका वक्फ़ा है ,
 यानी आगे चलेंगे दम लेकर ।

१. प्राण-नाड़ी । २. वियोग । ३. मिलन । ४. अग्निमुख, प्रकाशमान मुख । ५. लज्जा । ६. विशुद्ध । ७. वैभव । ८. झण्डा ।

ज़ोफ़^१ यों तक खिंचा कि सूरतगर^२ ,
 रह गये हाथमें कलम लेकर ।
 'मीर' साहब ही चूके ऐ बदाहद !
 वर्ना देना था दिल क्रसम लेकर ।

[६७]

झूठे भी पूछते नहीं टुक हाल आनकर ,
 अनजान इतने क्यों हुए जाते हो जानकर ।
 वे लोग तुमने एक ही शोखीमें खो दिये ,
 पैदा किये थे चर्ख^३ ने जो खाक छानकर ।

[६८]

मरते हैं हम तो आदमे खाकीकी शान पर ,
 अल्लाह रे दिमाग कि है आसमान पर ।
 शोखी तो देखो आपही कहा आओ, बैठो मीर ,
 पूछा कहाँ तो बोले कि मेरी ज़बान पर ।

[६९]

बज़ममें मुँह उधर करें क्योंकर ।
 और नीची नज़र करें क्योंकर ।
 यूँ भी मुश्किल हैं वों भी मुश्किल है ,
 सर झुकाये गुज़र करें क्योंकर ।

राजपोशीए^१ इश्क है मंजूर ,
 आँखें रो रोके तर करें क्योंकर ।
 मस्त वो बेखुद हम उसके दर पे गये ,
 लोग उसको खबर करें क्योंकर ।
 सो रहा बाल मुँह पै खोलके वह ,
 हम शब अपनी सेहर^२ करें क्योंकर ।
 दिल नहीं दर्दमन्द अपना 'मीर' ,
 आहो नाले असर करें क्योंकर ।

[७०]

पुर नातवाँ हूँ मुझपर भारी है जी ही अपना ,
 मुझसे उठेंगे उसके नाज़ो अताब क्योंकर ?
 पानी के धोके प्यासे क्या-क्या अज़ीज मारे ,
 सर पर न खाक डाले अपने सुराब क्योंकर ?

[७१]

अब्रेसियह^३ क़िबलेसे उठकर आया है मैताने पर ।
 बादाकशों^४ का झुरमुट है कुछ शीशेपर पैमाने^५ पर ।
 बेताबाना शमअपर आया गिर्द फिरा फिर जल ही गया ,
 अपना जी भी हदसे ज़ियादा रात जला परवाने पर ।

१. प्रेमका गुप्त रखना । २. प्रभात । ३. काला बादल । ४. मद्यपों ।
 ५. सुराही और प्याला ।

रवीफ़ ज़े

[७२]

मुन्तज़िर कल्लके वादेका हूँ अपने यानी ,
 जीता मरनेको रहा है यह गुनहगार हनोज़^१ ।
 अभी एकदममें ज़बाँ जलनेसे रह जाती है ,
 दर्दे दिल क्यों नहीं करता है तूइजहार हनोज़ ।
 आँखोंमें आन रही जी जो निकलता ही नहीं ,
 दिलमें मेरे है गिरह हसरते दीदार^२ हनोज़ ।
 भर नज़र देखने पाता नहीं मैं निज़अ^३ में भी ,
 मुँहके तई फेरे ही लेता है वह बेबाक हनोज़ ।
 बाद मरनेके भी आराम नहीं 'मीर' मुझे ,
 उसके कूचेमें है पामाल^४ मेरी स्वाक हनोज़ ।

[७३]

आशिक़ के उसको गिरियए खूनीका दर्द क्या ,
 आँसू नहीं है आँखसे जिसकी गिरा हनोज़ ।
 बरसोंमें नामाबर^५से मेरा नाम जो सुना ,
 कहने लगा कि जिंदा है वह नंग क्या हनोज़ ।

[७४]

हरचद आसमां पै हमारी दुआ गई ,
 उस मह^६के दिलमें करती नहीं कुछ असर हनोज़ ।

१. अबतक । २. दर्शनेच्छा । ३. अन्तिम क्षण । ४. पददलित ।
 ५. पत्रवाहक । ६. चाँद ।

बरसोंसे लखनऊमें० अक्रामत है मुझको लेक,
याँके चलनसे रसता हूँ अङ्गमे सफ़र^१ हनोज़ ।
तेशासे कोहकन^२के दिले कोह^३ जल गया,
निकले हैं संग-संगसे अक्सर शरर^४ हनोज़ ।

रदीफ़ सीन

[७५]

ऐ अब्रतर तू और किसी सिम्तको बरस ।
इस मुल्कमें हमारी ही यह चश्मे तर है बस ।
हर्मां तो देख फूल बिखेरे थी कल सबा,
एक बर्गे गुल गिरा न जहाँ था मेरा क्रफ़स ।
मिज़गाँ भी बह गयीं मेरे रोनेसे चश्मकी,
सैलाब मौज मारे तो ठहरे है कोई ख़स ।
मजनूँका दिल हूँ, महमिले लैलासे हूँ जुदा,
तनहा फिर हूँ, दश्तमें जूँ नालए-जरस^५ ।
ऐ गिरिया उसके दिलमें असर ख़ूब ही किया,
रोता हूँ जब मैं सामने उसके तो दे है हँस ।

[७६]

क्योंकि निकला जाय बहरे-ग़मसे मुझ बेदिलके पास
आके डूबी जाती है किशती मेरी साहिल^६के पास ।
है परीशां दश्तमें किसका गुबारे-नातवाँ,
गर्द कुछ गुस्ताख़ आती है चली महमिलके पास ।

१. यात्रा करने, विदा होनेकी आकांक्षा । २. फ़रहाद । ३. पहाड़ का हृदय । ४. चिनगारी । ५. घण्टा घड़ियालका रुदन । ६. तट । ७. क्षीण धूलि ।

आह नाले मत किया कर इस तरह बेताब हो,
ऐ सितमकश 'मीर' जालिम है जिगर भी दिलके पास ।

[७७]

'क्रयामत है न ऐ सरमायए जान,^१
न होवे वक्त मरनेके भी तू पास ।
यही गाली, यही झिड़की, यही छेड़,
न कुछ मेरा किया तूने कभू पास ।

रदीफ़ शीन

[७८]

लाले खमोश अपने देखे हो आरसीमें,
फिर पूछते हो हँसकर मुझ बेनवाकी खाहिश ।
अक्लीमे हुस्न^२से हम दिल फेर ले चले हैं,
क्या करिये याँ नहीं है जिसे-वफ़ाकी खाहिश ।

[७९]

पाँव पड़ता है कहीं आँखें कहीं,
उसकी मस्ती देखकर जाता है होश ।
दोस्तोंका दर्द-दिल टुक गोशकर^३,
गर नसीबे दुश्मनां है दर्दगोश ।

१. प्रलय । २. प्राणनिधि । प्राणघन । ३. सौन्दर्य-प्रदेश ।

४. सुनाकर ।

•[८०]

किसकी आँखें फिरी हैं आँखोंमें,
दम बदम है मेरी नज़र दरपेश ।
मस्ती भी अहले होश की है जिन्हें,
आवे है आलम दिगर दरपेश ।

[८१]

कब तलक बेक्रार रहिएगा,
कुछ तो मिलनेका हो क्रार ऐ काश ।
राह तकते तो फट गयीं आँखें,
उसका करते न इन्तज़ार ऐ काश !
उसकी पामाली सरफ़राज़ी है,
राहमें हो मेरी मज़ार ऐ काश !

एदीक़ फ़रे

[८२]

जो देखे मेरे शोरे तरकी तरफ़ ।
तो मायल^१ न हो फिर गुहर^२की तरफ़ ।
मोहब्बतने शायद कि दी दिलमें आग,
धुवाँ-सा है कुछ उस नगरकी तरफ़ ।
नज़र क्या करूँ उसके घरकी तरफ़ ।
निगाहें हैं मेरी नज़रकी तरफ़ ।
बड़ी धूमसे अत्र आये गये ।
न कोई हुआ चश्मेतरकी तरफ़ ।

[८३]

क्या नीची आँखें देखो हो तलवारकी तरफ
देखो किन आँखियों ही से गुनहगारकी तरफ ।
आवारगीके महो^१ हैं हम खानमाँ खराब,
मुतलक नहीं नज़र हमें घरबारकी तरफ ।

रवीफ़ क़ाफ़

[८४]

दर्द ही खुद है खुद दवा है इश्क़ ।
शेख़ क्या जाने तू कि क्या है इश्क़ ।
तू न होवे तो नज़म^२ कुल उठ जाय,
सच्चे हैं शायरां खुदा है इश्क़ ।
इश्क़ ही इश्क़ है जहाँ देखो,
सारे आलममें भर रहा है इश्क़ ।
इश्क़ माशूक़ इश्क़ आशिक़ है,
यानी अपना ही मुब्तला है इश्क़ ।
क्या हक़ीक़त कहूँ कि क्या है इश्क़ ।
हक़शनाशों^३ का हाँ खुदा है इश्क़ ।
और तदबीरको नहीं कुछ दख़ल,
इश्क़के दर्दकी दवा है इश्क़ ।
कौन मक़सद^४ को इश्क़ बिन पहुँचा,
आरज़ू इश्क़ मुद्आ है इश्क़ ।

१. तल्लीन । २. व्यवस्था । ३. सत्य पहचाननेवालों । ४. उद्देश्य,
लक्ष्य ।

[८५]

अजों सुमा^१में इश्क है सारी चारों ओर फिरा है इश्क ।
हम हैं जनाबे इश्क के बन्दे नज़दीक अपने खुदा है इश्क ।
जाहिर^२ व बातिन^३ अन्वलो आखिर पाई-बालों इश्क है सब,
नूरो जुल्मत^४ मानी व सूरत^५ सब कुछ आप ही हुआ है इश्क ।

[८६]

बसलो जुदाईसे वह मुबरा^६ है कामे जाँ,
मालूम कुछ हुआ न हमें याँ सिवाय शौक्र ।
हर चार ओर उड़ती फिरे है हमारी खाक,
सरसे गयी न जी भी गये पर हवाए-शौक्र ।
देरो-हरममें हमको फिराता है देर तक,
फिर भी हमारे साथ वही है अदाये-शौक्र ।

रदीफ़ काफ़

[८७]

जिसे शब आग-सा देखा दहकते,
उसे फिर खाक है पाया सेहर तक ।
गली तक तेरी लाया था हमें शौक्र,
कहाँ ताक़त कि अब फिर जायँ घरतक ।

१. विस्तार और ज़माना । २. प्रकट । ३. अन्तर । ४. नीचे-ऊपर ।
५. प्रकाश और अन्धकार । ६. अर्थ और रूप । ७. स्वतन्त्र ।

[८८]

काबा पहुँचा तो क्या हुआ ऐ शेख,
सई^१ कर टुक पहुँच किसी दिल तक ।
बुझ गये हम चिराग-से बाहर,
कहियो ऐ बाद शमए-महफ़िल तक ।*

[८९]

शायद कि देवे रुखसते गुलशन हो बेकरार,
मेरं क़फ़सको ले तो चलो बाग़बाँ तलक ।
क़ैदे - क़फ़ससे छूटके देखा जला हुआ,
पहुँचे न होते काशके हम आशियाँ तलक ।
इतना हूँ नातवाँ कि दरे दिलसे अब गिला,
आता है एक उम्रमें मेरी ज़बाँ तलक ।

[९०]

यों न रोओ त्यों न रोओ वर्ना रोओ प्यारसे,
हर क़दम इस दशतमें पैदा है चश्मे-गिरियानाक ।
बे गुदाज़े दिल नहीं इमक़ान रोना इस क़दर,
तहको पहुँचो ख़ूब तो परदा है चश्मे-गिरियानाक ।

रबीफ़ गाफ़

[९१]

बुत चीज़ क्या कि जिसको खुदा मानते हैं सब,
ख़ुशएतक्राद^२ कितने हैं हिन्दोस्तांके लोग ।

१. अम । २. सुन्दर निष्ठावाले ।

*यहाँ 'तक' से मतलब 'से' से है यानी महफ़िलकी शमासे कहना ।

फ़िरदौस^१को भी^२ आँख उठा देखते नहीं,
किस दर्जे-सीरे-चश्मे^३ हैं कूए - बुतांके लोग ।

[९२]

पावोंमें पड़ गये हैं फफोले मेरे तमाम,
हर गाम राहे इश्कमें गोया दबी है आग ।
जल जलके सब इमारते दिल खाक हो गयी,
कैसे नगरको आह मोहब्बतने दी है आग ।
अब गर्मों सदे^४ देहरसे यकसां नहीं है हाल,
पानी है दिल हमारा कभू तो कभी है आग ।
यारब हमेशा जलती ही रहती हैं छातियाँ,
यह कैसी आशिकोंके दिलोंमें रखी है आग ।
अफसुर्दगीए सोखता जानाँ है क्रह 'मीर',
दामनको टुक हिला कि दिलोंकी बुझी है आग ।

[९३]

रहे-मर्गसे क्यों डराते हैं लोग ।
बहुत उस तरफ़कों तो जाते हैं लोग ।
रहे हम तो खोये गयेसे सदा,
कभू आपमें हमको पाते हैं लोग ।
उन आँखोंके बीमार हैं 'मीर' हम,
बजा देखने हमको आते हैं लोग ।

[९४]

क्या जो अफसुर्दगीके साथ खिला,
 दिल गुले, बेबहारके - से रंग ।*
 वक्त्रे अब्बे बहारने भी लिये,
 अब दिले बेकरारके - से रंग ।
 बर्गे गुलमें न दिलकशी होगी,
 कफ्रे पाये निगारके - से रंग ।

रदीफ़ लाम

[९५]

अल्ला रे अन्दलीबकी आवाज़े - दिलख़राश,
 जी ही निकल गया जो कहा उनने हाय गुल ।
 गुलचीं समझके चुनियो कि गुलशनमें 'मीर'के
 लख्ते-जिगर पड़े हैं नहीं बर्गहाय गुल ।

[९६]

गुलकी जफ़ा भी देखी देखी वफ़ाए बुलबुल ।
 यक मुश्तपर पड़े हैं गुलशनमें जाय बुलबुल ।
 कर सैरे जज़्बे उलफ़त गुलचींने कल चमनमें,
 तोड़ा था शाख़े गुलको निकली सदाय बुलबुल ।

* 'मीर' का एक और शेर है :—

मुद्दत तो बा हुआ ही नहीं गुलबहार बिल ।

अब जो खिला सो जैसे गुले बेबहार बिल ।

१. चित्रित चरणोंके तलवे । २. बुलबुल ।

यकरंगियोंकी राहें* तय करके मर गया है,
गुलमें रंगें नहीं यह हैं नन्नशे-पाये बुलबुल ।

[९७]

बुलबुलको नाज़ क्यों न खयाबाने गुल पे हो,
क्या जाने जीने छातीपै भरकर न खाये गुल ।
कब तक हिनाई पाँव^१ बिन उसके यह बेकली,
लगा जाय टुक चमनमें कहीं आँख पाये-गुल ।
बुलबुलको क्या सुने कोई उड़ जाते हैं हवास,
जब दर्दमन्द कहती है दम भरके* हाय गुल ।
था वस्फ़ उन लबोंका ज़बाने क़लममें 'मीर',
या मुँहमें अन्दलीब के थे बर्गहाय गुल ।

[९८]

खिंचता है उस तरफ़ हीको बेइस्तिyar दिल ।
दीवाना दिल बलाज़दा दिल बेक्ररार दिल ।
समझा भी तू कि दिल किसे कहते हैं दिल है क्या,
आता है जो ज़बां पै तेरी बार-बार दिल ।

रदीफ़ मीम

[९९]

काम क्या आते होंगे मालूमात,
यह तो समझे ही न कि क्या हैं हम ।

१. मेंहदी लगे चरण ।

* 'दम भरके' से अभिप्राय 'गहरी सांस लेकर' से है ।

ऐ बुताँ इस क्रदर 'जफ़ा हमपर,
आक्रबत' बन्दए खुदा हैं हम ।

[१००]

सूख ग़ममें हुए हैं काँटासे,
पर दिलोंमें खटक रहे हैं हम ।
वक्रफ़ए-मर्ग अब ज़रूरी है,
उम्र तय करते थक रहे हैं हम ।

[१०१]

है तहे-दिल बुतोंको क्या मालूम,
निकले परदेसे क्या खुदा मालूम ।
यही जाना कि कुछ न जाना हाय,
सो भी यक उम्रमें हुआ मालूम ।
गर्चे तू ही है सब जगह लेकिन,
हमको तेरी नहीं है जा मालूम ।

[१०२]

सय्याद बहार अबकी सब लूँगा क्या मैं ही,
ठुक बाग़ तलक ले चल मेरा भी क़फ़स ज़ालिम ।
जूँ अम्र मैं रोता था जूँ बर्क़ तू हँसता था,
सोहबत न रही यों ही एक आध बरस ज़ालिम ।

[१०३]

कौन कहता है मुँहको खोलो तुम,
काश के परदे ही में बोलो तुम ।
जाना आया है अब जहाँसे हमें,
थोड़ी तो दूर साथ हो लो तुम ।
रात गुज़री है सब तड़पते 'मीर',
आँख लग जाय टुक तो सो लो तुम ।

[१०४]

याँ आप ही आप आकर गुम आपमें हुए हो ।
पैदा नहीं कि किसकी करते हो जुस्तजू तुम ।
चाहें तो तुमको चाहें देखें तो तुमको देखें,
खाहिश दिलोंकी तुम हो आँखोंकी आरज़ू तुम ।

[१०५]

क्या दिन थे वे देखते तुमको नीची नज़र में कर लेता,
शर्मा-शर्मा लोगोंसे जब आँखें मुझको दिखाते तुम ।
बिस्तरपर मैं मुर्दा-सा था जान-सी मुझमें आ जाती,
क्या होता जो रंजःक्रदम कर मेरे सिरहाने आते तुम ।

[१०६]

यह हुस्ने खलक^१ तुममें इश्क़से पैदा हुआ वर्ना,
घड़ीके रूठेको दो-दो पहर तक कब मनाते तुम ।
नज़र दुज़दीदा^२ रखते हो झुकी रखते हो पलकोंको,
लगी होतीं न आँखें तो न आँखोंको छिपाते तुम ।

१. संसारका सौन्दर्य (शिष्टाचार) । २. छिपी हुई, चुराई हुई ।

यह सारी खूबियाँ दिल लगानेकी हैं मत बुरा मानो,
 किसूका बारे मिन्नत बे-इलाक़ा कब उठाते तुम ।
 फिरा करते थे जब मगरूर अपने हुस्नपर आगे,
 किसूसे दिल लगा जो पूछते हो आते-जाते तुम ।

रदीफ़ नून

[१०७]

बेकली बेखुदी कुछ आज नहीं ।
 एक मुद्दतसे वह मिज़ाज नहीं ।
 दर्द अगर यह है तो मुझे बस है,
 अब दवा की भी एहतियाज नहीं ।
 हमने अपनी-सी की बहुत लेकिन,
 मर्ज़े इश्क़का इलाज नहीं ।
 शहरे खूबीको खूब देखा 'मीर',
 जिसे दिलका कहीं रिवाज नहीं ।

[१०८]

सोज़िशे-दिलसे मुफ़्त गलते हैं ।
 दाग़ जैसे चिराग़ जलते हैं ।
 इस तरह दिल गया कि अब तक हम,
 बैठे रोते हैं हाथ मलते हैं ।

भरी आत्मी हैं आज यों आँखें,
जैसे दरिया कहीं उबलते हैं ।
तेरे बेखुद जो हैं सो क्या चेतें,
ऐसे दूबे कहीं उछलते हैं ।

[१०९]

दें उम्र खिज्र मौसिमे-पीरी^१में तो न ले,
मरना ही उससे खूब है अहदे-शबाब^२में ।
आ निकले थे जो हज़रते 'मीर' इस तरफ़ कहीं,
मैंने किया सवाल यह उनकी जनाबमें ।
हज़रत सुनो तो मैं भी तअल्लुक करूँ कहीं,
फरमाने लगे रोके यह उसके जवाबमें ।
तू जान ले कि तुझसे भी आये जो कल थे याँ,
हैं आज सिर्फ़ खाक जहाने-खराबमें ।

[११०]

मुत्तसिल^३ रोते ही रहिए तो बुझे आतिशे-दिल,^४
एक दो आँसू तो और आग लगा जाते हैं ।
वक्त़ खुश उनका जो हमबज़म हैं तेरे, हम तो,
दरो दीवारको अहवाल सुना जाते हैं ।
एक बीमारे जुदाई हूँ मैं आपी तिसपर,
पूछनेवाले जुदा जानको खा जाते हैं ।

१. बुढ़ापेका ज़माना । २. यौवन-काल । ३. लगातार । ४. हृदय-
की आग ।

[१११] ,

कहियो क्रासिद जो वह पूछे हमें क्या करते हैं ।
 जानो ईमानो मुहब्बतको दुआ करते हैं ।
 रुखसते जुंबिशेलब^१ इश्ककी हैरतसे नहीं,
 मुहत्ते गुजरीं कि हम चुप ही रहा करते हैं ।
 फुर्सते खाब नहीं ज़िक्रे-बुतामें हमको,
 रात-दिन राम कहानी सी कहा करते हैं ।
 यह ज़माना नहीं ऐसा कि कोई ज़ीस्त करे,^२
 चाहते हैं जो बुरा अपना भला करते हैं ।

[११२]

हमचश्म^३ है हर आबलए पा का मेरा अश्क,
 अज़ बस कि तेरी राहमें आँखोंसे चला हूँ ।
 इतना ही मुझे इल्म है कुछ मैं भी बहर चीज़,
 मालूम नहीं खूब मुझे भी कि मैं क्या हूँ ।

[११३]

आँखें जो खुल रही हैं मरनेके बाद मेरी,
 हसरत यह थी कि उसको मैं यक निगाह देखूँ ।
 यह दिल वह जा है जिसमें देखा था तुझको बसते
 किन आँखोंसे अब उजड़ा इस घरको आह देखूँ ।
 आँखें तो तूने दी हैं ऐ जुमें बख़्शो आल्म^४,
 क्या तेरी रहमत^५ आगे अपने गुनाह देखूँ ।

१. ओठका हिलना जो बन्द है । २. जिये । ३. सहदर्शक ।
 ४. संसारके अपराधोंको क्षमा करनेवाले । ५. कृपा, दया ।

[११४]

निकले हैं जिसे-हुस्न किसी कारवानमें ।
यह वह नहीं मुताब कि हो हर दुकानमें ।
यारब कोई तो वास्ता सरगश्तगीका है,
एक इश्क़ भर रहा है ज़मीन आसमानमें ।
फाड़ा हज़ार जासे ग़रेबाने सब्र 'भीर',
क्या कह गयी नसीमे सेहर^१ गुलके कानमें ।

[११५]

न खोल ऐ यार मेरा गोरमें मुँह,
कि हसरत है मेरी जागह कफ़नमें ।
रखाकर हाथ दिलपर आह करते,
नहीं रहता चिराग़ ऐसे पवनमें ।
जले दिलकी मुसीबत अपनी सुनकर,
लगी है आग सारे तन बदनमें ।

[११६]

जिनके लिए अपने तो यों जान निकलते हैं,
इस राहमें वे जैसे अनजान निकलते हैं ।
क्या तीरे सितम उसके सीनेमें भी टूटे थे,
जिस ज़ख़्मको चीरूँ हूँ पैकान^२ निकलते हैं ।

१. सुरभित प्रभाती । २. तीरकी नोक ।

[११७],

हम आप हीको अपना मक्रसूद^१ जानते हैं,
 अपने सिवाय किसको मौजूद जानते हैं ।
 इज्जो नियाज़ अपना अपनी तरफ़ है सारा,
 इस मुश्तेखाकको हम मसजूद^३ जानते हैं ।

[११८]

किया जो अर्ज़ कि दिलसा शिकार लाया हूँ ।
 कहा कि ऐसे तो मैं मुफ़्त मार लाया हूँ ।
 चला न उठके वहीं चुपके चुपके फिर तू 'मीर',
 अभी तो उसकी गलीसे पुकार लाया हूँ ।

[११९]

इन लबोंका जबाब है वह लाल,
 हम तुझीसे सवाल रखते हैं ।
 खाके आदम ही है तमाम ज़मीन,
 पाँवको हम सँभाल रखते हैं ।
 यह जो सर सींचे तो क्रयामत है,
 दिलको हम पायमाल रखते हैं ।

[१२०]

दफ़्तर बनी कहानी बनी मस्नवी बनी,
 क्या शरहे सोज़े इश्क़ क़रूँ मैं ज़बॉ नहीं ।

१. लक्ष्य । २. दीनता । ३. उपास्य । ४. प्रेमान्तिकी व्याख्या, टीका ।

अपना ही हाथ सर पे रहा अपने हाँ सदा,
मुशफ़िक^१ कोई नहीं है कोई मेहबाँ नहीं ।
इस अह्द^२ को न जानिए अगला-सा अह्द 'मीर',
वह दौर अब नहीं वह ज़मी आसमाँ नहीं ।

✓ [१२१]

जोशिशे-अश्कमें शब दिल भी गया सीनेसे,
कुछ न मालूम हुआ हाय असर पानीमें ।
महो कर आपको यूँ हस्तीमें उसकी जैसे,
बूँद पानीकी नहीं आती नज़र पानी में ।

[१२२]

बेकली दिल ही की तमाशा थी,
बर्क़में^३ ऐसे इज़तिराब^४ कहाँ ?
हस्ती अपनी है बीचमें परदा,
हम न होवें तो फिर हिजाब^५ कहाँ ?

[१२३]

यारो मुझे मुआफ़ करो, मैं नशेमें हूँ ।
अब दो तो ज़ाम ख़ाली ही दो मैं नशेमें हूँ ।
एक-एक फ़र्ते-दौरमें यूँ ही मुझे भी दो,
ज़ामे-शराब पुर न करो मैं नशेमें हूँ ।
मस्तीसे दरहमी^६ है मेरी गुफ़्तगूके बीच,
जो चाहो तुम भी मुझको कहो, मैं नशेमें हूँ ।

१. मित्र । २. युग । ३. घबराहट, बेक्रारी । ४. परदा; आड़,
लज्जा । ५. बिखराव, अस्तव्यस्तता ।

या हाथों हाथ लो मुझे भानिन्द जामे-मय,
 या थोड़ी दूर साथ चलो मैं नशेमें हूँ ।
 माज़ूर^२ हूँ जो पाँव मेरा बे-तरह पड़े,
 तुम सरगराँ^३ तो मुझसे न हो मैं नशेमें हूँ ।
 भागी नमाज़े जुमा तो जाती नहीं है कुछ,
 चलता हूँ मैं भी टुक तो रहो मैं नशेमें हूँ ।
 नाज़ुकमिज़ाज आप क्रयामत हैं 'मीर' जी,
 जूँ शीशा मेरा मुँह न लगो मैं नशेमें हूँ ।

[१२४]

काश के दिल दो तो होते इश्कमें ।
 एक रहता एक खोते इश्कमें ।
 खाबमें देखा उसीको एक रात,
 बरसों काटे हमने सोते इश्कमें ।

[१२५]

इस ढंगसे हिला कि बजा दिल नहीं रहे,
 इस गोशके गुहरसे^४ दम आये हैं नाकमें ।
 अबकी जुनूँमें फ़ासला शायद न कुछ रहे,
 दामनके चाक और गरेबाँके चाकमें ।

[१२६]

क्या क्या लक़ब^५ हैं शौक़के आलममें यारके,
 काबा लिखूँ कि क़िबला उसे या खुदा लिखूँ ।

१. मधुपात्रकी भाँति । २. निषेध किया हुआ । ३. अप्रसन्न ।
 ४. कानके मोतीसे । ५. उपाधियाँ ।

हैराँ हो मेरे हालमें कहने लगा तबीब,
इस दर्दमन्दे-इश्ककी मैं क्या दवा लिखूँ ।

[१२७]

ऐ काश हमको सुक्रेकी हालत रहे मुदाम,
ता हालकी खराबीसे हम बेखबर रहें ।*
रहते हैं यूँ हवास परीशों कि जूँ कहीं,
दो तीन आके लूटे मुसाफिर उतर रहें ।

[१२८]

सदा हम तो खोये गयेसे रहे,
कमू आपमें तुमने पाया हमें ।
शब आँखोंसे दरिया सा बहता रहा,
उन्हींने किनारे लगाया हमें ।

[१२९]

जुल्मो सितम क्या जौरो जफ़ा क्या जो कुछ कहिए उठाता हूँ ।
खिप्रफ़त खींच के^३ जाता हूँ रहता नहीं दिल फिर आता हूँ ।

१. चिकित्सक । २. बेहोशी । *इस बेखुदीकी हालतपर कुछ शेर हैं :-

मयसे सरज निशात है किस रु-सियाहको ।

इक गूना बेखुदी मुझे बिन रात चाहिए । —ग़ालिब ।

ती होशमें आनेकी जो साज़ीसे इजाजत,

फरमाया खबरदार कि नायुक है ज़माना । —हाली ।

स्वाहम कि यह बेखुदी बरभारम नफ़्सी,

मी खुर्बन व मस्तबूदनम जीं सबवे अस्त ।—उमर ख़याम ।

३. ज़िल्लत उठाकर ।

घरसे उठकर कोनेमें बैठा बेत पढ़े दो बातें कीं,
किस किस तौरसे अपने दिलको उस बिन मैं बहलाता हूँ ।

[१३०]

जब लगा गये भ्रमकने रुखसारे-यार दोनों,
तब मेहो-महने अपनी आँखें झुकालियाँ हैं ।
सुबहे-चमनका जलवा हिन्दी बुतोंमें देखा
सन्दल भरी जर्बी हैं होंठोंकी लालियाँ हैं ।
उन गुरुखोंकी क्रामत लहके है यूँ हवामें,
जिस रंगसे लचकती फूलोंकी डालियाँ हैं ।
वह दुःखदे दिल नहीं तो क्यों देखते ही मुझको,
पलकें झुकालियाँ हैं आँखें चुरालियाँ हैं ।

[१३१]

कहा मैं दर्दे-दिल या आग उगली,
फफोले पड़ गये मेरी जर्बाँमें ।
तेरी शोरिश भी बेकल है मगर 'मीर',
मिला दी पीसकर बिजली फुगाँमें^२ ।

•

[१३२]

उससे घबराके जो कुछ कहनेको आ जाता हूँ ।
दिलकी फिर दिलमें लिये चुपके चला जाता हूँ ।
मजलिसे-यारमें तो बार नहीं पाता हूँ ।
दरो-दीवारको अहवाल सुना जाता हूँ ।

[१३३]

तुफ़ान^१ खुशरू दमे खूँरेज़ अदा करते हैं ।
 वार जब करते हैं मुँह फेर लिया करते हैं ।
 दिलको जाना था गया रह गया है अफ़साना,
 रोज़ो-शब हम भी कहानी सी कहा करते हैं ।

[१३४]

वह संग-दिल न आया बहुत देखी उसकी राह,
 पथरा चली हैं आँख मेरी इन्तज़ारमें ।
 किस किस अदासे रेखते मैंने कहे वले,
 समझा न कोई मेरी ज़बाँ इस दयारमें ।

रदीफ़ वाच

[१३५]

हुए थे जैसे* मर जाते, पर अब तो सख्त हसरत है,
 किया दुश्वार^२ नादानीसे हमने कारे आसोंको ।
 तुझे गर चश्मे-इबरत है तो आँधी औ बगोलेसे,
 तमाशा कर गुबार अफ़शानिए-खाके-अज़ीज़ोंको ।
 कोई काँटा सरे रहका हमारी खाकपर बस है,
 गुले-गुलज़ार क्या दरकार है गोरे ग़रीबोंको ।
 सदाये-आह जैसे तीर, जीके पार होती है,
 किसू बेदर्दने खींचा किसूके दिलसे पैकाँ^३ को ।

१. बिचित्र । * तात्पर्य यह है कि पैदा होते ही मर गये होते ।

२. कठिन । ३. तीरकी नोक ।

[१३६]

गर्चे कब देखते हो पर देखो ।
 आरजू है कि तुम इधर देखो ।
 इशक क्या-क्या हमें दिखाता है,
 आह, तुम भी तो एक नज़र देखो ।

[१३७]

उसकी तर्ज़े-निगाह मत पूछो ।
 जी ही जाने है आह मत पूछो ।
 कहीं पहुँचोगे बेरहीमें भी,
 गुम रहा यों यह राह मत पूछो ।

[१३८]

तेवरमें जबसे देखे है साक्री खुमारके,
 पीता हूँ रखके आँखों पै जामेशराबको ।
 अब तो नक्राब मुँह पै ले ज़ालिम कि शब हुई,
 शर्मिन्दा सारे दिन तो किया आफ़ताबको ।
 कहनेसे 'मीर' और भी रोता है मुज़तरब,
 समझाऊँ कब तक इस दिले-ख़ानाख़राबको ।

[१३९]

बरसोंमें कभू ईधर तुम नाज़से आते हो ।
 फिर बरसों तई प्यारे जीसे नहीं जाते हो ।
 रहते हो तुम आँखोंमें फिरते हो तुम्हीं दिलमें,
 मुद्तसे अगर्चे यों आते हो न जाते हो ।

खुश करनेसे टुक पूसे नाखुश ही रखा करिए,
हँसते हो घड़ी भर तो पहरों ही रुलाते हो ।
दिल खोलके मिल चलिए जो 'मीर'से मिलना है,
आँखें भी दिखाते हो फिर मुँह भी छिपाते हो ।

[१४०]

करते हो तुम नीची नज़रें यह भी कोई मुरौबत है,
बरसोंसे फिरते हैं जुदा हम आँखसे आँख मिलाने दो ।
क्या जाता है इसमें हमारा चुपके हम तो बैठे हैं,
दिल जो समझना था सो समझा नासेह^१ को समझाने दो ।

[१४१]

सर पे आशिक्रके न यह रोज़े-सियह^२ लाया करो ।
जी उलझता है बहुत मत बाल सुलझाया करो ।
शौक्रसे दीदारके भी आँखोंमें खिंच आया जी,
इस समयमें देखने हमको बहुत आया करो ।

[१४२]

रहने से मेरे पासके बदनाम हुए तुम,
अब जाके रहो वाँ कहीं रुसवा^३ न जहाँ हो ।
कुछ हाल कहें अपना नहीं बेखुदी तुजको,
ग़श आता है लोगोंको यह अफ़साना जहाँ हो ।
इन उजड़ी हुई बस्तियोंमें दिल नहीं लगता,
है जीमें वहीं जा बसँ वीराना जहाँ हो ।

१. उपदेशक (नसीहत करनेवाला) । २. काला दिन । ३. बदनाम ।

रवीन्द्र हे

[१४३]

आग थे इब्तिदाए-इश्क^१में हम,
 अब जो हैं ख़ाक इन्तिहा^२ है यह ।
 बूदे-आदम^३ नमूदे-शबनम^४ है,
 एक दो दममें फिर हवा है यह ।
 शुक्र उसकी जफ़ा^५का हो न सका,
 दिलसे अपने हमें गिला^६ है यह ।
 शोरसे अपने हश्र^७ है परदा,
 यों नहीं जानता कि क्या है यह ।

[१४४]

क्या कहूँ तुझसे कि क्या देखा है तुझमें मैंने,
 इश्क^८ वो गमज़^९ वो अन्दाज़ो अदा क्या-क्या कुछ ।
 दिल गया, होश गया, सब्र गया, जी भी गया,
 शग़्लमें ग़मके तेरे हमसे गया क्या-क्या कुछ ।
 हसरते-वस्ल^{१०} वो ग़मेहिज़^{११} वो ख़याले-रुख़े-दोस्त^{१२},
 मर गया मैं पै मेरे जीमें रहा क्या-क्या कुछ ।
 दर्दे दिल, ज़ख़्मे जिगर, कुलफ़ते ग़म, दाग़े फ़िराक़,
 आह आलमसे मेरे साथ चला क्या-क्या कुछ ।

१. प्रेमारम्भ । २. अन्त । ३. मानवका अस्तित्व । ४. ओस-कणकी भाँति । ५. जुल्म, अन्याय । ६. शिकायत । ७. प्रलय । ८. नाज़-नख़रा । ९. आँख मारना, नख़रा, अदा । १०. मिलनकी लालसा । ११. वियोग-दुःख । १२. प्रियतमके मुखका ध्यान ।

• [१४५]

बूद नम्रशो निगार^१ सा है कुछ ।
 सूरत एक एतबार सा है कुछ ।
 यह जो मोहलत जिसे कहे हैं उम्र,
 देखा तो इन्तजार सा है कुछ ।
 क्या है देखो हो जो उधर हरदम,
 और चितवनमें प्यार सा है कुछ ।

[१४६]

आँखें जो हों तो ऐन है मक्रसूद हर जगह ।
 बिलज्जात है जहाँमें वह मौजूद हर जगह ।
 वाक्रिक्र हो शाने बन्दगी^२ से क़ैदे क़िब्ला^३ क्या,
 सर हर कहीं झुका कि है मसजूद^४ हर जगह ।

[१४७]

न बातें करो सरगरानीके साथ ।
 मेरी ज़ीस्त है मेहबानीके साथ ।
 न उठकर दरे-यारसे जा सके,
 यह कम लुफ़ है नातवानीके साथ ।

रवीफ़ इये

[१४८]

मुद्दत हुई न ख़त है न पैग़ाम है मगर,
 एक रस्म वफ़ाकी बर उप्ताद^५ हो गयी ।

१. तस्वीरकी भाँति । २. उपासनाकी रीति । ३. काबेकी उपास्य
 भूमिकी ही कैद क्या है ? ४. उपास्य । ५. परम्पराकी समाप्ति ।

दिल किस क्रदर शिकस्ता हुआ था कि रात 'मीर',
आई जो बात लब पे सो फरयाद हो गयी ।

[१४९]

उसके ईफ्राए अहद^१ तक न जिये,
उम्रने हमसे बेवफाई की ।
वस्लके दिनकी आरजू ही रही,
शब न आखिर हुई जुदाईकी ।
कासए चश्म^२ लेके जूँ नरगिस,
हमने दीदारकी गदाई की ।^३

[१५०]

काबा सौ बार वह गया तो क्या,
जिसने याँ एक दिलमें राह न की ।
जिससे थी चश्म हमको क्या क्या 'मीर',
उस तरफ़ उनने एक निगाह न की ।

[१५१]

कहाँका गुबार आह दिलमें यह था,
मेरी खाक बदली सी सब छा गयी ।
हुई सामने यूँ तो एक-एक के,
हमीसे वह कुछ आँख शर्मा गयी ।

१. वादेकी पूर्ति । २. नयन-पात्र । ३. हमने दर्शनकी भीख माँगी ।

[१५२]

क्या करूँ शरह^१ खिस्ताजानीकी ।
मैंने मर मरके ज़िन्दगानीकी ।
तिशनालब^२ मर गये तेरे आशिक्र,
न मिली एक बूँद पानीकी ।
जिससे खोई थी नौद 'मीर'ने कल,
इब्तिदा फिर वही कहानी की ।

[१५३]

गोर^३ किस दिल जलेकी है यह फ़लक,
शोला एक सुबह योंसे उठता है ।
ख़ानए-दिल^४से ज़ीनहार^५ न जा,
कोई ऐसे मक़ाँसे उठता है ।
यों उठे आह उस गलीसे हम,
जैसे कोई जहाँ^६ से उठता है ।

[१५४]

कली कहते हैं उसका सा देहर्न^७ है ।
सुना करिए कि यह भी एक सख़ुन है ।
टपकते दर्द हैं आँसूकी जागह,
इलाही चश्म या ज़र्रमे कुहर्न^८ है ।

१. टीका, भाष्य । २. प्यासे ओठवाले । ३. समाधि, कब्र । ४. हृदय-
मन्दिर । ५. हरगिज़ । ६. संसार । ७. मुख । ८. पुराना ।

[१५५] *

सरापा आरजू^१ होनेने बंदा कर दिया हमको,
 वगर्ना हम खुदा थे गर दिले बेमुद्दा^२ होते ।*
^३फ़लक पे काश हमको खाक ही रखता कि इसमें हम,
 गुबारे-राह^४ होते या किसूकी खाके-पा^५ होते ।
 इलाही कैसे होते हैं जिन्हें है बंदगी खाहिश,
 हमें तो शर्म दामनगीर होती है खुदा होते ।
 कहें जो कुछ मलामतगर^६ बजा है, 'मीर' क्या जाने,
 उन्हें मालूम तब होता कि वैसेसे जुदा होते ।

[१५६]

चमन यार तेरा हुआ खाह है ।
 गुल एक दिल है जिसमें तेरी चाह है ।
 सरापा^७ में उसके नज़र करके तुम,
 जहाँ देखो अल्लाह अल्लाह है ।
 तेरी आह किससे खबर पाइए,
 वही बेखबर है जो आगाह है ।

१. सशरीर कामना । २. कामना-रहित हृदयवाले । * किसी और कविने भी कहा है :—

हम खुदा थे गर न होता दिलमें कोई मुद्द्दा,
 आरजूओंने हमारी हमको बंदा कर दिया ।

३. आकाश । ४. राहकी धूल । ५. चरण-धूलि । ६. मलामत करनेवाले ।
 ७. नखशिख ।

कभी वादिए-इश्क^१ दिखलाइए,
 बहुत खिज^२ भी दिलमें गुमराह है ।
 जहाँसे तो रस्ते-अक्रामत^३को बाँध,
 यह मंज़िल नहीं बेखबर राह है ।
 न शर्मिन्दा कर अपने मुँहसे मुझे,
 कहा मैंने कब यह कि तू माह^४ है ।

[१५७]

जाए रोगन दिया करे है इश्क,
 खूने-बुलबुल चिरागमें गुलके ।
 दिल तसल्ली नहीं सबा वर्ना,
 जलबे सब हेंगे दागमें गुलके ।

[१५८]

हस्ती अपनी हुबाबकी-सी है ।
 यह नुमाइश सुराबकी-सी है ।
 नाज़की उसके लबकी क्या कहिए,
 पंखड़ी एक गुलाबकी-सी है ।
 चश्मे दिल खोल उस भी आलमपर,
 याँकी औक्रात खाबकी-सी है ।

१. प्रेमकी घाटी । २. एक प्रसिद्ध पैगम्बर जिनके बारेमें प्रसिद्ध है कि उन्होंने अमृत-पान किया है और लोगोंको राह बताया करते हैं ।
 ३. अस्तित्वके सामान । ४. चांद ।

बार-बार उसके दर पे जाता हूँ,
हालत अब इजतिराबकी-सी है ।
'मीर' उन नीमबाज़ आँखोंमें,
सारी मस्ती शराबकी-सी है ।

[१५९]

ताकि वह दुक आनके पूछे कभू,
इसलिए बीमार हुआ चाहिए ।
मुस्तबए बेखुदी^१ है यह जहाँ,
जल्द ख़बरदार हुआ चाहिए ।

[१६०]

पासे नामूसे इश्क^२ था वर्ना,
कितने आँसू पलक तक आये थे ।
'मीर' साहब रुला गये सबको,
कल वे तशरीफ़ याँ भी लाये थे ।

[१६१]

ख़ूब ही ऐ अत्र यक शब आओ बाहम रोइए ।
पर न इतना भी कि डूबे शहर कम-कम रोइए ।
वक्त ख़ुश देखा न इकदमसे ज़ियादा देहमें,
ख़न्दए सुबहे चमन^३ पर मिस्ले शबनम रोइए ।
शादी वो ग़ममें जहाँकी एकसे दसका फ़र्क़,
ईदके दिन हँसिये तो दस दिन मोहर्रम रोइए ।

१. बेखुदीका सौदा बेचनेका चबूतरा । २. प्रेमकी बदनामीका खयाल ।
३. उद्यानके हँसते हुए प्रभात ।

[१६२]

बुर्केको उठा चेहरेसे वह बुत अगर आवे ।
अल्लाहकी क्रुदरतका तमाशा नजर आवे ।
खुलनेमें तेरे मुँहके कली फाड़े गरेबाँ,
हिलनेमें तेरे होठोंके गुल बर्ग तर आवे ।

[१६३]

कहाँ ऐ रश्के-आबे-ज़िन्दगी' है तू कि याँ तुम बिन,
हर एक पाकीज़ा गौहर जीसे अपने हाथ धोता है ।
लगा मुर्देको मेरे देखकर वह नासमझ कहने,
जवानीकी है नींद इसको कि इस गफलतसे सोता है ।
न रक्खो कान नज़्मे शायराने हालपर इतने,
चलो ठुक 'मीर' को सुनने कि मोतीसे पिरोता है ।

[१६४]

करे क्या कि दिल भी तो मजबूर है ।
ज़मीं सख्त है आसमाँ दूर है ।
तमन्नाए दिलके लिए जान दी,
सलीक़ा हमारा तो मशहूर है ।

[१६५]

सिजदा करनेमें सर कटे हैं जहाँ,
सो तेरा आस्तान है प्यारे ।

गुफ्तगू रेखतेमें हमसे न कर,
 यह हमारी ज़बान है प्यारे।
 छोड़े जाते हैं दिलको तेरे पास,
 यह हमारा निशान है प्यारे।

[१६६]

ग़ालिब कि यह दिलखस्ता शबे हिज़्रमें मर जाय।
 यह रात नहीं वह जो कहानीमें गुज़र जाय।
 नै बुतकदा है मंज़िले मक़सूद न काबा,
 जो कोई तलाशी* हो तेरा आह किधर जाय।
 याक़ूत कोई इनको कहै है कोई गुलबर्ग़,
 टुक होंठ हिला तू भी कि एक बात ठहर जाय।

[१६७]

हँसते हो रोते देखकर ग़मसे।
 छेड़ रक्खी है तुमने क्या हमसे।
 सबने जाना कहीं यह आशिक़ है,
 बह गये अश्क दीदए-नम से।
 मुफ़्त यों हाथसे न खो हमको,
 कहीं पैदा भी होते हैं हमसे।
 कोई बेग़ाना गर नहीं मौजूद,
 मुँह छिपाना यह क्या फिर हमसे।

* 'तलाशी' यहाँ तुर्की भाषाके शब्द-रूपमें आया है जिसका अर्थ होता है तलाश करनेवाला। फ़ारसी और उर्दूमें इसके स्थानपर मतलाशी शब्द प्रयुक्त होता है।

[१६८]

मेरी खल्लो महवे कलाम^१ सब मुझे छोड़ते हैं खमोश कब,
मेरा हर्फ^२ रश्के किताब है मेरी बात लिखनेका बाब है ।
जो वह लिखता कुछ भी तो नामाबर कोई रहती मुँहमें तेरी जुबाँ,
तेरी खामुशीसे यह निकले है कि जवाब खतका जवाब है ।
नहीं खुलतीं आँखें तुम्हारी टुक कि मआलपर नज़र भी करो,
यह जो वहमकी सी नमूद है इसे खूब देखो तो खाब है ।
मेरा शोर सुनके जो लोगोंने किया पूछना तो कहे है क्या,
जिसे 'मीर' कहते हो साहबो यह वही तो खानाखराब है ।

[१६९]

नज़र मुतलक नहीं हिजराँमें उसको हालपर मेरे,
मेरा दिल उसके शममें गोया उसका दिल है क्या जाने ।
तड़पना नक्शे-पाये नाक्रापैर जाने है इक मजनूँ,
बयाबाँमें वह लैलाका किधर महमिल^३ है क्या जाने ।
तरफ़ होना मेरा मुश्किल है 'मीर' इस शेरके फ़नमें,
यँ ही सौदा कभी होता है सो जाहिल है क्या जाने ।

[१७०]

याँ तो आई नहीं शतरंजे-ज़मानेकी चाल,
और वहाँ बाज़ी हुई मात चली जाती है ।

१. मेरी बाणी (कविता) पर मुग्ध दुनिया । २. दाग, दोष, अप-
राध । ३. ऊँटनीका पद-चिह्न । ४. परदेदार पालकी गाड़ी ।

रोज़ आने पै नहीं निस्वस्ते इश्क़ी मौक़ूफ़,
उम्र भर एक मुलाक़ात चली जाती है ।

[१७१]

मेरे तग़य्युरे हालपर मत जा
इत्तिफ़ाक़ात हैं ज़मानेके ।
दमे आख़िर ही क्या न आना था,
और भी वक़्त थे बहानेके ।

[१७२]

फ़क़ीराना आये सदा^१ कर चले ।
मियाँ ख़ूश रहो हम दुआ कर चले ।
वह क्या चीज़ है आह जिसके लिए,
हर एक चीज़से दिल उठाकर चले ।
कोई नाउमीदाना करते निगाह,
सो तुम हमसे मुँह भी छिपाकर चले ।
दिखाई दिये यों कि बेख़ुद किया,
हमें आपसे भी जुदा कर चले ।
परस्तिश की याँ तक कि ऐ बुत तुझे,
नज़रमें सभोंकी ख़ुदा कर चले ।

[१७३]

करो तवक्कुल^२ कि आशक़ीमें न यों करोगे तो क्या करोगे ।
अल्म^३ जो यह है तो दर्दमन्दो कहाँ तलक़ तुम दवा करोगे ।

[१७४]

इधरसे अब्र उठकर जो गया है ।
हमारी खाकपर भी रो गया है ।
मसायब^१ और थे पर दिलका जाना,
अजब एक सानहा सा हो गया है ।
सिरहाने 'मीर'के कोई न बोलो,*
अभी टुक रोते-रोते सो गया है ।

[१७५]

सरगुज़रत अपनी किस अन्दोह^२से शब कहता था,
सो गये तुम न सुनी आह कहानी उसकी ।
आबलेकी - सी तरह टीस लगी फूट बही,
दर्दमन्दीमें गई सारी जवानी उसकी ।

[१७६]

दुज़दीदा निगह करना फिर आँख मिलाना भी ।
इस लोटते दामनको पास आके उठाना भी ।
पामालिए आशिक्रैको मंजूर रखे जाना,
फिर चालकी ढब चलना ठोकर न लगाना भी ।
बुर्क़ेको उठा देना पर आघे ही चेहरेसे,
क्या मुँहको छिपाना भी कुछ झमकी^३ दिखाना भी ।
देख आँखें मेरी नीची एक मारना पत्थर भी,
जाहिरमें सताना भी परदेमें जताना भी ।

१. कष्ट । * 'सिरहाने मीरके आहिस्ता बोलो' पाठ भी प्रचलित है ।

२. दर्द । ३. प्रेमीका पद-दलन । ४. झलक ।

[१७७]

देखा तो मिस्ले अश्क नज़रसे गिरा दिया,
 अब मेरी उसकी आँखमें इज्जत नहीं रही ।
 दीवानगीसे अपनी है अब सारी बात खब्त,
 इफ़राते इश्तियाक़^१से वह मत नहीं रही ।

[१७८]

यों तो मुरदेसे पड़े रहते हैं हम,
 पर वह आता है तो आ जाता है जी ।
 हाय उसके शर्बती लबसे जुदा,
 कुछ बताशा-सा घुला जाता है जी ।
 क्या कहें तुमसे कि उस शोले बग़ैर,
 जी हमारा कुछ जला जाता है जी ।
 उठ चले पर उसके ग़श करते हैं हम,
 यानी साथ उसके चला जाता है जी ।

[१७९]

इलाही कहाँ मुँह छिपाया है तूने ।
 हमें खो दिया है तेरी जुस्तजूने ।
 जो ख़ाहिश न होती तो काहिश^२ न होती,
 हमें जीसे मारा तेरी आरजूने ।

[१८०]

काबे गये क्या कोई मक़सद^१को पहुँचता है,
क्या सई^२से होता है जब तक न खुदा चाहे ।
हम इज्ज^३से पहुँचे हैं मक़सूदकी मंजिलको,
वह ख़ाकमें मिल जावे जो उससे मिला चाहे ।

[१८१]

छाती जला करे है सोज़े दरूँ बलासे^४,
एक आग सी लगी है क्या जानिए कि क्या है !
मैं और तू हैं दोनों मजबूर तौर अपने,
पेशा तेरा जफ़ा^५ है, शेबा^६ मेरा वफ़ा^७ है ।
फिरते हो 'मीर' साहब सबसे जुदा जुदा तुम,
शायद कहीं तुम्हारा दिल इन दिनों लगा है ।

[१८२]

हमारा तो है अस्ले मुद्आ तू,
खुदा जाने तेरा क्या मुद्आ है ।
'हरमसे देर'^८ उठ जाना नहीं ऐब
अगर यौ है खुदा वाँ भी खुदा है ।
न आलममें है नै आलमसे बाहर,
यह सब आलमसे आलम ही जुदा है ।

१. लक्ष्य । २. परिश्रम, यत्न । ३. दैन्य । ४. प्रबल आन्तरिक ज्वाला ।
५. अन्याय । ६. परम्परा, ढंग । ७. निष्ठा । ८. मस्जिद । ९. मन्दिर ।

[१८३ ,]

लुप्त उसके बदनका कुछ न पूछो ,
 क्या जानिए जान है कि तन है ।
 गह देरमें हैं गहे हरममें ,
 अपना तो यही दिवानापन है ।
 हम कुश्तए - इश्क हैं हमारा ,
 मैदानकी खाक ही कफ़न है ।

[१८४]

हर सुबह उठके तुझसे माँगूँ हूँ मैं तुझीको ,
 तेरे सिवाय मेरा कुछ मुद्दा नहीं है ।
 मैं रोऊँ तुम हँसो हो क्या जानो 'मीर' साहब ,
 दिल आपका किसूसे शायद लगा नहीं है ।

[१८५]

ऐसा न हुआ होगा कोई वाक़आ आगे ,
 एक खाहिशे दिल साथ मेरे जीती गड़ी है ।
 क्या नक्शमें मजनुँ हीके थी रफ़्तगीए-इश्क ,
 लैलाकी भी तस्वीर तो हैरान खड़ी है ।

[१८६]

हम तौरे इश्कसे तो वाक़िफ़ नहीं हैं लेकिन,
 सीनेमें जैसे कोई दिलको मला करेहै ।

क्या चाल यह निकाली होकर जवान तुमने,
अब जब चलो हो दिलको ठोकर लगा करे है ।
समझा है यह कि मुझको खाहिश है ज़िंदगीकी,
किस नाज़से मुआलिज^१ मेरी दवा करे है ।
एक आफ़ते ज़माँ है यह 'मीर' इश्क़पेशा,
परदेमें सारे मतलब अपने अदा करे है ।

[१८७]

किसको कहते हैं नहीं मैं जानता इस्लामो कुफ़,
देर हो या काबा मतलब मुझको तेरे दरसे है ।*
अशक़ पै दर पै चले आते थे चश्मे ज़ारसे,
हर निगहका तार माना रिश्तए-गौहरसे है ।

[१८८]

शेर मेरे हैं सब ख़वास-पसन्द^२,
पर मुझे गुफ़्तगू अवाम^३से है ।†
सर झुकाऊँ तो और टेढ़े हो,
क्या तुम्हें चिढ़ मेरे सलामसे है ।

१. चिकित्सक । २. विशिष्ट जन-प्रिय । ३. सामान्यजन ।

* उर्फी कहता है:—

आशिक् हम अज इस्लाम ख़राबात हम अज कुफ़,
परवाना ख़िराये हरम ब देर न दानद ।

† फ़ैजी कहता है:—

हबीस मतलबे मा मुद्आए ख़ेर लबी अस्त ।
कि अहले बख़्श अबास अन्दो गुफ़्तगू अरबी अस्त ।

सहल है 'मीर' का सुमझना क्या,
हर सखुन उसका एक मुक्तामसे है ।

[१८९]

सोजे दरूने आखिर जी ही खपा दिया है,
ठंडा दिल अब है ऐसा जैसे बुझा दिया है ।
आँखोंकी कुछ हया थी सो मूँद लों इधरसे,
परदा जो रह गया था वह भी उठा दिया है ।

[१९०]

सर किसूसे फ़रो' नहीं आता,
हैफ़ बन्दे हुए खुदा न हुए ।
कैसा कैसा क़फ़ससे सर मारा,
मौसिमे गुलमें हम रिहा न हुए ।

[१९१]

बहार आई निकालो मत मुझे अबके गुलिस्तांसे ।
मेरा दामन बने तो बाँध दो गुलके गरेबांसे ।
खुदा जाने कि दिल किस खाना आबादाँको दे बैठे ,
खड़े थे मीर साहब घरके दरवाज़े पै हैरां-से ।

[१९२]

मौसिम है निकले शाखोंसे पत्ते हरे हरे ।
पौधे चमनमें फूलोंसे देखे भरे भरे ।

आगे किसूके क़या करें दस्ते तमअ^१ दराज़^२,
वह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे ।

[१९३]

इतने लोगोंमें चश्म किसूकी क़ह क़यामत आफ़त है,
तुमने देखी नहीं है साहब आँख कोई शर्माई हुई ।
हम क़ैदी भी मौसिमे गुलकी कबसे तवन्नक़ा^३ रखते थे,
देर बहार आई अबकी पै असीरोंकी^४ न रिहाई हुई ।

[१९४]

आलम आलम इश्क़ोजुनूँ है दुनिया दुनिया तोहमत है ।
दरिया दरिया रोता हूँ मैं सेहरा सेहरा वहशत है ।
खाकको आदम करके उठाया जिसके दस्ते क़ुदरतने,
क़दर नहीं कुछ उस बन्देकी यह भी खुदाकी क़ुदरत है ।
क़्या दिलक़श है बज़्म जहाँकी जाते यहाँ जिसके देखो,
वह ग़मदीदा रंजक़शीदा आह सरापा हसरत है ।



१. लोभका हाथ । २. फैलाऊँ । ३. आशा । ४. बन्दियों ।

विविध काव्य

स्फुट

रखाकर हाथ दिलपर आह करते,
नहीं रहता चिराग़ ऐसी पवनमें ।

X

X

तेरी जुल्फ़े सियहकी यादमें आँसू झमकते हैं ।
अँधेरी रात है, बरसात है, जुगनू चमकते हैं ।

X

X

आनेके वक्त तुम तो कहींके कहीं रहे ।
अब आये तुम तो फ़ायदा हम ही नहीं रहे ।

X

X

उनने देखा जो उठके सोते से ।
उड़ गये आइनेके तोतेसे ।

X

X

रहे तलबमें गिरे होते सरके बल हम भी,
शिकस्तापाईने अपनी हमें सँभाल लिया ।

X

X

ख़ूब किया जो अहले करमके जूदका कुछ न ख़याल किया ।
हम जो फ़क़ीर हुए तो हमने पहले तर्क सवाल किया ।

X

X

वस्लमें रंग उड़ गया मेरा,
क्या जुदाईको मुँह दिखाऊँगा ।

X

X

कोई हो महरमे शोखी तेरु तो मैं पूछूँ,
कि बज़मे-ऐशे-जहाँ^१ क्या समझके बरहम^२ की ।

X

X

बस न लगा, चल नसीम मुझसे कि मैं,
रह गया हूँ चिराग़ सा बुझकर ।

रुबाइयाँ

दामन अज़लतका^३ अब लिया है मैंने,
दिल मर्गसे^४ आशना किया है मैंने ।
था चश्मए आबे ज़िन्दगानी^५ नज़दीक,
पर खाकसे उसको भर दिया है मैंने ।

X

X

बुतख़ानेसे दिल अपने उठाये न गये ।
काबेकी तरफ़ मिज़ाज लाये न गये ।
तौरे मस्जिदको बरहमन क्या जाने,
याँ मुद्दते उम्रमें हम आये न गये ।

X

X

दिल खून हुआ ज़ब्त ही करते करते ।
हम हो ही चुके दुखोंके भरते भरते ।
ऐ मायए ज़िन्दगी^६ सितम है यह अगर,
भर आँख तुझे देखें न मरते मरते ।

X

X

१. संसार की सुख-सभा । २. बिखेरना । ३. एकान्त । ४. मृत्यु ।
५. अमृतका स्रोत । ६. जीवन-धन ।

चुपके रहनाभन मीर दिलमें ठानो ।
बोलो चालो कहा हमारा मानो ।
एक हर्फ न कह सकोगे वक्तो रफ्तान^१,
चलनेके ज़बानके ग़नीमत जानो ।

मुस्तज़ाद

ता चंद ग़मे दिलसे हिकायत करिये, हो होकर तंग ।
किस किससे शबो रोज़ शिकायत करिये, आता है नंग^२ ।
सस्ती कोई ऐ सनम कहाँ तक खींचे, है जीमें कि अब,
हो नाला तेरे दिलमें सरायत^३ करिये, पर तू है संग^४ ।

मुसल्लस (त्रिपदी)

ऐ वफ़ाए गुलके आशिक सबमें है यह राज़ फाश^५ ।
जूँ सबा बेहूदा सरगरदाने ई गुलशन मुबाश^६ ।
मन चे गुल चीदम कि उम्रे बाग़बानी कदा अम ।

×

×

×

आई थी मुलाक़ातकी राह उसके वले^७ सूद^८ ।
ताचश्म कुनम बाज़ शबेवस्ल सेहर सूद ।
उम्रे गुज़राँ बरसरे इन्साफ़ नयामद ।

मुखम्मस (पंचपदी)

तेरा हूँ ख़ुवार तेरी शान की मुझे सौगंद ।
मरूँ हूँ तुझपे तेरी जानकी मुझे सौगंद ।

१. चलते समय (मृत्युकालमें) । २. लज्जा । ३. प्रभाव । ४. पत्थर ।
५. रहस्य-भेद । ६. खुश । ७. किन्तु । ८. लाभ ।

तुझीको जपता हूँ ईमानकी मुझे सौगंद ।
 यही बज़ीफ़ा है कुरआनकी मुझे सौगंद ।
 तुझीसे बंदगी रखता हूँ मैं खुदाकी क्रसम ।

×

×

×

रहे है मद्दे नज़र तेरी जुल्फ़ काकुल व ख़ाल^१ ।
 फिरा करे है मेरी आँखोंमें तेरी ही चाल ।
 शबोंको तेरा तसव्वुर दिनोंको तेरा खयाल ।
 मरीज़े दिल हूँ मेरा आबिदी^२ है शाहिदे^३ हाल ।
 इसी सितमज़दह बीमारो बेदबाकी क्रसम ।

तरकीबबंद

[गज़लकी ही तरह है । मक़ता (अन्तिम पद) भिन्न क़ाफ़िये और रदीफ़में होता है और उसी अन्तिम क़ाफ़िया और रदीफ़का बाद वाले खण्ड में अनुसरण करते हैं]

गरमी तू कर ऐ सनम कि आख़िर,
 पत्थरके जिगरमें भी शर्र^४ है ।
 आनेसे डर न दिलमें मेरे,
 खूबों^५ यह तो तुम्हारा घर है ।
 चुप हूँ गोया हूँ बेज़बाँ मैं ।
 रखता हूँ अजब लव वो देहाँ मैं ।

×

×

१. कपोलका तिल । २. परहेज़गार, उपासक । ३. गवाह ।
 ४. चिनगारी । ५. सुन्दर, प्रिय ।

हूँ मैं तो चिराग़ अख़ीर शबका,
कोई दमका हूँ मेहमाँ मैं ।
दिलसोज़ी मेरी कर ऐ सबा टुक,
होने तई सुबहके कहाँ मैं ।
बारे मैं यह तैयार देखा ।
हर कूचेको बार-बार देखा ।

×

×

आँखें गईं रोते-रोते लोकिन,
तुने न इधरको यार देखा ।
पूछा हमारे बाद हमको,
यारो यह जहाँका प्यार देखा ।
देखा तो मिला न कोई हमफ़न ।
देखे यहाँ शैख और बरहमन ।

×

×

आँखोंमें ठहर रहे हैं आँसू,
होठों पै धरा रहे है शेवन^१ !
तुम बिन नहीं साँस और कुछ है,
चुभता है जिगरमें होके सोज़न ।

(इसी प्रकार) ।

वासोरूत और मुसद्दस (बट्पदी)

तर्के-इखलास^१ किया सबसे, तुझे प्यार किया ।
 रहम दिलपर न किया जानको आज्ञार किया ।
 चाहसे अपनी अबस तुझको खबरदार किया ।
 क्या किया हमने कि इस मानीका इज़हार^२ किया ।
 जो कि अलफ़्राज़ न शायी^३ थे सो तू कहने लगा ।
 वजह बेवजह तू रूपोर्श^४ ही अब रहने लगा ।

X

X

X

अब तो जो कुछ हो दिल उस साथ लगा बैटूँगा ।
 उसके दरवाज़े पै दरवेश हो जा बैटूँगा ।
 हाथ वासोरूता हो तुझसे लगा बैटूँगा ।
 आऊँगा भी तो तेरे पास न आ बैटूँगा ।
 दूरसे एक नज़र करके चला आऊँगा ।
 सो भी कितने दिनों फिर काहेको मैं आऊँगा ।

X

X

X

सच कहो शहरमें सेहरामें कहाँ रहते हो ।
 याँ बहुत रहते हो खुशबाश कि वाँ रहते हो ।
 इन दिनों यारोंकी आँखोंसे निहाँ रहते हो ।
 खुश रहो 'मीर' मेरी जान जहाँ रहते हो ।
 एक तरफ़ बैठे हुए हम भी लहू पीते हैं ।
 इश्क़की जान को देते हैं दुआ जीते हैं ।

१. दोस्ती छोड़ी । २. अभिव्यक्त । ३. उचित । ४. मुँह छिपानेवाला ।

मस्नवी शोलप शौक

[संक्षिप्त]

मोहब्बतने जुलमत^१ से काढ़ा है नूर^२ ।
 न होती मोहब्बत न होता ज़हर^३ ।
 मोहब्बत मुसब्बब^४ मोहब्बत सबब^५ ।
 मोहब्बतसे आते हैं कारे अजब ।
 मोहब्बत ही इस कारखानेमें है ।
 मोहब्बतसे सब कुछ जमानेमें है ।
 मोहब्बतसे है इन्तिजामे-जहाँ ।
 मोहब्बतसे गर्दिश^६ में है आसमाँ ।
 मोहब्बतसे परवाना आतिश बजाँ^७ ।
 मोहब्बतसे बुलबुल है गर्मे-फुगाँ^८ ।
 इसी आगमें शमअको है गुदाज^९ ।
 इसीके लिए गुल है सरगमें नाज ।

[कथारंभ]

अजब काम पटनेमें इससे हुआ ।
 अजब अहले आलमको जिससे हुआ ।
 कि वाँ एक जवाँ था परसराम नाम ।
 खुशअन्दामो^{१०} खुशकामतो^{११} खुशखराम^{१२} ।

-
१. अन्धकार । २. प्रकाश । ३. सृष्टि । ४. परिणाम, सृष्टिकर्ता ।
 ५. कारण । ६. चक्कर । ७. जीवित अग्नि । ८. रुदनशील । ९. जलन ।
 १०. सुन्दर शरीर । ११. सुडील । १२. सुन्दर चालवाला (या बाली) ।

जिधरको वह टुक गर्म ,रफ्तार हो ।
 कयामत उधरसे नमूदार हो ।
 वे काफ़िर भवें होवें मायल^१ जहाँ ।
 करें सिजदा उस जा पै इस्लामियाँ ।
 निगह तेरा मजरूह जिसके पड़े ।
 पलक सेल जूँ दिलमें जाकर गड़े ।
 सियह चश्म उसके दो वदमस्त थे ।
 निगाहोंसे शमशीर दरदस्त थे ।
 सरापामें उसके जहाँ देखिए ।
 वहीं रूप-मकसूदे जाँ^२ देखिए ।
 खरामां निकलता वह जिस राहसे ।
 कयामत थी वाँ नाला वो आहसे ।

[उसे एक स्त्री हृदय-दान करती है । परशुराम उसके प्रेम एवं निष्ठाकी कहानी मित्रोंसे कहता है । उसका कहना है कि वह एक क्षण मुझे छोड़ नहीं जी सकती । इसपर लोग उपहास करते हैं और उसकी प्रियतमाकी परीक्षा लेनेकी बात तय होती है । लोग जाकर कहते हैं कि परशुराम नदीमें डूब गया ।]

सुना उसकी हमसरने^३ जब यह सखुन ।
 हुआ मौजज़न बहरे-रंजो-मोहिर्न^४ ।
 निगह एक तरफ़ दरके मायूस^५ की ।
 दमे सर्द स्तींचा गया डूब जी ।

१. आकर्षित होना । २. प्राणके अभिप्रेत (प्रियतम) के समान ।
 ३. संगिनी । ४. वेदना-व्यथाका सागर तरंगित हो गया । ५. निराश ।

वही बेखुदी रुखसते-जान थी ।
 वह एक दम की गोया कि मेहमान थी ।
 गिरी होके बेजान वह दर्दमन्द ।
 हुआ शोर नौहेका घरसे बुलन्द ।
 मुई गममें इस जुमलातन नाजके ।
 गई जान हमरह सखुनसाजके ।
 वह आया जो था दिल परीशां गया ।
 कि इस वाकएसे पशेमां^१ गया ।

[वह जाकर परशुरामसे कहता है । तब परशुराम पागल हो उठता है]

गया होश सुनकर परसरामका ।
 दिवाना हुआ इश्कके कामका ।
 उठा बेखुदो बेखुरो बेहवास ।
 गिरा आके उस पैकरे मुर्दा पास ।
 लगा कहने ऐ मायए-जिन्दगी^२ ।
 मुझे मुँहसे तेरे है शर्मिन्दगी ।
 न मेरी सुनी कुछ न अपनी कही ।
 मेरे तेरे दोनोंके जीमें रही ।
 ज़मीं परसे आखिर उठाया उसे ।
 लबे-आब^३ जाकर जलाया उसे ।
 जब आग उसके पैकरें^४ पै सब छा गयी ।
 मोहब्बत अजब दाग़ा दिखला गयी ।

१. लज्जित । २. जीवन-सम्पत्ति । ३. पानीके किनारे (नदी-तट) ।
 ४. शरीरयष्टि ।

यह सरगर्म फ़रियादो ज़ारी हुआ ।
 लहू उसकी आँखोंसे जारी हुआ ।
 ज़िगर ग़ममें थक लख्ख खूँ हो गया ।
 रुका दिल कि आख़िर जुनूँ^१ हो गया ।
 गये होशो-सब्र उसके एकबारगी ।
 तबीयतमें आई एक आवारगी ।
 कभू याद कर उसके नाला रहे ।
 कभू टुक जो भूले तो हैरां रहे ।
 हुई रफ़ता रफ़ता जो वहशत^२ ज़ियाद ।
 लगा भागने सबसे वह नामुराद ।
 कुछ अपने बदो-नेककी सुध नहीं ।
 निकल जाय तनहा कहींका कहीं ।
 कभू जाके सेहरासे लावें उसे ।
 कभू रोते दरियापै पावें उसे ।
 कभू खाक मलता है मुँहपर खड़ा ।
 कहीं है खराबीमें बेसुध पड़ा ।
 सरेशाम एक रोज़ दरिया गया ।
 हुई रात बाँसे न आया गया ।
 किनारे पे रहता था एक दामवार^३ ।
 रहा रात उसके यह क़ुर्बो जवार^४ ।
 कहा उसकी औरतने उस रातको ।
 नहीं तुझसे जी चाहता बातको ।

१. उन्माद । २. जालवाला (मल्लाह) । ३. आस-पास ।

तुझे फ़िक्र कुछ अब हमारी नहीं ।
तू जाता नहीं शामसे अब कहीं ।
तेरा शबको दरियामें पड़ता था दाम ।
तो चलता था बारे मआशियतका काम ।
नहीं ताक़ते-सत्र हमको तनक ।
बहुत देर मिलता है नानो^२ नमक ।
वह बोला कि मैं भी परीशान हूँ ।
बहुत तंगदस्तीसे हैरान हूँ ।
कहूँ क्या कई रोज़से शामको ।
उठाता न हूँ इस सबब दामको ।
कि इक शोलए तुन्द पुर^३ पेचोताब ।
फलकसे^४ उतरता है नज़दीके आब ।
कोई दम तो रहता है सरगमें गश्त^५ ।
कभी सूए दरिया^६ कभी सूए दश्त^७ ।
ठहरता जो है फिर किनारेपै बाँ ।
कहे है परसराम तू है कहाँ ।
यह आतिश मेरे दिलकी क्योंकर बुझे ।
अदर्ममें भी मैंने न पाया तुझे ।
गया वह यह कहकर सुए आसमाँ ।
रहे है मुझे रात दिन खौफ़े-जाँ ।

१. जीबिका । २. रोटी । ३. तीव्र ज्वाला । ४. आकाश । ५. दौड़ता रहता है । ६. नदीकी ओर । ७. जंगलकी तरफ़ । ८. परलोक ।

सुना हाल शोलाक सय्यादसे ।
धुआँ एक उठा जाने नाशादसे ।

[इसके बाद वह घर लौटता है और हँसकर सबसे कहता है ।
इनमें वह बोस्त भी था जिसने परीक्षा लेनेकी बात कहकर प्रियतमाकी
जान ली थी]

तबस्सुमकुना^१ वाँ यह उनने कहा ।
कि कुलफ़तमें ग़मकी बहुत मैं रहा ।
चलो सैरे-ग़स्तीको हंगाम शब ।
लबे-आब ख़ाली करें दिलको सब ।
हुआ सो हुआ यों ही तक़दीर थी ।
जहाँसोज़ उल्फ़तकी तासीर थी ।
हुए आक़बतं सूए-दरिया रवाँ ।
न पैदा किसूपर यह राज़े-निहाँ^२ ।
हुए नावपर शाम गह जब सवार ।
कहा उनने याँ एक है दामदार ।
उसे साथ लो तो बड़ी बात है ।
कि दरियामें फिरना है और रात है ।

[लोगोंने उसे साथ ले लिया । कुछ देर परसराम ख़ामोश रहा ।
फिर उस मल्लाहसे गतरात्रिकी बातका इशारा करके पूछा]

कहाँ शोलए-सरकश आता है याँ ।
किधर पेचोताब आके खाता है याँ ।

ठहरता है किस जा वह आतिशफगन ।
 तरफ़ कौनसे हो है गर्मे-सखुन ।
 यह सय्यादसे था ही महवे सुराग^१ ।
 जिगर आतिशे-शौक रखती थी दाग^२ ।
 कि होकर फ़रोग^३ एक सुए आसमाँ ।
 तड़पने लगा जैसे आतिश बजाँ ।
 कोई दममें दरियापै आया फरूद^४ ।
 हुआ नेज़ाबाला सभीका नमूद ।
 लबे-आब दो शोलए जाँ गुदाज ।
 तड़पकर बहुत बाजबाने दराज^५ ।
 पुकारा कहाँ है परसराम तू ।
 मोहब्बतका टुक देख अंजाम तू ।
 कि मैं जुमलातन^६ आतिशे-तेज हूँ ।
 दिले गर्मसे शोला अंगेज हूँ ।
 भड़कती है जब आग दिलकी मेरे ।
 लबे आब उतरूँ हूँ गममें तेरे ।
 सो यह आब रखता है रोगन^७का काम ।
 किया इश्कने आह दुश्मनका काम ।
 यह बेताब सुनकर हुआ बेकरार ।
 सकीने^८से उतरा बसद इजतरार^९ ।

१. पता लगानेमें लीन । २. उतरकर । ३. तीव्र बाणी । ४. सशरीर ।
 ५. भी । ६. त्रीका । ७. बेचैन ।

हुआ हमदम उस आतिश अंगेजसे ।
 कहा उस बलाए-दिल आवेजसे ।
 कि मैं हूँ परसराम खानाखराब ।
 मेरा दिल भी उस आगसे है कबाब ।
 मेरे भी जिगरमें यही सोज है ।
 यही मुझको जलना शबो रोज है ।
 सखुन मुस्तसर कुछ वह शोला चला ।
 कुछ एक अपनी जागहसे यह दिलजला ।
 बहम गर्मजोशी^१से एकजा हुए ।
 कि गुजरी थी मुहत भी तनहा हुए ।
 वह शोला रहा एकजा मुश्तइल ।
 कहे तो तसल्ली हुए जानो दिल ।
 यकायक भड़ककर वह जलने लगा ।
 फिर ईधर उधर फिरने चलने लगा ।
 किया पास पानीके आकर सऊद ।
 रही रोशनी-सी कोई दम नमूद ।
 फिर आगे किसीपै न पैदा हुआ* ।
 न जाना कि वह शोला फिर क्या हुआ ।
 खबरदार हो अहले-किश्ती तमाम ।
 लगे कहने बाहम नहीं परसराम ।
 उठे ढूँढ़ने होके सब नासबूर ।
 किनारेपै दरियाके नजदीको दूर ।

१. प्राणमोहक । २. तीव्र भावना । * किसीको यह न ज्ञात हुआ ।

वह सय्याद बेल कि दूँ मैं निशों ।
 गया था सुए-शोला यह नौजवाँ ।
 यह और आग दोनों हुए हम सखुन ।
 वह शोला हुआ उस पे आतिश फ़गन ।
 यह जोशिश तो य़ाँसे थी मदे नज़र ।
 फिर आगे नहीं उसकी मुझको ख़बर ।
 यकीनी हुआ यह कि वह तेज़ आग ।
 उसी नीम-कुश्तासे रखती थी लाग ।
 लिपट उसको शोला ही वह ले गया ।
 अजब तौरका दाग़ यह दे गया ।



उपसंहार-भाग

उर्दू पिंगलकी कुछ बातें



१. बहर और रुकुन—उर्दू और फ़ारसीकी कवितामें हिन्दी और संस्कृत की भाँति भिन्न-भिन्न छन्दोंका प्रयोग होता है। उन्हें बहर कहते हैं। 'गण'की भाँति बहरमें भी वजन होता है। बहरें अरकानसे बनती हैं। अरकान आठ हैं। दो पंचाक्षरीय; छः सप्ताक्षरीय। आठ अरकानसे १९ बहरें बनती हैं किन्तु प्रसिद्ध १५ हैं। इनमें सात एक ही रुकुनकी पुनरुक्ति (तकरार) से बनती हैं और आठ दो रुकुनोंकी पुनरुक्ति (तकरार) से। एक ही रुकुनके तकरारसे बननेवाली हैं :—१. हज्ज, २. रमल, ३. रज्ज, ४. कामिल, ५. बाफ़र, ६. मिनक्रारिब, ७. मुतदारिक। दो दो या कई रुकुनोंके तकरारसे बननेवाली आठ बहरें हैं—१. मुज्जारअ, २. सरीअ, ३. मुनसर्ज, ४. मुक्तज़िब, ५. ख़फ़ीफ़, ६. मुहब्बतस, ७. तवील, ८. वसीत। इनके बननेका प्रकार निम्नलिखित है :—

१. हज्ज	: मफाईलन २ बार।
२. रमल	: फाइलातन ४ बार।
३. रज्ज	: मुस्तफ़ेलन ४ बार।
४. कामिल	: मफाईलन ४ बार।
५. बाफ़र	: मफाअलतन ४ बार।
६. मिनक्रारिब (या मुतक्रारिब)	: फऊलन ४ बार।
७. मुतदारिक	: फाइलन ४ बार।
८. मुज्जारअ	: मफाईलन फाइलातन।
९. सरीअ	: मुस्तफ़ेलन मफ़ऊहत २ बार।

१०. मुनसर्ज	: मुस्तफ़ेलन मफ़ऊहत २ बार ।
११. मुक्तज़िब	: मफ़ऊहत मुस्तफ़ेलन २ बार ।
१२. खफ़ीफ़	: फाइलातन मुस्तफ़ेलन २ बार ।
१३. मुहब्बतस	: मुस्तफ़ेलन फाइलातन २ बार ।
१४. तबील	: फ़ऊलन मफ़ाबलीन २ बार ।
१५. बसीत	: मुस्तफ़ेलन फाइलन ।

अधिकांश बहरोंमें छः या आठ अरकान होते हैं ।

१. मिसरा : एक सुसंस्कृत एवं सुसंगठित पद; चरण ।
२. शेर : दो हमबज़न (सममात्रिक) मिसरोंका संयोग ।
३. बेत : शेरका एक प्रकार ।
४. क़ाफ़िया : बेत या शेरका आखिरी शब्द जो बदला करता है ।
५. रबीक़ : तुक ।
६. रुबाई (चतुष्पदी) : चार मिसरों या दो बेतकी होती है । इसके पहिले, दूसरे और चौथे मिसरे ज़रूर हम-क़ाफ़िया होते हैं । यदि चारों हों तो और अच्छा है । इसका एक विशेष बज़न होता है । रुबाईमें २४ बज़न होते हैं । उदाहरणः—

गर लाख बरस जिये तो फिर मरना है,
पैमानए-उम्र एक दिन भरना है ।
हाँ तो शये आखिरत मुहय्या करले,
शाफ़िल तुझे दुनियासे सफ़र करना है ।

फ़ारसीमें उमर खय्याम अपनी रुबाइयोंके लिए मशहूर हैं । आजकल हिन्दीके तरुण कवि भी रुबाई लिखने लगे हैं ।

७. मतलब : ग़ज़लका प्रथम शेर जिसके दोनों मिसरे हम-क़ाफ़िया होते हैं ।

८. गजल : शाब्दिक अर्थ है 'माशूकके साथ खेलना', 'औरतोंसे बातचीत' (देखिए फरहंग आसफ़िया) । आकारके विचारसे चन्द बेतोंका योग है जो वज्रन और क्राफ़ियेमें एकसां हों । प्रथम शेरके दोनों मिसरे (चरण) हम-क्राफ़िया (समतुकान्त) होते हैं, और इसीको मतलब—मतला—कहते हैं, और शेषके अन्तिम । एक गजलमें चन्द मतले हों तो अच्छा है । प्राचीन आचार्योंके मतसे गजलके बेतों—शेरों—की संख्या सातसे बारह तक होनी चाहिए किन्तु आधुनिक मर्मज्ञोंने उसे बढ़ाकर बीस-पच्चीस तक कर दिया है । अर्थके विचारसे प्रत्येक शेर मुक्तककी भाँति भिन्न-भिन्न आशयका होता है किन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सम्पूर्ण गजल एक ही मज़मूनपर कही गयी हो; प्राचीन आचार्योंने इसके लिए कोई बन्धन नहीं रखा है । जैसा कि इसके शब्दार्थसे विदित होता है, गजल निकाली तो इसलिए गयी थी कि इसमें केवल शृंगार विषयका वर्णन रहे किन्तु पीछे लोग इसमें गूढ़ दार्शनिक विचारों, उपदेश, विनोद एवं अन्याय विषयोंका भी वर्णन करने लगे ।
९. मक़तब : गजलका अन्तिम शेर 'मक़तब' (मक़ता) कहा जाता है । एक रिवाज-सा हो गया है कि इसमें शायर अपना 'तख़ल्लुस' (उपनाम) देता है किन्तु फ़ारस—ईरान—के प्राचीन आचार्यों और अरबके कवियोंका मत ऐसा नहीं है ।
१०. क़सीदा : आकार प्रकारमें गजलकी भाँति होता है किन्तु इसमें शेरोंकी संख्या नियत नहीं है । प्रायः सौ डेढ़ सौ शेरों तक होता है । अर्थके विचारसे क़सीदेमें एक ही विषय होता है । निन्दा, प्रशंसा या उपदेश (विशेषतः प्रशंसा) इसके मुख्य अंग हैं । उर्दूमें 'सौदा' के क़सीदे मशहूर हैं ।
११. क़िता : सूरतमें क़सीदेकी तरह होता है । अन्तर इतना ही है कि इसमें मतला नहीं होता ।

१२. मस्नबी : अर्थ है दो-दो । एक छन्द है । दो-दो चरण होते हैं, दोनों मिसरे हम-क्राफ़िया होते हैं । सात वज़नोंपर मस्नबी कही जा सकती है । विषय एक ही हो तो अच्छा है । यह हिन्दीकी चौपाईसे मिलता-जुलता है और प्रबन्ध-काव्य या कथा-काव्यके लिए उपयुक्त है । फ़ारसीमें इसके बड़े-बड़े आचार्य हुए हैं । जैसे—फ़िरदौसी, निज़ामी, मौलाना रूम, मौ० जामी, खुसरो । उर्दूमें मीर हसन और दयाशंकर 'नसीम' की मसनवियाँ मशहूर हैं ।
१३. मुसल्लस : त्रिपदी जिसका हरबन्द तीसरे मिसरेका हो और तीसरा प्रत्येक स्थानपर समान क्राफ़िया रखता हो ।
१४. मुल्लम्मस : पंचपदी । मुसल्लसके ही ढंगपर पाँच मिसरोंका होता है । पाँचवाँ हर जगह यकसाँ क्राफ़िया रखता है ।
१५. मुसद्दस : षट्पदी । चार मिसरे हमक्राफ़िया और एक मतला । 'हाली' के मुसद्दस मशहूर हैं ।
१६. मसिया : मृत्यु या शोक-काव्य । उर्दूमें नासिखके मसिये मशहूर हैं ।
१७. तारीख़ कहना : किसी प्रकारका पद जिसके शब्दोंका सांख्यिक मूल्य जोड़कर मृत्यु या किसी घटनाका समय निकालते हैं ।

उर्दू काव्यमें आनेवाले व्यक्ति



१. 'लैला मजनूँ' :

अरबी, फ़ारसी एवं उर्दूके काव्यमें इन दोनों प्रेमियोंका जिक्र बार-बार आता है। अरबके दो प्रेमी। मजनूँका वास्तविक नाम क़ैस था। मजनूँका अर्थ है जो जुनून (उन्माद) में है। चूँकि क़ैस लैलाके प्रेममें पागल था इसलिए इसको यह उपाधि दी गयी जो उसके नामसे भी ज्यादा प्रसिद्ध हो गयी है। उत्कट प्रेमके प्रतीक।

२. शीरीं फ़रहाद :

ईरानकी प्रसिद्ध प्रेमी आत्माएँ। फ़रहाद (कोहकन) एक ग़रीब पत्थर तोड़नेवाला था पर शीरींके प्रेममें निमग्न। शीरीं भी उसे चाहती थी। पर उसकी शादी ईरानके सम्राट् खुसरो परवेज़से हो गयी। तब भी शीरींको फ़रहादके प्रेमका विश्वास था। परवेज़ने फ़रहादसे कहलाया— तुम अमुक पहाड़ तोड़कर एक नहर निकालो तो तुम्हारी इच्छा पूर्ण की जा सकती है। उसने स्वीकार किया। बरसों पहाड़ तोड़नेमें लगा रहा और नहर जब लगभग पूरी हो चुकी थी, परवेज़ने षड़यन्त्र किया। एक नकली जनाज़ा निकाला जो उधरसे ही गुज़ारा जहाँ फ़रहाद अपने काममें व्यस्त था। उससे कहा गया, शीरीं तो मर गयी, अब नहर किसके लिए खोद रहे हो। सुनते ही उसने उसी कुदालको अपने कलेजेमें मार लिया और मर गया। शीरींने यह सुना तो पागल हो गयी। दौड़ी उसकी लाश पर गयी और देर तक रोती रही। फिर ज़हर खाकर उसी लाशपर गिर पड़ी। प्रेमके लिए उत्सर्गके प्रतीक।

३. यूसुफ :

अरबी, फारसी एवं उर्दू काव्यमें सौन्दर्यके आदर्श । हज़रत याकूबके पुत्र थे जिन्हें उनके चचेरे भाइयोंने, शिकार खेलते समय, बहकाकर एक कुएँमें झोंक दिया । फिर बड़ी मुसीबतोंके बाद कुएँसे सौदागरोंके एक गिरोह द्वारा निकाले जाकर, गुलामोंकी भाँति, मिस्रके बाज़ारमें बेचे गये । सौन्दर्यमें अद्वितीय थे । अज़ीज़े मिस्रकी पत्नी जुलेखा इनपर मोहित हुई थी और उसीके अनुरोधसे वहाँके बादशाह गाज़नने इन्हें खरीदा था । सौन्दर्य और मुसीबतोंके सम्बन्धमें काव्यमें इनका वर्णन होता है ।

४. फ़रज़न :

मिश्रके एक अन्यायी बादशाहकी उपाधि जिसने हज़रत मूसाके ज़माने में खुदाईका दावा किया था । अभिमानी एवं अत्याचारीके अर्थमें भी इसका प्रयोग होता है ।

५. जुलेखा :

यूसुफ़पर आसक्त महिला । ऐसी सुन्दरी जिसे देख मनमें रागका संचार हो ।

६. लिच्छ :

प्रसिद्ध पैग़म्बर । 'लोमस' की भाँति अनन्त आयुवाले । भूले-भटकों को राह दिखाया करते हैं । मशहूर है कि अमृतपान किया है ।



काव्यके महत्त्वपूर्ण शब्द-प्रतीक



साँक्री : शराब पिलानेवाला, माशूक, ईश्वर ।

मय : शराब, प्रेम, सौन्दर्य । माशूकका आकर्षण ।

मयकदा : मदिरालय, प्रेमागार, प्रियतम ।

शीशा : काँचकी सुराही; मद्यभाण्ड ।

पैमाना : प्याला, मद्यपात्र । माशूककी आँखोंसे उपमा दी जाती है । जाम भी कहते हैं ।

सुबूही : प्रातःकालिक मद्यपेय ।

संबुल : एक प्रकारकी सुगंधपूर्ण घास जिसकी माशूकके बालोंसे उपमा देते हैं ।

सरो : एक सुडौल वृक्ष जिसकी प्रेमिकाकी शरीर यष्टिसे उपमा दी जाती है ।

आसमाँ : सम्पूर्ण कष्टोंका कारण ।

अर्श : स्वर्गकी आठवीं या नवीं श्रेणी जहाँ, इस्लामी पौराणिकताके अनुसार, खुदा रहता है । आकाश ।

तूर : अरबके उत्तर-पश्चिमकी एक पहाड़ी जहाँ हज़रत मूसाको ईश्वरीय ज्योतिके दर्शन हुए थे और उनकी आँखें झपक गयी थीं । माशूककी सौन्दर्य-ज्योतिके सन्दर्भमें भी इसका प्रयोग होता है ।

लाल : रत्न विशेष जिससे ओठोंकी उपमा दी जाती है ।

गुल : पुष्प; माशूक, प्रेमिका ।

बुलबुल : प्रेमी, आहोज़ारी करनेवाला, पीड़ित ।

क्रफ़स : पिंजड़ा, जहाँ बुलबुलको गुलसे अलग करके बन्द किया जाता है । घर और माशूकसे जुदा करनेवाली चीज़ ।

आशिया : बोंसला । (जिससे प्रेमी या बुलबुलको प्रायः निर्वासित कर दिया जाता है ।)

सम्याद : माशूक, या प्रेमी (बुलबुल) से माशूक (गुल) को जुदा करनेवाला; जालिम ।

ल्लिजाँ : व्यथा और वियोगका प्रतीक ।

रक्तीब : प्रतिद्वन्दी (प्रेम का) ।

बस्स : मिलन ।

हिष्म : वियोग ।

सबा : पूर्वी हवा । प्रभाती ।

नसीम : शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर ।

नरगिस : पुष्प विशेष जिससे (प्रियतमाकी) आँखोंकी उपमा दी जाती है ।

गरेबाँ : गला, पागलपनमें प्रेमी गरेबाँ फाड़ता है । और जंगल तथा मरु-भूमि (दस्तो सहरा) की ओर, एकान्तकी ओर भागता है ।



मीर-काव्यके कुछ विशिष्ट शब्द



आजकल बताना : झूठे वादे करना, हीला-हवाला करना, चकमा देना ।

आबमीगरी : मनुष्य बनाना, तमीज सिखाना ।

आक्रताबा : एक विशेष प्रकारका लोटा, जिससे मुँह-हाथ धोते हैं ।

आक्रताबी : हवेलियोंमें धूपमें बैठनेकी छायादार जगह ।

आला : हरा, ताजा ।

इजारा : ठीका, केराया ।

इस्तहाला : रूपान्तर ।

इस्तर्शाशिकनी : श्रम उठाना ।

इस्लामी : मुसलमान ।

इतमाज : आँख छिपाना ।

इकराह : जबरदस्ती ।

इन्तिहा लेना : थाह लेना ।

उनने : उसने ।

उलझाव : झगड़ा-बखेड़ा ।

बाब : सम्बन्धमें (दरवाजा) ।

बाब होना : किसी बातके योग्य होना ।

बाब बहना : हवा चलना ।

बफरना : झल्लाना ।

बिचलना : डगमगाना, बिगड़ना ।

बर उफ़ताब होना : दूर होना, निमग्न होना ।

बजनगाह : क़त्लगाह ।

बजा : एक जलपक्षी ।

भेचक : भौंचक, हैरान ।

बेतिही : बातकी तहको न पहुँचना ।

पानी दूट जाना : प्राणी कम होना ।

पानी करना : नर्म करना ।

पाईज : पतझड़, खिर्जा ।

परतबा : परतौ, परछाई ।

तपक : फोड़ेके दर्दकी टीस ।

तब : तब ।

तरदामन : गुनहगार, व्यसनी ।

जागह : जगह ।

छपाका : फुर्ती, तेजी ।

भूमका : चमक-दमक, तीव्रज्योति, तीव्र वर्षा ।

चारो बांग : चारों ओर ।

चाब : अरमान, लालसा ।

चर्खजन : चकित ।

चश्मकजनी : आँखका इशारा करना, सैन मारना ।

*

चौरंग होना : तलवारके विशेष प्रकारके वारसे मरना ।

हाल : बेहोशी ।

खाफदान : संसार ।

खराबा : बीरान, उजड़ा स्थान ।

खराज : फोड़ा, जल्लम ।

खस्मी : दुश्मनी ।

खोर : सूर्य

खुश जाहिर : दुनियादार आदमी ।

दरबाशेकी मिट्टी ले जाना : बार-बार फेरे करना ।

दस्तो पा गुम करना : धबरा जाना ।

दिलजुबा : मरे हुए दिलवाला ।

दिलशब : अर्धरात्रि ।

दिलगुज़ीब : दिलपसन्द ।

डोर होना : मोहित होना ।

रातां माता : रातका जागा हुआ ।

रेगेरबा : स्थान विशेष जहाँ रेत सदा चलती रहती है । वहाँसे चश्मा निकलता है जिसमें पानी और पारा मिला होता है ।

जपान : चील ।

जुल्फा, जुल्फेन : दरवाजेका कुण्डा जिसमें कुण्डी अटकाते हैं ।

जंजीर करना : जंजीरमें बाँधना ।

सब्जक : नीलकण्ठ ।

सब्जा : हरियल, हारेल ।

सुकरोही : बेतकल्लुफी, प्रफुल्लता ।

सरसे गुज़र जाय : सरकी परवाह न करे ।

सरनशी : क्राफ़िलेमें सबके आगे चलनेवाला (या वाली)

सफ़री : सफ़र करनेवाला (अब मुसाफ़िर बोलते हैं ।)

सुनगुन : उड़ती खबर ।

शीशए जाँ : नाज़ुक मिज़ाज ।

सफ़ा : फ़ायदा ।

सोब : कठिन ।

तफ़्र : तुलना ।

इर्ज : इफ़्त, आबरू ।

ऊर : नंगा ।

गुंछाखातिर : दुःखी हृदय ।

क्राक़ : पतला दुबला सूखा आदमी ।

कद : कब ।

लागा : लगा ।

लाले लामोश : नीरव अधर ।

मबीयत : रात ठहरनेकी जगह ।

मिरजाई : अहंकार ।

नाजी : नजात पानेवाला ।

नोक करना : बढ़-बढ़कर बातें करना ।

वाशिब : खिलना ।

मीरके काव्यमें निम्नलिखित हिन्दी तथा ठेठ शब्द प्रायः मिलते हैं:—
अफरना, उतारा, अटना, उगास, उलझाव, उलीचना, पाख (पक्ष),
अंगदान, अनमना, अनूठा, ओर, बास, विसाहना, विस्तार, विश्राम,
बिलोना, भस्म, भस्मन्त, पैठ, पवन, तनिक, ठौर, जतन, जोग, चाव,
रिक्तवार, रोम-रोम, सालना, साँझ, सुभाव, सराहना, सखी, सन्मुख,
सूर (शूरके अर्थमें), काका, कपी (बन्दरके अर्थमें), गाँती, गठबंधन,
गढ़ी, लोथ, निपट, निबल (निर्बल), निदान, निरास, नगर इत्यादि ।

मीरने कभी, सभी की जगह कभू, समू तथा चलता है की जगह चले हैं
इत्यादि रूपोंका प्रयोग किया है जो उस समय प्रचलित थे । आज-कलके
अनेक पुल्लिङ्ग शब्दोंको स्त्रीलिङ्ग तथा स्त्रीलिङ्गकी पुल्लिङ्गरूपमें लिखा है
पर ऐसा तत्कालीन अन्य कवियोंमें भी मिलता है ।



